उद्यान

लेखक

शंकरराव जोशी
(एग्रिकलचरल ऑफ़िसर)

मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार
३६, लाटूश रोड
लखनऊ

तृतीयावृत्ति

सादी २।)] सं० २००५ वि० [सजिल्द ३)

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

अन्य प्राप्ति-स्थान—

१. दिल्ली-ग्रंथागार, चर्खेवालाँ, दिल्ली

२. प्रयाग-ग्रंथागार, ४०, कास्थवेट रोड, प्रयाग

३. राष्ट्रीय प्रकाशन-मंडल, मछुआ-टोली, पटना

नोट—हमारी सब पुस्तकें इनके अलावा हिंदुस्थान-भर के सब प्रधान बुकसेलरों के यहाँ मिलती हैं। जिन बुकसेलरों के यहाँ न मिलें, उनका नाम-पता हमें लिखें।

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

निवेदन

'उद्यान-विद्या' एक गहन विषय है। इसमें पारंगत होने के लिये बरसों लगातार परिश्रम करने की आवश्यकता होती है। मैं जानता हूँ, इस विषय पर पुस्तक लिखने का अधिकार इन्हीं लोगों को है, जो उद्यान-विद्या-विशारद हैं, और जिन्हें व्यावहारिक उद्यान-विद्या का अच्छा अनुभव है। इस विषय पर पुस्तक लिखने के लिये मेरा क़लम उठाना दुस्साहस-मात्र है। परंतु, फिर भी, अपनी मातृभाषा की सेवा करने के सदुद्देश्य से ही मैंने यह धृष्टता की है। कह नहीं सकता, इस प्रयत्न में मुझे कहाँ तक सफलता मिली है।

नागपुर के कृषि-विद्यालय में मैंने उद्यान-विद्या का अध्ययन अवश्य किया था, किंतु मुझे व्यावहारिक अनुभव बहुत ही कम है, और इसीलिये मैं हाथ जोड़कर पाठकों से त्रुटियों के लिये क्षमा-प्रार्थी हूँ। साथ ही आशा करता हूँ कि गंगा-पुस्तकमाला के नयनाभिराम और सुरभित पुष्पों का मधुर मधु पान करनेवाले सज्जन-भ्रमर इसे भी स्वीकार कर लेखक को उत्साहित करने का श्रेय लेंगे।

इस पुस्तक के संबंध में मुझे कुछ नहीं कहना। कारण, इसकी सब-की-सब पूँजी उधार ली हुई है। कई अँगरेज़ी, मराठी और गुजराती-पुस्तकों, सामयिक पत्रों (मासिकों) तथा दो-एक हिंदी एवं एक उर्दू-पुस्तक के आधार पर इसकी रचना की गई है।

अतएव मैं उन सब पुस्तकों तथा पत्रों के लेखकों और प्रकाशकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

प्रारंभ में यह पुस्तक लेख-माला के रूप में लिखी गई थी। इसका कुछ अंश 'माधुरी' में प्रकाशित भी हो चुका है। यह 'माधुरी' के तत्कालीन संपादक महोदयों की ही कृपा का सुफल है कि आज मैं यह पुस्तक पाठकों की सेवा में भेंट कर सका हूँ। कहना चाहिए कि इस पुस्तक के सर्वांग-सुंदर प्रकाशित होने का सारा श्रेय विशेष रूप से पं० दुलारेलालजी भार्गव ही को है।

अंत में मैं अपने उन सब मित्रों और सहायकों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस पुस्तक के लिखने में मेरी सहायता की है। यह उन्हीं सज्जनों की सहायता का फल है कि मैं 'उद्यान-विद्या'-जैसे गहन विषय पर पुस्तक लिखने में समर्थ हो सका।

विनीत—
शंकरराव जोशी

विषय-सूची

उद्यान

भारतवर्ष में ही क्या, संसार के सभी देशों में बड़े-बड़े बाग़ पाए जाते हैं। हिंदुओं के पुराण-ग्रंथों में कई स्थानों पर पुष्प-वाटिकाओं का वर्णन आया है। प्रकृति-देवी ने भारतवर्ष को सभी पदार्थों का आगार बनाया है। भारतवर्ष में सब प्रकार की आब-हवा पाई जाती है, और सब देशों के वृक्ष-लतादि हिंदुस्थान के एक-न-एक भाग में सफलता-पूर्वक बोए जा सकते हैं।

ऊपर लिख आए हैं कि भारतवर्ष में बड़े-बड़े उद्यान पाए जाते हैं। हमने कई बाग़ देखे भी हैं; किंतु उनमें से अधिकांश को बड़ी शोचनीय दशा में पाया है। अस्वच्छता के कारण सुंदर-से-सुंदर बाग़ भी आँखों में काँटे की तरह चुभने लगते हैं। इसका एक-मात्र कारण मालिक का नौकरों पर निर्भर रहना ही है। कई धनी और मध्यम श्रेणी के लोग अपने मकानों के पास बाग़ तो लगाते हैं, परंतु वे उद्यान-संबंधी ज्ञान से बिल-कुल कोरे होते हैं; और यही कारण है कि उन्हें सब काम नौकरों पर ही छोड़ देने पड़ते हैं। फल यह होता है कि जो बाग़ शोभा और मनोरंजन के लिये लगाए जाते हैं, वे ही आँखों में काँटे की तरह खटकने लगते हैं। अतएव प्रत्येक व्यक्ति के

लिये उद्यान-संबंधी आवश्यक ज्ञान से परिचित होना अनिवार्य-सा है।

बाग़ कई प्रकार के होते हैं। यथा—१. फल के बाग़, २. पुष्प-वाटिका, ३. मिश्र बाग़ (फल और फूल के बाग़) और साग-भाजी के बाग़। इस लेख में हम मिश्र बाग़ों के स्थूल सिद्धांतों पर ही, संक्षेप में, विचार करेंगे।

बाग़ लगानेवाले व्यक्ति को सबसे पहले नीचे लिखे हुए विषयों पर विचार कर लेना चाहिए—

१—आब-हवा, २—ज़मीन।

आब-हवा

किसी प्रदेश की आब-हवा ताप-क्रम, वातावरण में तरी के परिमाण और वर्षा आदि पर निर्भर होती है। भारतवर्ष के अधिकांश प्रांतों का जल-वायु जुदा-जुदा है। और, यही कारण है कि सारे भारतवर्ष के लिये एक-से नियम नहीं बनाए जा सकते। इसके अलावा हरएक प्रांत की आब-हवा के अनुसार उद्यान-निर्माण पर विचार करना भी संभव नहीं। यही कारण है कि यहाँ मुख्य-मुख्य विषयों पर ही विचार किया गया है। हरएक आदमी को चाहिए कि वह अपने प्रांत की आब-हवा और निज के अनुभव पर पूर्ण विचार कर अपनी बुद्धि का उपयोग करे, और तदनुसार दी हुई हिदायतों में योग्य परिवर्तन कर ले।

भारतवर्ष में प्रधान तीन ऋतुएँ होती हैं—वर्षा, शीत और ग्रीष्म।

किसी प्रांत के ताप-क्रम से ही इस बात का निश्चय किया जा सकता है कि वहाँ कौन-कौन पौदे बोए जाने चाहिए। पृथ्वी के कई देश ऐसे हैं, जिनमें समान वर्षा होती है। किंतु ताप-क्रम में फ़र्क़ रहता है। जिन देशों या प्रांतों में एक-सा पानी बरसता है, उनमें स्थूल मान से एक ही वर्ग की वनस्पति पैदा होती है। परंतु उन देशों में पैदा होनेवाली जातियाँ जुदी-जुदी होंगी। भारतवर्ष में पैदा होनेवाले अधिकांश पौदे पाले से मर जाते हैं। अतएव अन्य सब बातों में समानता होने पर भी एक पाले के कारण ही वे पौदे अन्य देशों—उन देशों में, जहाँ उतना ही पानी बरसता है, जितना कि भारतवर्ष—उन पौदों की जन्म-भूमि—में अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकेंगे। जिन प्रांतों में कम पानी बरसता है, उनमें कृत्रिम साधनों से, सिंचाई द्वारा, वृक्ष जीवित रक्खे जा सकते हैं। किंतु ताप-क्रम की न्यूनाधिकता के कारण पौदे या तो फूलें-फलेंगे ही नहीं, और यदि कदाचित् फूलें-फलें भी, तो बहुत कम। कुछ पौदे तो गरमी के कारण शीघ्र ही मर जायँगे। इँगलैंड आदि पाश्चात्य देशों में काँच के मकानों में भिन्न-भिन्न देशों के पौदे लगाए जाते हैं, और कृत्रिम आब-हवा आदि के कारण पौदे जीवित भी रहते हैं। किंतु यह काम ज्यादा ख़र्च और परिश्रम का है।

गरमी की ऋतु और वातावरण में तरी की मात्रा बढ़ जाने पर पौदे बढ़ने लगते हैं। यही अवस्था पौदों की बाढ़ के लिये अच्छी है। वर्षा-काल में ज़मीन और हवा गरम रहती है, और वातावरण में तरी भी अधिक परिमाण में होती है। यही कारण है कि बरसात में पौदों की ख़ूब बाढ़ होती है। तरी से ख़ाली गरमी की ऋतु में—उस ऋतु में, जिसमें वातावरण में तरी कम होती है—पौदे फूलते-फलते हैं, और तदनुसार ही वृक्षों की व्यवस्था की जाती है; अर्थात् वर्षा-ऋतु में बीज, क़लम, चश्मा लगाना आदि साधनों द्वारा पौदे तैयार किए जाते हैं। और, इसी ऋतु में अधिकांश जाति के पौदे अपनी जन्म-भूमि या गमलों से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं। ठंडी आब-हवावाले देशों के पौदे शीत-काल में ही ज्यादा बढ़ते हैं, और इसीलिये वे शीत-काल में बोए जाते हैं।

चतुर माली आब-हवा की आवश्यकता के अनुसार ही अपना काम करता है, और तभी उसे सफलता भी होती है। वह शीत-काल में पौदों पर छाया कर देता है। कारण, सरदी-गरमी में शीघ्रता-पूर्वक परिवर्तन होने से पौदे को नुक़सान पहुँचता है। ऋतु के हेर-फेर के कारण थोड़े समय के लिये पौदों की बाढ़ रुक-सी जाती है। वह ऐसे समय में कम पानी देता है। पौदा ज्यादा पानी का उपयोग नहीं कर सकता। इसलिये इस समय उसे उतना ही पानी दिया जाना चाहिए, जितने की उसे ज़रूरत हो। ज़रूरत से ज्यादा पानी देने से पौदे को नुक़सान

पहुँचता है। होशियार माली ये सब बातें अच्छी तरह जानता है, और उसी के अनुसार अपना काम भी करता है। गरमी की ऋतु में ज़मीन जल्दी सूखकर कड़ी हो जाती है। इसलिये वह पौदे को खूब पानी देता है, और थाले की मिट्टी को गोड़-कर ढीली बनाए रखता है। फलों के पौदे इस ऋतु में फलों से लदे रहते हैं, अतएव उनकी हिफ़ाज़त ज़रूरी है।

पानी बरसने के बाद हवा में गीलापन आ जाता है। वर्षा-ऋतु में वृक्षों के पत्तों से बहुत कम पानी भाप बनकर उड़ता है, और यही कारण है कि संकरीकरण द्वारा पौदे तैयार करने के लिये यही एक उपयुक्त ऋतु है। देशी पौदों को अपनी जन्म-भूमि से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाने के लिये यही ऋतु अच्छी है।

इस ऋतु में पानी की बौछार और कड़ी धूप से नाज़ुक पौदों को बहुत नुक़सान पहुँचता है। खेतों या थालों में पानी भरा रहने से पौदे ख़राब हो जाते हैं। कभी-कभी मर भी जाते हैं। चतुर माली इन बातों से अच्छी तरह परिचित रहता है, और वृक्षों की रक्षा करने के लिये हरएक प्रकार के यत्न करने को सदा प्रस्तुत रहता है।

वह गमले में लगाए हुए पौदों को छाया में रख देता है। इस ऋतु में गमलों को बहुत कम पानी दिया जाता है। कारण, इस ऋतु में उनकी बाढ़ रुक जाती है, जिससे वे ज्यादा पानी का उपयोग नहीं कर सकते।

ऑक्टोबर के बाद, अर्थात् शीत-काल का प्रारंभ होते ही, माली का सारा दिन काम करने में बीतता है। इसी ऋतु में उसे सबसे ज्यादा काम रहता है। बाग़बानी का अधिकांश काम शीत-काल में ही करना होता है।

ज़मीन

पौदे ज़मीन से अपनी ख़ूराक लेते हैं। पौदों की जड़ें ठोस नहीं, महीन नली के समान पोली होती हैं। इन्हीं के द्वारा पौदा अपनी ख़ूराक सोखता है।

पौदे को अपने जीवन के लिये ये तत्त्व आवश्यक होते हैं— नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, पोटाश, फ़ासफ़रस, सलफ़र, कॅलशियम (चूना), नमक, लोहा, क्लोराइड, अलूमिनियम, सिलिकन, मेगेनीज़ और मैग्नेशियम। इनमें से हाइड्रोजन और ऑक्सीजन तो पौदे को पानी से मिल जाते हैं। कारबन वातावरण से प्राप्त होता है। अन्य शेष सब तत्त्व पौदे को ज़मीन की मिट्टी से मिलते हैं। ये तत्त्व ज़मीन के पानी में घुले हुए क्षार के रूप में ही सोखे जाते हैं।

वृक्ष को हाइड्रोजन से लगाकर फ़ासफ़रस तक के तत्त्व बहुत ज्यादा दरकार होते हैं, और वे सब ज़मीन से ही सोखे जाते हैं। अतएव यह ज़रूरी है कि सोखे हुए तत्त्वों को किसी-न-किसी रूप में ज़मीन को लौटा देना चाहिए। अर्थात् धरती के गर्भ में उनकी पूर्ति करते रहना चाहिए। यदि ऐसा न किया

जायगा, तो उन तत्त्वों का ख़ज़ाना घट जाने पर पौदा निर्बल पड़ और घटिया कम उपज देने लगेगा।

पौदा ज़मीन की मिट्टी में ही बढ़ता है। उसकी जड़ें मिट्टी में ही फैलकर ख़ूराक चूसती हैं। इसलिये यह बहुत ज़रूरी है कि बाग़ों की मिट्टी ऐसी हो, जिसमें पौदे अच्छी तरह बढ़ सकें, और उनकी जड़ें अधिक गहराई तक प्रवेश कर सकें; अर्थात् पौदा ज़मीन में मज़बूत जम जाय।

बहुत कम फलों और फूलों के वृक्ष ऐसे हैं, जो चिकनी मटियार ज़मीन में ख़ूब फूलते-फलते हों। बाग़ की ज़मीन ऐसी होनी चाहिए, जिसमें बरसात का पानी भरा न रहे। वह कड़ी न हो, और हर तरह से पौदे बोने या लगाने के लायक़ हो।

बाग़ों के लिये 'दुमट' या 'मटियार दुमट' ज़मीन अच्छी होती है; तथापि बड़े-बड़े बाग़ों में सभी ज़मीन एक-सी नहीं होती, और यही कारण है कि कृत्रिम उपायों के द्वारा ज़मीन सुधार ली जाती है।

चिकनी मिट्टीवाली ज़मीन में हरी पाँस देने से वह बहुत कुछ भुरभुरी हो जाती है। कृत्रिम उपायों द्वारा पानी के निकास की भी व्यवस्था की जा सकती है। इस पर आगे चलकर विचार किया जायगा।

किस पौदे को किस प्रकार की ज़मीन में बोना चाहिए, और गमलों के पौदों के लिये कैसी मिट्टी दरकार होती है, इन बातों

पर आगे चलकर भिन्न-भिन्न वृक्षों की नियमावली पर लिखते समय विचार करेंगे।

खाद

संसार के प्रत्येक जीवधारी को भोजन की ज़रूरत होती है। पौदे जीवधारी तो हैं, किंतु हैं जड़—चल-फिर नहीं सकते। अतएव उन्हें भोजन-सामग्री देनी पड़ती है। जो लोग वृक्षों को बोते हैं, उन्हें ही यह काम करना होता है। इसी क्रिया को खाद देना कहते हैं। यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि जंगलों और अन्य स्थानों में खड़े हुए वृक्षों को ख़ूराक कौन जुटाता है? इस प्रश्न का सीधा-सादा उत्तर यही है कि प्रकृति-माता ही उन्हें खिलाती-पिलाती है। बड़े-बड़े वृक्षों की जड़ें इतनी गहरी होती और इतनी दूर फैल जाती हैं कि वे पौदे के लिये काफी ख़ूराक ग्रहण कर सकती हैं।

खाद भिन्न-भिन्न वर्गों में बाँटी गई है। उन वर्गों पर यहाँ संक्षेप में कुछ लिखा जायगा—

(१) **नाइट्रोजन-युक्त खाद**—गोबर, लीद, भेड़-बकरी की मेंगनी, सड़े पत्तों की खाद, हरी खाद, खली, विष्ठा, सोडियम नाइट्रेट अमोनियम सलफ़ेट आदि नाइट्रोजन-युक्त खाद हैं।

(२) **फ़ासफ़रस-युक्त खाद**—हड्डी का चूरा, हड्डी का कोयला सुपर फ़ासफ़ेट और मछली की खाद।

(३) **पोटाश-युक्त खाद**—राख, सलफ़ेट ऑफ़ पोटाश।

ऊपर के वर्गीकरण से यह न समझ लेना चाहिए कि भिन्न-

भिन्न वर्गों में दिए हुए पदार्थों में उस-उस वर्ग के तत्त्व के सिवा दूसरे तत्त्व होते ही नहीं। होते अवश्य हैं, किंतु अल्प परिमाण में। यथा—हड्डी फ़ासफ़रस-युक्त खाद के वर्ग में दी गई है, किंतु उसमें नाइट्रोजन भी विद्यमान रहता है। इसी प्रकार अन्य खादों के संबंध में भी जानना चाहिए।

पूर्ण खाद वही है, जिसमें नाइट्रोजन, पोटाश और फ़ास-फ़रस उपयुक्त परिमाण में मौजूद हों। जिस खाद में किसी एक खाद्य पदार्थ की अधिकता रहती है, वह 'विशेष खाद' कहाती है, और उस खाद्य-पदार्थ की कमी को पूरा करने के लिये ही उसका उपयोग किया जाता है।

गोबर की खाद अति प्राचीन काल से काम में लाई जा रही है, और वह है भी सर्वोत्तम।

ऊपर दी हुई भिन्न-भिन्न खादों में कौन-कौन से तत्त्व, किस परिमाण में, पाए जाते हैं, इस पर स्थानाभाव के कारण यहाँ विचार नहीं कर सकते। इसके अलावा यह एक स्वतंत्र विषय है। यदि हो सका, तो इस पर स्वतंत्र लेख लिखने की चेष्टा की जायगी। यहाँ केवल इतना ही लिख देना काफी होगा कि नाइट्रोजन-युक्त खाद देने से पौदे की शाखाओं और पत्तों की खूब बाढ़ होती है। फ़ासफ़रस-युक्त खाद से फल अच्छे आते हैं, और वे पकते भी जल्दी हैं। पोटाश से फलों में मिठास आ जाती है। ह्यूमस-युक्त खाद देने से धरती के गर्भ में जल रोक रखने की शक्ति बनी रहती है।

हरी खाद—नील, सन, ढंचा, गुवार आदि को बोकर—फूल आने के पहले या बाद—खेत की मिट्टी में गाड़ देने की क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं। फलीदार फ़सलें ही इसके लिये उपयुक्त हैं।

पत्तों की खाद—पतझड़ की फ़सल में वृक्षों के पत्ते गिर पड़ते हैं। इन्हें इकट्ठा कर गढ़े में डाल देना चाहिए। गरमी की ऋतु में इन पर पानी छिड़कते रहना चाहिए; जिसमें जल्दी सड़ जायँ। वृक्षों की काटी हुई छोटी-छोटी टहनियाँ, पत्ते, घास-पतवार आदि भी इसी गढ़े में डालते रहना चाहिए। एक गढ़ा भर जाने पर दूसरे में डालना शुरू करना चाहिए। एक वर्ष के बाद खाद निकाल लेना चाहिए। इसी खाद को अँगरेज़ी में ह्यूमस कहते हैं। यह एक उत्तम खाद है, और गमलों में लगाए जानेवाले पौदों के लिये तो इसके सिवा दूसरी खाद ही नहीं।

फ़र्न, ताड़ आदि सुंदर पत्तोंवाले पौदों के लिये भी पत्तों की खाद सर्वोत्तम है।

लकड़ी की राख—चीन में वनस्पति की राख बहुत अच्छी मानी जाती है। खर-पतवार और वृक्षों की शाखाएँ जलाकर राख खेत में डाली जाती है। राख का असर फ़सल पर साफ़ नज़र आता है।

नाइट्रेट ऑफ़् सोडा—इँगलैंड और अमेरिका में इसे गोबर और लीद की खाद की जगह काम में लाते हैं। अनु-

मान किया गया है कि १६५ सेर नाइट्रेट क़रीब १,१४० सेर गोबर की खाद के बराबर है; अर्थात् १,१४० सेर गोबर की खाद के बदले में १६५ सेर नाइट्रेट ऑफ़् सोडा डालने से काम चल सकता है। ख़ूबसूरती के वास्ते लगाए हुए पौदों के लिये यह खाद निरुपयोगी है। एक गैलन पानी में ½ औंस नाइट्रेट घोलकर गमलों में प्रति आठवें दिन देना अच्छा है। बड़े पेड़ों के लिये एक औंस काफ़ी है।

नाइट्रेट, फ़ासफ़ेट आदि खादें भारतवर्ष में ज्यादा काम में नहीं लाई जातीं, और बाग़ों में तो इनका बहुत ही कम उपयोग होता है। यही कारण है कि हमने इन पर विस्तार-पूर्वक नहीं लिखा।

खाद का घोल

जिस समय पौदों की बाढ़ ख़ूब हो रही हो, उसी समय खाद को, पानी में घोलकर, पौदों की जड़ों में डाल देना चाहिए। परंतु बहुत कम दी जानी चाहिए। ज्यादा देने से पौदे को नुक़सान पहुँचता है। पानी में घोलकर दी हुई खाद का असर बहुत जल्दी पड़ता है।

साबुन—गमलों के पत्तों को साबुन के पानी से धोना फ़ायदेमंद है। कारण, कीड़ों से पत्तों की रक्षा होती है। अक्सर देखा गया है कि पत्तों को साबुन से धोने से रोगी पौदा शीघ्र ही निरोग हो जाता है।

मिश्रित खाद—गोबर, मिट्टी, राख, चूने आदि के मिश्रण

से बनाई हुई खाद भी बहुत अच्छी होती है। नीचे लिखे हुए मिश्रण को सात-आठ सप्ताह तक गढ़े में रखकर पानी छिड़कते रहना चाहिए। गमले के पौदों के लिये यह मिश्रण सर्वोत्तम है—

सड़े हुए पत्तों की खाद	२ भाग
गोबर की खाद (पकी हुई)	२ "
हरे पत्ते सड़े हुए	२ "
लकड़ी की राख	१ "
रेत	१ "
चूना	१ "
ईंट का चूरा	१ "

खाद देने के कुछ नियम

खाद देते समय नीचे लिखी हुई बातों पर खूब ध्यान रखना चाहिए—

(१) अच्छी तरह न पकाई हुई खाद को पौदों को जड़ में कदापि न डालो, हमेशा मिट्टी में मिला दो।

(२) खाद हमेशा थोड़ी-थोड़ी दो-तीन बार में दो।

(३) नाइट्रेट आदि की खादें पानी में घुल जाती हैं। इसलिये ये खादें तभी दी जायँ, जब पानी बरसने की संभावना कम हो।

(४) दूसरी खादें वर्षा-काल में, या उसी ऋतु में दी जानी चाहिए, जब पौदों की बाढ़ हो रही हो।

(५) तात्पर्य यह कि खाद धरती के पेट में इतने पहले

पहुँचाई जानी चाहिए कि वहाँ पहुँचकर वह जड़ों द्वारा चूसी जाने योग्य बन जाय। जो खाद चूसी जाने योग्य नहीं बन पाती, उससे पौदों को लाभ न होगा।

उद्यान-निर्माण

उद्यान-निर्माण (laying out) का कार्य ज़रा कठिन है। किस स्थान पर, किस ढंग से, कौन-से पौदे लगाए जाने चाहिए, यह बात अनुभव के बिना ज्ञात नहीं हो सकती। कारण, बाग़ शोभा और मनोरंजन के लिये लगाए जाते हैं, और यदि उनसे उक्त उद्देश सिद्ध न हुआ, तो मनुष्य को मानसिक पीड़ा होती है। इसके अलावा परिश्रम और धन भी व्यर्थ जाता है।

पुष्प-वाटिका लगाने का ढंग ज़मीन और मालिक की रुचि पर निर्भर है। अतएव इस संबंध में हम यहाँ कुछ भी न लिखकर कुछ व्यावहारिक तत्त्वों पर ही विचार करते हैं।

बाग़ों का अस्तित्व जलाशय पर ही स्थित है। अतएव जलाशय के अस्तित्व का बाग़ों के निर्माण पर बहुत प्रभाव पड़ता है। भारतवर्ष के अधिकांश प्रांतों में कुएँ, तालाब या नदी से पानी निकालकर ही बाग़ों के पौदे सींचे जाते हैं। प्रत्येक बाग़ में ज़रूरत के माफ़िक़ एक-दो या इससे अधिक उत्तम जलाशयों का होना अनिवार्य है।

जलाशय, ख़ासकर कुआँ, बाग़ में ऐसे स्थान पर होना चाहिए, जहाँ से उसके सब भागों को आसानी और जल्दी से पानी पहुँचाया जा सके। प्रायः देखा जाता है कि एक-दो कुएँ

बाग़ के कोने में ही खोदे जाते हैं। पर ऐसा करना कई प्रकार से हानिकारक है।

कुएँ के आस-पास वृक्ष-पौदे आदि लगा देने चाहिए, जिसमें वह उनकी आड़ में आ जाय। बाग़ के नौकरों को अपने रोज़ के कामों के लिये पानी की ज़रूरत होती है, और वे बार-बार कुएँ पर जाया करते हैं। इसलिये नौकरों के रहने के मकानों से कुएँ तक एक रास्ता बना देना चाहिए। परंतु उसका बाग़ के अन्य भागों से बिलकुल लगाव न होना चाहिए। उस राह के दोनो ओर ऊँचे बढ़नेवाले पौदे लगा दिए जाने चाहिए, जिसमें नौकर लोग लुक-छिपकर चोरी न कर सकें।

बाग़ में रास्तों का होना ज़रूरी है। रास्ते हमेशा ज़मीन से ६-७ इंच ऊँचे पक्की ईंटों के बनाए जाने चाहिए। पानी की नालियाँ इन्हीं रास्तों के दोनो बाजुओं से निकाली जाएँ। मगर वे ज़मीन से कुछ ऊँची रक्खी जायँ। यदि रास्ता नाली को काटकर जाता हो, तो नाली हमेशा रास्ते के नीचे से निकाली जानी चाहिए। ऐसे स्थानों पर नल लगाकर ही उसमें से पानी निकाला जाय, तो अच्छा। पानी की नालियों में वृक्ष और छोटे-छोटे पौदे लगाए जाने चाहिए।

जहाँ दूसरे उपयुक्त पदार्थ न मिल सकते हों, वहाँ रास्ते मिट्टी के ही बना लिये जाएँ। मिट्टी ख़ूब दबाकर कड़ी कर लेनी चाहिए। परंतु ऐसे रास्ते बरसात में ख़राब हो जाते हैं, इसलिये बरसात के बाद उनकी दुरुस्ती करना बहुत ज़रूरी है।

अक्सर देखा जाता है कि रास्तों की चौड़ाई बहुत कम रक्खी जाती है। इसका फल यह होता है कि आस-पास के वृक्षों और पौदों के साधारण ऊँचे होते ही उन पर चलना कठिन हो जाता है, और इसलिये टहनियाँ काट दी जाती हैं, जिससे पौदों को हानि पहुँचती है। अच्छा तो यह हो कि बाग़ का निर्माण करते समय ही इस बात पर विचार कर लिया जाय। शुरू में रास्ते ज्यादा चौड़े देख पड़ते हैं। परंतु आस-पास के पौदों के कुछ ऊँचे बढ़ जाने पर अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि रास्ते ज़रूरत से ज्यादा चौड़े नहीं हैं।

यदि बाग़ बड़ा हो, तो यह अत्यंत आवश्यक है कि उसमें एक रास्ता छाया-युक्त और इतना चौड़ा हो, जिसमें उस पर तीन-चार आदमी पास-पास बराबर चल सकें। ऐसे रास्ते के लिये उपयुक्त स्थान बाग़ की चहारदीवारी या घेरे के पास का ही है। घेरे के पास चारों ओर ऊँचे-ऊँचे पौदे इसलिये लगाए जाते हैं कि बाहर से मकान का कोई अंश देख न पड़े। इन पौदों की जड़ें आस-पास की ज़मीन में फैल जाती हैं, जिससे उस स्थान पर दूसरे पौदों का उगना कठिन-सा हो जाता है। अतएव इस स्थान पर चौड़ा रास्ता बनाने से जगह का सदुपयोग हो जाता है। इसी रास्ते की शाखा के रूप में अन्य रास्ते भी बनाए जाने चाहिए, जो सारे बाग़ में जाल-से फैले रहें। बाग़ का कोई भाग ऐसा न रह जाना चाहिए, जिसमें से रास्ते न गुज़रते हों। कम-से-कम पुष्प-वाटिका के

लिये तो इस नियम का पालन अनिवार्य है। ये रास्ते आठ फ़ीट से कम चौड़े कदापि न रक्खे जायँ। रास्ते के दोनो बाजुओं पर मध्यम ऊँचाई तक बढ़नेवाले पुष्प-वृक्ष या मनोहर पुष्पवाले छोटे-छोटे पौदे लगाए जाने चाहिए। मनोहर प्रतिमा या फ़व्वारे के चारों ओर लगाए हुए पुष्प-वृक्षों से गुज़रने के लिये आठ फ़ीट से कम चौड़े रास्ते बनें, तो भी कोई हर्ज नहीं।

यह कोई नियम नहीं है कि हरएक बाग़ में रास्ते होने ही चाहिए। तथापि हमारा निज का मत है कि रास्तों के बिना बाग़ों की सुंदरता मारी जाती है। हरएक बाग़ में टहलने के लिये एक ज्यादा लंबा-चौड़ा रास्ता होना ही चाहिए, और उस रास्ते की शाखाएँ कुछ कम चौड़ी और बाग़ के सब भागों में फैली हुई होनी चाहिए।

हमारे मत से तो बाग़ों के रास्ते पक्के ही बनाए जाने चाहिए। बड़े पत्थर डालकर उन पर मिट्टी (पकी हुई तोड़ी ईंटें) दबा दी जायँ। बंगाल में रास्तों पर सुरख़ी (ईंटों का चूरा) बिछाते हैं। कहीं-कहीं पत्थर के कोयले की राख भी बिछाई जाती है। परंतु ज़्यादातर रेती ही रास्तों पर बिछाने के काम में लाई जाती है।

फूलों के वृक्ष, पौदे और लताएँ उसी स्थान पर लगानी चाहिए, जहाँ सूर्य का प्रकाश ख़ूब पड़ता हो। कारण, पौदों का जो भाग सूर्य के प्रकाश से वंचित रहता है, उसमें फूल

कम होते हैं। सूर्य-प्रकाश के न्यूनाधिक्य का प्रभाव millingtonia—hortensis और bignonia venusta पर अधिक स्पष्ट देख पड़ता है।

आजकल हरएक जाति के फ़सली फूलों को छोटी-छोटी क्यारियों में बोने की प्रथा चल पड़ी है। यह बहुत ही अच्छी है। इससे बाग़ में एक प्रकार की सुंदरता आ जाती है। 'लान' पर एवं रास्तों के किनारे-किनारे इन फूलों के विचित्र रंगों का समावेश बाग़ की शोभा दूनी कर देता है। भिन्न-भिन्न रंगों के विचित्र संयोग से देखनेवाले को अपूर्व आनंद मिलता है।

रहने के मकान के सामने फ़व्वारे के चारो ओर फ़सली फूलों की क्यारियाँ बड़ी निपुणता के साथ लगाई जानी चाहिए। क्यारियों की काट और रास्ते इस ढंग से बनाए जाने चाहिए कि देखते ही मन मुग्ध हो जाय। किन-किन रंगों का अच्छा मेल जमता है, और कौन-सा रंग किस रंग के साथ ज्यादा खूबसूरत दिखाई देता है, यह बात अनुभव के विना मालूम नहीं हो सकती। अक्सर देखा गया है कि माली किसी जाति के पुष्प के पौदों का मिश्रण एक ही क्यारी में बो देते हैं। परिणाम यह होता है कि कुछ पौदे जल्दी सूख जाते हैं कुछ फूलों से लदे रहते हैं, और कुछ में फल ही नहीं आते। यह ठीक नहीं। उन्हीं पौदों के बीजों का मिश्रण बोया जाना चाहिए, जिनमें एक ही साथ फूल आते हों और जिनकी आयु भी बराबर हो। इतना करने पर भी जो विना फूलवाले पौदे पैदा हो जायँ,

तो उन्हें निकाल देना चाहिए। इस बात पर ध्यान न देने से, थोड़ी-सी लापरवाही के कारण, सब गुड़ गोबर हो जाता है।

फ़सली फूलों की क्यारियों में, शीत-काल में, भाँति-भाँति के विदेशी मौसमी पौदे अपनी अपूर्व छटा से दर्शकों की दृष्टि और मन को आकर्षित करते रहेंगे। गरमी के दिनों में Petunias, Verbenas, Phlox आदि के फूलों की विचित्र छटा बाग़ को शोभित करती रहेगी, और वर्षा-काल में Balsams Zinnias Martynia अपनी सुंदरता दिखाते रहेंगे।

फ़सली फूलों के लिये अक्सर गोल, चतुर्भुज, त्रिकोण या वर्गाकार क्यारियाँ ही बनाई जानी चाहिए। इन क्यारियों से 'लान' की शोभा अत्यधिक बढ़ जाती है।

बड़े-बड़े बाग़ों में कई आकार की क्यारियाँ बनाई जाती हैं। परंतु हमारे मत से ऊपर लिखी सादी आकृतियाँ ही अच्छी हैं। सर्पाकार रास्तों के दोनो बाज़ुओं पर जगह-जगह फ़सली फूलों और दूसरे छोटे-छोटे पुष्प-वृक्षों की क्यारियाँ बहुत अच्छी मालूम होती हैं।

लान

दूब या किसी अन्य घास से भरी हुई हरित भूमि को अँगरेज़ी में लान कहते हैं। यदि बाग़ लान लगाने के लायक़ बड़ा हो, तो लान लगाना ही चाहिए। गरमी के मौसम में पानी सींचते रहने से दूब हरी बनी रहती है। गरमी के मौसम में, जब चारों ओर धूल उड़ा करती है, हरा लान बहुत ही सुहावना

मालूम होता है, शाम को या सबेरे कोमल हरी-हरी घास पर टहलने से बड़ा ही आनंद होता है।

भारतवर्ष में अधिकतर दूब ही लान के लिये काम में लाई जाती है, और यह इस काम के लिये है भी अच्छी। दूब सब तरह की ज़मीन में चट जड़ पकड़ लेती है, और एक बार जम जाने पर सदा बनी रहती है। लान की ज़मीन पर भिन्न-भिन्न रीतियों से दूब लगाई जाती है। परंतु हमारे मत से नीचे लिखी तरकीब ही अच्छी है, और इसीलिये हम उसे यहाँ लिखते हैं।

नदी, तालाब आदि जलाशयों के किनारों या अन्य स्थानों में दूब उगी रहती है। इन स्थानों से दूब के छोटे-छोटे वर्गाकार टुकड़े, मिट्टी-समेत, खोदकर ले आने चाहिए। तदनंतर लान के लिये रक्खी हुई ज़मीन को पानी से ख़ूब तरकर, उस पर दूब के टुकड़े, फ़र्श के पत्थरों की तरह, पास-पास जमा दिए जाने चाहिए। लकड़ी के डंडे से पीटकर या हलका बेलन फिराकर दूब को मज़बूत जमा देना चाहिए। इसे वक़्त पर पानी देते रहने से कुछ ही दिनों में लान हरियाली से भर जायगा। दूब बोने के बाद सिंचाई के सिवा और कुछ नहीं करना पड़ता।

लान के लिये ऐसी ज़मीन चुननी चाहिए, जिसमें बरसात में पानी न भरा रहे। पानी भरा रहने से दूब मर जाती है, और उसके स्थान पर नागरमोथा या काँस जड़ पकड़ लेता है।

लान की दूब को दो-तीन इंच से ज्यादा ऊँची न होने देना चाहिए। इस उद्देश की पूर्ति के लिये दसवें-पंद्रहवें दिन लान

पर 'लान मावर'-नामक मशीन चलाकर दूब काटते रहना चाहिए। लान को भी खाद की आवश्यकता रहा करती है। उसके लिये गोबर की पकी खाद लाभदायक है।

घेरा (कंपौंड)

हरएक बाग़ के चारों ओर कंपौंड खींचा जाना चाहिए, ताकि पशुओं से पौदों को नुक़सान न पहुँचे। हमारे मत से तो ईंट-पत्थर की चहारदीवारी ही इसके लिये उत्तम है। किंतु बाग़ के चारों ओर तार का कंपौंड खींचा जाय, तो भी कोई हर्ज नहीं। काँटों की आड़ बनाना तो निरर्थक है। कारण, प्रतिवर्ष उसे दुरुस्त करना पड़ता है, और इससे बाग़ों की शोभा भी मारी जाती है।

तार के कंपौंड के पास-पास, बाग़ के चारों ओर, झाड़ीदार पौदे लगाए जाने चाहिए। परंतु इन पौदों की ज्यादा हिफ़ाज़त करनी पड़ती है।

नीचे उन कुछ पौदों पर विचार किया जायगा, जो कंपौंड के पास लगाए जा सकते हैं।

केतकी (Agave)—यह पौदा काम के लिये अच्छा है। यह ज्यादा ऊँचा तो नहीं होता, पर इतना फैल जाता है कि पशु और दूसरे प्राणी इसमें से होकर बाग़ में नहीं घुस सकते। इस पौदे से हवा भी नहीं रुकती।

हिंगोट—यह कँकरीली ज़मीन में भी हो सकता है, और इसे ज्यादा पानी की ज़रूरत नहीं होती।

बाँस—तरी की आब-हवावाले प्रदेशों में यह बोया जा सकता है।

करौंदा—जिन प्रांतों में ज्यादा पानी बरसता हो, उन्हीं प्रांतो में यह बोया जाना चाहिए।

मेहँदी—इसकी शाखाएँ काटकर लगाई जाती हैं। पर शुरू से ही इसे छाँटते रहना चाहिए, ताकि यह ज्यादा ऊँची न हो और इसकी शाखाएँ खूब फैलें। इसको हमेशा छाँटते रहना पड़ता है। इसकी शाखाओं को नाना प्रकार के पशु-पक्षियों का आकार दे देने से वे बाग़ की शोभा बढ़ाती हैं।

अशोक—यह मकानों को छिपाने के लिये कभी-कभी कंपौंड के पास लगाया जाता है।

निगुँडी—यह पचास इंच से ज्यादा वर्षावाले प्रांतों में होता है। बीज या शाखा काटकर ही बोते हैं।

कहीं-कहीं सीताफल, अनार, शंखासूर बेल आदि भी कंपौंड के पास लगाते हैं। बबूल, फलाई, जैत आदि को भी बोते हैं। बँगलों के कंपौंड के पास मेहँदी कनेर ड्यूरंटा आदि बोते हैं। इन पौदों से बाग़ की शोभा बढ़ जाती है।

बाग़ के एक भाग को दूसरे भाग से अलग करने के लिये झाड़ीदार पौदों का उपयोग किया जाता है। ये भी एक प्रकार की दीवार का ही काम देते हैं। छोटे पत्तेवाले, कोमल और जल्दी बढ़नेवाले पौदे ही इस काम के लिये अच्छे माने जाते हैं। ज्यादातर मेहँदी का ही उपयोग किया जाता है।

परंतु आजकल इसका स्थान ड्यूरेंटा ने ले लिया है। इस संबंध में यहाँ अधिक कुछ नहीं लिखा जा सकता; अतएव एक महत्त्व के प्रश्न पर विचार करके इस विषय को छोड़ देंगे।

फलवाले वृक्षों को हवा से बहुत नुक़सान पहुँचता है। आँधी से बड़े-बड़े वृक्ष टूट जाते हैं। ज़ोर की हवा से फूल और फल गिर पड़ते हैं। केले के पेड़ों को तो हवा से ज्यादा नुक़सान पहुँचता है। हवा के कारण कभी-कभी फल से लदी हुई डालियाँ टूट जाती हैं। इसलिये बाग़ लगानेवाले हरएक आदमी का यह प्रथम कर्तव्य है कि वह सबसे पहले इस ओर ध्यान दे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये, जिस ओर से वर्ष के अधिकांश दिन ज़ोर की हवा चला करती हो, उस ओर को, कंपौंड के बाहर की ओर—किंतु पास-ही-पास, ऊँचे बढ़नेवाले पेड़ बोए जायँ। ऐसे ही पेड़ बोए जाने चाहिए, जो हवा की गति को तो रोकें, किंतु उसके माग में बाधा न डालें। मतलब यह कि इन पेड़ों से हवा की गति में बाधा पड़ेगी, जिससे पौदों को तो नुक़सान नहीं पहुँचेगा, परंतु हवा पत्तों में से होकर बाग़ में प्रवेश कर सकेगी। यदि घने पत्तेवाले वृक्ष बोए जायँगे, तो हवा भीतर न जा सकेगी, और तब काफ़ी हवा न मिलने के कारण पौदों की वृद्धि में रुकावट पहुँचेगी।

हवा को रोकने के लिये लगाए जानेवाले वृक्ष दो क़तारों में बोए जाने चाहिए। वे इस ढंग से बोए जायँ कि दूसरी क़तार

के पेड़ पहली क़तार के दो पेड़ों के ठीक बीच में रहें। भिन्न-भिन्न जलवायुवाले प्रांतों में भिन्न-भिन्न जाति के पेड़ बोए जाते हैं, और यही कारण है कि हमने इस संबंध में यहाँ कुछ नहीं लिखा। हरएक को आब-हवा के अनुसार पेड़ चुन लेना चाहिए।

हवा रोकने के लिये पेड़ लगाने से नीचे-लिखे फ़ायदे होते हैं—

१—ठंड से पौदों की रक्षा होती है।

२—फलों से लदी हुई शाखाएँ टूटने नहीं पातीं।

३—ज़्यादा हवा से फल-फूल झड़कर जमीन पर नहीं गिरते।

४—पेड़ सीधे बढ़ते हैं।

५—गरमी में लू से पौदों की रक्षा होती है।

पेड़ लगाने से हानि—

१—पेड़ों के पास बोए हुए पौदों को रोग और कीड़ों से ज़्यादा नुक़सान पहुँचता है।

२—पेड़ों के पासवाले पौदे कम फूलते-फलते हैं।

३—कभी-कभी खेतों में जड़ों के फैल जाने से पौदों को नुक़सान पहुँचता है।

जुताई

बाग़ की जमीन की जुताई करना बहुत जरूरी है। फलवाले पेड़ों के बीच की जमीन में बार-बार हल या बखर देते रहना

चाहिए। विशेषकर बरसात में तो इस ओर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। फलवाले पेड़ों के थालों की मिट्टी खुरपी से हमेशा ढीली करते रहना चाहिए। फूलों के पौदों की जमीन में, जिसमें हल-बखर देना संभव न हो, यह काम खुरपी से लिया जाना चाहिए।

जुताई, निराई और गुड़ाई की ओर ज्यादा ध्यान न देने से बहुत नुक़सान उठाना पड़ता है। जुताई और गुड़ाई से वृक्षों की जड़ों के पास की मिट्टी ढीली हो जाती है। इससे उन्हें धरती के पेट में संचित किए हुए भोजन पर्याप्त मात्रा में मिलते रहते हैं।

ज़मीन में खर-पतवार के उग आने से भी वृक्षों को नुक़-सान पहुँचता है। अन्य पौदों की तरह खर-पतवार के पौदे भी ज़मीन से ख़ूराक लेते हैं, और ज़मीन की तरीका बहुत-सा भाग भी इनके पत्तों से होकर हवा में उड़ जाता है। यदि खर-पतवार नष्ट कर दिया जाय, तो ख़ूराक और तरी, जिसे ये पौदे नष्ट कर डालते हैं, बाग़ों के पौदों के काम आ जायँगी, और ज्यादा ख़ूराक मिलने के कारण फल-फूल भी अच्छे आवेंगे।

सिंचाई

भारतवर्ष के सभी प्रांतों में वर्षा के सिवा अन्य ऋतुओं में पौदों को पानी देना पड़ता है। पानी कुएँ, तालाब या नहरों से ही दिया जाता है। गहरे कुँओं से पानी ऊपर निकालने के

लिये मोट (चरसा), परशियन व्हील अर्थात् एंजिन से चलाए जानेवाले पंप आदि का उपयोग किया जाता है। भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न गहराई से जल निकालने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के देशी और विदेशी यंत्रों का उपयोग किया जाता है। हमारे मत से रहँट और चरसा ही उपयुक्त यंत्र हैं। चरसे भी दो-तीन तरह के होते हैं। परंतु उत्तम चरसा वही है, जिसमें पानी उँडेलने के लिये सोंड़ लगी हो।

पानी की नाली ऐसे स्थान पर बनाई जानी चाहिए, जहाँ से सब जगह आसानी से पानी पहुँचाया जा सके। तथापि सिंचाई के लिये वही रीति काम में लाई जानी चाहिए, जिससे पानी ख़राब न हो। अक्सर देखा जाता है कि मिट्टी की नालियों से बहुत-सा पानी इधर-उधर फैलकर ख़राब हो जाता है। पक्की नालियाँ बनाई जायँ, तो अच्छा ही है; नहीं तो लोहे की चद्दरों की या बर्न कंपनी के मिट्टी के आधे पाइपों की नालियों से भी काम चल सकता है। मिट्टी की नालियों द्वारा पानी देने से ज़मीन ही बहुत-सा पानी सोख लेती है। कई बाग़ों में रबर की नालियाँ भी पानी सींचने के काम में लाई जाती हैं। यह भी अच्छा है। लान को पानी देने के लिये तो रबर की नालियाँ बहुत अच्छी हैं। लान को पानी इस ढंग से दिया जाना चाहिए कि वह ख़ूब पानी सोख सके। परंतु फल और फूल के वृक्षों को तो उनकी जड़ों के पास ही पानी दिया जाना चाहिए। देखा गया है कि पौदे के

चारों ओर थाले बनाकर उनमें पानी भरा जाता है। परंतु यह रीति बहुत ही ख़राब है। इस रीति का अवलंबन करने से पौदे के तने को पानी लगता रहता है; जिससे कभी-कभी कॉलर रॉट-नामक रोग हो जाता है। फल के पेड़ों को तो वहीं पानी दिया जाना चाहिए, जहाँ उनकी जड़ें फैली हुई हों। और, इस उद्देश की पूर्ति के लिये पौदे की पेड़ी के चारों ओर मिट्टी चढ़ाकर थालों में पानी दिया जाना चाहिए। नीचे के नक़्शे से यह बात चट ध्यान में आ जायगी—
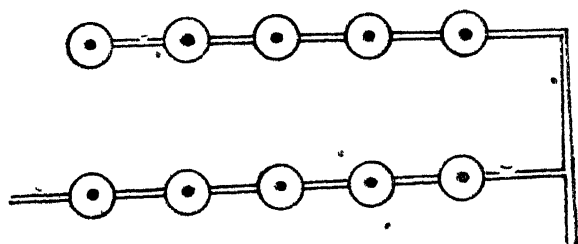
शुरू में पौदों को पानी देने की रीति

थाले के बीच में काले बिंदु पौदे के तने के आस-पास चढ़ाई हुई मिट्टी हैं।

पौदों के ज़्यादा बड़े हो जाने पर सिंचाई की नालियाँ दो क़तारों के बीच में चार-पाँच फ़ीट चौड़ी बनाई जानी चाहिए। इससे भी ऊपर-लिखा मतलब हल हो जायगा; इस रीति का नक़्शा नीचे दिया गया है—

पानी की नाली

पानी की नाली

पानी की नाली

पानी की नाली

पानी की नाली

बडे पौदो दो पानी देने की रीति

काले बिंदुओं की जगह वृक्ष लगे हुए हैं।

बहुत-से फलवाले वृक्ष ऐसे हैं, जो २५-३० फ़ीट की दूरी पर बोए जाते हैं। ऐसे वृक्षों को पानी देने के लिये तो पहली रीति का ही अवलंबन करना चाहिए। थाला बनाते समय इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि वह उतना ही बड़ा हो, जितना बड़ा वृक्ष के पत्तों का घेरा। परंतु थाले की चौड़ाई तीन चार हाथ से अधिक न हो। गहराई एक या दो बालिश्त काफ़ी है। दूसरी रीति से भी इतनी दूरी पर बोए जानेवाले

वृक्षों को पानी देने में कोई हानि नहीं है। कुछ बाग़ों में हमने आम, संतरा आदि को इसी रीति से पानी देते देखा है।

दस-पंद्रह फ़ीट की दूरी पर बोए जानेवाले वृक्षों को तो चार-पाँच फ़ीट ऊँचे बढ़ जाने पर दूसरी रीति से पानी देना ही अच्छा है। अनुभव से पाया गया है कि इस रीति का अवलंबन करने से पौदा ख़ूब फैलता है। कारण यह है कि पानी की तलाश में जड़ें दूर-दूर तक बढ़ती रहती हैं, जिससे पौदे की भी अच्छी बाढ़ होती है। यदि पानी तने के पास ही दिया जायगा, तो जड़ें पास-ही-पास फैलती रहेंगी, और तब बहुत-सी जड़ें ज़मीन की सतह पर आ जायँगी।

किस फसल को कितना पानी दिया जाना चाहिए, इस प्रश्न का उत्तर देना ज़रा कठिन है। कारण, ज़मीन, आब-हवा और ऋतु पर ही सिंचाई निर्भर है। तथापि नीचे कुछ सर्वसाधारण उपाय दिए जाते हैं। कुछ बुद्धि ख़र्च कर इनका उपयोग करने से लाभ हो सकता है।

नरसरी (पौदों के जन्म-स्थान) या गमलों से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाए हुए पौदों को पहली बार ज्यादा पानी की जरूरत होती है, ताकि मिट्टी जड़ों के आस-पास अच्छी तरह से जम जाय। बाद को प्रतिदिन शाम को उतना ही पानी दिया जाना चाहिए, जितना कि मिट्टी में तरी बनाए रखने के लिये काफ़ी हो। पौदे के जड़ पकड़ लेने पर पानी की मिक़दार ख़ूब बढ़ा देनी चाहिए ; किंतु साथ ही पानी देने

की मियाद का भी बढ़ा देना जरूरी है। ज्यादा पानी देने से वह ज़मीन में अधिक गहराई तक उतर जायगा, जिससे उसका बहुत कम अंश भाप बनकर उड़ पावेगा। ज्यादा पानी देने से एक लाभ यह भी होता है कि जड़ें ज्यादा गहरी पैठने लगती हैं। दो-दो, चार-चार, दिन के अंतर पर थोड़ा-थोड़ा पानी देने से पौदे की जड़ें खेत की सतह के पास-ही-पास फैलती हैं, और तब मिट्टी की तरी और ताप-क्रम में थोड़ा-सा फ़र्क़ होते ही पौदे पर उसका असर पड़ता है।

गमले के पौदे को, गमले के आकार और पौदे के मान को देखकर ही पानी दिया जाना चाहिए। यदि पौदा बड़ा हो और गमला जड़ों से भर गया हो, तो रोज़-रोज़ पानी देना पड़ेगा। तेज़ धूप में रक्खे हुए गमलों को भी ज्यादा पानी देना जरूरी है।

लान और उन फूल के पेड़ों को, जिनकी जड़ें अधिक गहरी नहीं जातीं, ज्यादा पानी की ज़रूरत होती है। और कभी-कभी तो प्रतिदिन पानी देना पड़ता है।

इकले-दुकले पौदों और बाग़ के उन भागों के पौदों को, जहाँ पानी की नालियाँ नहीं बनी हैं, पानी देने का काम ज्यादा मिहनत और ख़र्च का है। और, गरमी के मौसम में तो ऐसे पौदों को पानी देना बड़ा ही कठिन है। इस तकलीफ़ को रफ़ा करने की सबसे अच्छी तरकीब तो यही है कि पौदों की जड़ों के पास छोटे-छोटे मिट्टी के घड़े गाड़ दिए जायँ,

और पानी भरकर इन घड़ों के मुँह से पत्थर ढक दिए जायँ। इन बरतनों में उसी ऋतु में पानी भरना चाहिए, जिस ऋतु में पौदों की बाढ़ होती है। बरतनों को हमेशा पानी से भरे रखना हानिकारक है।

पानी का निकास

बहुत-से फल और फूलवाले पेड़ों को ज़मीन में पानी भरा रहने से नुक़सान पहुँचता है। इस कारण बाग़ के लिये वही ज़मीन अच्छी है, जिसमें पानी न भरा रहता हो। परंतु सभी जगह ऐसी ज़मीन का मिलना संभव नहीं। और, इसीलिये कृत्रिम उपायों द्वारा पानी के निकास की व्यवस्था की जाती है। बाग़ों के लिये नीचे-लिखी रीति से पानी के निकास की व्यवस्था की जानी चाहिए।

जिस ज़मीन में बरसात में पानी भरा रहता हो, उसमें पंद्रह या बीस फीट के अंतर पर सात-आठ फ़ीट चौड़ी और फ़ीट-डेढ़ फ़ीट गहरी नालियाँ बनाई जायँ। ज़मीन के ढाल के अनुसार ही ये नालियाँ बनाई जानी चाहिए। इन नालियों के मुख पर बहुत-सी घास रखकर उस पर पत्थर रख देना चाहिए। बरसात में पानी के साथ खेत की महीन मिट्टी बहकर चली जाती है। यदि नालियों के मुख पर घास रख दी जायगी, तो मिट्टी बहकर बाहर न जा सकेगी—पानी घास से होकर निकल जायगा, और मिट्टी घास के पास जम जायगी।

पानी के निकास के लिये एक और दूसरी रीति काम में

लाई जाती है। परंतु उसमें ज़्यादा ख़र्च है, और हमारे मत से फलवाले पेड़ों की ज़मीन के लिये वह एकदम उपयोगी नहीं है। साग-भाजी की खेती के लिये निम्न-लिखित रीति से जल के निकास की व्यवस्था करना अच्छा है, और इसीलिये हम इसका वर्णन करते हैं।

खेत में पंद्रह-बीस फ़ीट के अंतर पर तीन फ़ीट गहरी नालियाँ खोदी जायँ। इन नालियों में मिट्टी के बर्न कंपनी के नल (tuber) या ईंट-कंकड़-पत्थर आदि डाले जायँ। नल रखने के बाद उन पर छः इंच मोटी रेत की तह डाल दी जाय, और तब नाली मिट्टी से भर दी जाय। यदि ईंट-कंकड़-पत्थर डाले जायँ, तो इन पर छः इंच मोटी घास या पत्तों की तह दी जाय, और तब छः इंच मोटी तह रेत की डाली जाय। तदनंतर नाली मिट्टी से भर दी जाय। घास या पत्ते इसलिये डाले जाते हैं कि महीन मिट्टी कंकड़-पत्थर में घुसकर पानी का रास्ता न रोक दे।

सजावट

बाग़ों की सजावट भी बड़ी सावधानी और चतुराई से करनी चाहिए। बाग़ में स्थान-स्थान पर छोटी-छोटी मनोहर प्रतिमाओं के हाथ में या सिर पर छोटे-छोटे ख़ूबसूरत पौदों के गमले बड़े चित्ताकर्षक होते हैं। एक-आध हौज़ में फ़व्वारा विचित्र छटा दिखाता है। छोटे-छोटे हौज़ों के बीच में रमणियों की मनोहर प्रतिमाएँ बड़ी भली मालूम होती हैं। जूनागढ़ के

राजबाग़ में बैल की और नागपुर के महाराज के बाग़ में एक हाथी की मनोहर प्रतिमा है।

स्थान-स्थान पर छोटे-छोटे लता-कुंज भी लगाए जाने चाहिए। सड़कों के संगम में मँडवे पर लताएँ चढ़ा देना भी अच्छा है। हमने एक-दो स्थानों पर देखा है कि लान या किसी अन्य स्थान पर एक-आध खंभे पर लता चढ़ा दी गई। परंतु वह बहुत भद्दी मालूम होती है। उससे बाग की सुंदरता मारी गई है।

मँडवों और लता-कुंजों के लिये बारहों मास फूलनेवाली लताएँ ही बोई जानी चाहिए। लता-गृहों की व्यवस्था इस प्रकार रक्खी जानी चाहिए कि वे बारहों महीने घने पत्तों से आच्छादित रहें।

कई प्रकार की छोटी-छोटी लताएँ गमलों में भी बोई जाती हैं। इन गमलों पर बाँस या लोहे की जालियाँ लगा देना चाहिए, ताकि लताएँ उन पर चढ़ जायँ। कई प्रकार के मनोहर पौदे गमलों में बोए जाते हैं, और तब ये गमले बाग़ में स्थान-स्थान पर रक्खे जाते हैं। कुछ गमले वृक्षों की शाखाओं या अन्य स्थानों पर लटकाए भी जाते हैं। पर भारतवर्ष के गरम प्रांतों में बहुत कम गमले लटकाए जाते हैं। कारण, गरमी के मौसम में पानी देने में बड़ी तकलीफ़ होती है।

बाग़ कितनी ही उत्तम रीति से क्यों न सजाया गया हो, और उद्यान-निर्माण भी कितनी ही दक्षता से क्यों न किया

गया हो, स्वच्छता की ओर ध्यान न देने से सब सुंदरता फीकी और किरकिरी हो जाती है। कहें तो कह सकते हैं कि स्वच्छता पर ही बाग़ की शोभा निर्भर है।

लकड़ी के टब में ताड़ आदि पौदे बड़े ख़ूबसूरत मालूम होते हैं। इन टबों को कई प्रकार के ख़ूबसूरत आकार दिए जा सकते हैं।

बाग़ों में स्थान-स्थान पर बेंच, कुरसी, टेबिल आदि भी रक्खे जाने चाहिए। ये छाया-युक्त स्थानों में ही रक्खे जाने चाहिए। हमने दो-चार स्थानों में देखा है कि बेंचें घोड़ा, गाड़ी, मोटर आदि के आने-जाने के रास्ते की बाज़ू पर रक्खी हैं। पर ऐसा करना बहुत बुरा है। कारण, उक्त वाहनों के आवागमन से बैठनेवाले को बड़ी तकलीफ होती है। इसलिये बेंच, कुरसी आदि तो वहीं रक्खी जानी चाहिए, जहाँ कुछ देखने योग्य दृश्य हो, और जहाँ भाँति-भाँति के वाहनों के आवागमन से बैठनेवालों को तकलीफ़ न हो।

छाया

कम उम्र के पौदों को तेज़ धूप से बहुत हानि पहुँचती है। इसलिये खेत में लगाने के बाद उन पर छाया करना बहुत ज़रूरी है। छोटे-छोटे पौदों पर गमला आधा काटकर औंधा रख दिया जाता है। शाम को इसे हटा लेते हैं। गमले का खुला भाग हमेशा उत्तर की ओर रखना चाहिए। कभी-कभी ज़्यादा पत्तीवाली नीम की डालियाँ भी पौदों पर रख दी जाती

हैं। पौदों पर छाया करने के लिये नीम की डालियाँ बहुत अच्छी हैं। पत्तों की संधियों में से पौदे को प्रकाश और हवा मिलती रहती है, और धूप से भी उसकी रक्षा होती है। केले के तने के छोटे-छोटे टुकड़े भी चीरकर पौदों पर रक्खे जाते हैं। आम, लीची आदि के सामान बड़े पौदों पर खजूर के पत्ते या चटाइयों की छाया की जाती है। पर उत्तर की ओर का भाग सदा खुला रहने देना चाहिए। पौदे के चारों ओर घास के पूले खड़े कर देने से भी काम चल सकता है। इन पर पानी छिड़कते रहना चाहिए, और उत्तर की ओर का भाग खुला रखना चाहिए।

बाग़ के शत्रु

बाग़ के पौदों के अनेक शत्रु हैं। उनमें से कुछ के नाम नीचे दिए जाते हैं—

१—फंगस-रोग

२—कीड़े

३—पक्षी

४—दूसरे प्राणी और चोर

फंगस

फंगस—परोपजीवी पौदे हैं। ये पौदे दूसरे पौदों का रक्त (रस) चूसकर जीवन-निर्वाह करते हैं। इनकी अनेक जातियाँ हैं। बाग़ के वृक्षों को भाँति-भाँति के फंगस-रोग लगते हैं। उन सब पर, स्थानाभाव के कारण, यहाँ विचार नहीं किया

जा सकता। हम इन रोगों के संबंध में यहाँ कुछ भी न लिखकर केवल दवा बनाने की रीति पर ही विचार करेंगे। यह दवा सब प्रकार के फंगस-रोगों पर काम में लाई जा सकती है।

४ पौंड नीलाथोथा, एक थैले के टुकड़े में बाँधकर, २५ गैलन पानी में डाल दो। ६ पौंड कली के चूने में वही पानी डालो, अर्थात् धीरे-धीरे पानी मिलाते रहो। यहाँ तक कि २५ गैलन पानी पूरा हो जाय। तदनंतर चूने और नीलेथोथे के पानी को खूब चलाकर मिला दो।

इस मिश्रण में चाक़ू डुबाकर देख लो। यदि चाक़ू पर दाग़ पड़ जाय, तो थोड़ा चूना और मिला दो। यदि दाग़ न पड़े, तो समझ लो कि मिश्रण से पौदों को नुकसान नहीं पहुँचेगा।

कीड़े

वृक्षों के पत्तों और फलों पर कई प्रकार के कीड़े हमला करते हैं। स्थानाभाव के कारण उन पर यहाँ सविस्तार नहीं लिखा जा सकता। प्रत्येक फलवाले वृक्ष के वर्णन के साथ उसको नुक़सान पहुँचानेवाले मुख्य-मुख्य कीड़ों और रोगों पर भी विचार किया गया है। अतएव हम यहाँ एक-दो दवाएँ बनाने की तरकीब ही लिखेंगे *।

---

* इस संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये मेरी लिखी हुई विज्ञान-परिषद्, प्रयाग द्वारा प्रकाशित 'फ़सल के शत्रु'-नामक पुस्तक पढ़िए।

१. राल का मिश्रण—एक सेर राल और आध सेर कपड़ा धोने के सोडे को पाँच सेर पानी में डालकर आग पर रक्खो, और थोड़ा-थोड़ा ठंडा पानी मिलाते जाओ। परंतु १० सेर से अधिक पानी, किसी भी हालत में, न मिलाया जाय। मिश्रण के साफ़ हो जाने पर उसे आग पर से हटाकर एक बरतन में रख लो। २०-२५ सेर पानी में २ सेर मिश्रण मिलाकर काम में लाते हैं।

२. तमाखू का सत—एक सेर तमाखू को २४ घंटे तक पानी में भिगो रक्खो, या आधे घंटे तक पानी में उबालो। इसके बाद ठंडा कर तमाखू को दोनो हाथों से ख़ूब मसलकर कपड़े से छान लो। इसमें एक पाव कपड़े धोने का साबुन मिला दिया जाय, तो और अच्छा है। यह दवा सब प्रकार के कीड़ों के लिये काम में लाई जा सकती है।

सात भाग मिश्रण में एक भाग पानी मिलाकर काम में लाना चाहिए।

३. नीलेथोथे का मिश्रण—आध सेर नीलाथोथा और ६ छटाँक क़लई के चूने को अलग-अलग पानी में घोलो। तब दोनो को मिलाकर इतना पानी डालो कि सब मिश्रण २० सेर हो जाय। इस मिश्रण में चाक़ू डुबाने से यदि उस पर दाग़ पड़ जाय, तो थोड़ा चूना और मिला देना चाहिए। यह मिश्रण मिट्टी के बरतन में ही रक्खा जाना चाहिए।

४ फ़िनाइल का मिश्रण—१०० भाग पानी में एक भाग

फ़िनाइल मिलाकर छिड़को। कभी-कभी साठ भाग पानी में एक भाग फ़िनाइल मिलाकर भी छिड़कते हैं।

ऊपर दी हुई दवाएँ छिड़कने के लिये कई प्रकार की मशीनें बनाई गई है। बड़े-बड़े वृक्षों पर तो ये दवाएँ इन मशीनों से ही छिड़की जाती हैं, पर छोटे-छोटे पौदे और गमले के वृक्षों पर ये दवाएँ गमलों को पानी देने के हज़ारे से छिड़की जानी चाहिए।

चींटी—चींटियों से भी पौदों को नुक़सान पहुँचाता है। पौदे के आस-पास हलदी डाल देने से चींटियों का उपद्रव कम हो जाता है।

दीमक—दीमक से बहुत हानि पहुँचती है। इसके लिये अभी तक कोई रामबाण औषध का पता नहीं चला है। इसके घर का पता लगाकर उसमें गंधक का धुआँ पहुँचाने से दीमक मर जाती है। दीमक का घर खोदकर रानी-दीमक को मार डालना भी दीमक के नष्ट करने का उपाय एक है।

पक्षी

कौए—ये गमले के कोमल पौदों के अंकुर खा जाते हैं। एक कौए को मारकर बाग़ में टाँग देने से कौओं से होने-वाला नुक़सान घट जायगा।

गिलहरी, चिमगादड़, चूहे—भी बहुत नुक़सान पहुँचाते हैं। मूँगफली के दानों को नीलेथोथे के पानी में २४ घंटे भिगोकर खेत में डाल देना चाहिए। चूहे और गिलहरी

इन्हें खाकर मर जायँगी। सोमल को आटे और गुड़ में मिला-कर गोलियाँ बनाई जाती हैं। इन गोलियों के खाने से भी चूहे मर जाते हैं।

चोर—बाग़ के चारों ओर मज़बूत कंपौंड लगाने से भीतर नहीं घुस सकेंगे। चौकीदार रखना भी अच्छा है।

भिन्न-भिन्न जाति के वृक्षों को नुक़सान पहुँचानेवाले कीड़ों के संबंध में उन-उन वृक्षों के साथ ही विचार किया गया है, और यही कारण है कि यहाँ कीड़ों पर कुछ नहीं लिखा गया।

बीज

वनस्पति की उत्पत्ति मुख्यतः दो प्रकार से होती है—बीज से और क़लम से। सब प्रकार के नाज और बहुत-से फल और फूल के पेड़ों के बीज ही बोए जाते हैं। कुछ फलवाले पेड़ ऐसे भी हैं, जिनकी क़लम लगाकर, चश्मा बाँधकर और पेवंद आदि से भी पौदे तैयार किए जाते हैं। इस विषय पर एक स्वतंत्र लेख में विचार किया जायगा।

बाग़ में होनेवाले कई प्रकार के पौदों के बीज ही बोए जाते हैं, इसलिये यह ज़रूरी है कि फलों के पक जाने पर उनसे बीज निकालकर वे बोने के लिये सुरक्षित स्थान में हिफ़ाज़त से रख दिए जायँ।

बहुधा देखा जाता है कि सीलवाली जगह में रखने से बीज ख़राब हो जाते हैं, और लापरवाही करने के कारण बीजों में कीड़े लग जाते हैं। कभी-कभी अच्छी तरह न सुखाने से भी

बीज ख़राब हो जाते हैं। इसलिये यह अत्यंत आवश्यक है कि बीजों को साफ़ पानी से धोकर धूप में अच्छी तरह सुखा ले, और तब शीशी या टीन के डब्बे में रखकर, उसका मुँह बंद-कर, उसे किसी सूखी जगह में रख दे।

जो पौदा नीरोग, ज़ोरदार और फूल या फलों से ख़ूब लदा रहा हो, उसी के बीज चुने जाने चाहिए। बीज के लिये पौदे का चुनाव करते समय फूल या फलों का रूप-रंग, आकार, सुगंध, मधुरता आदि पर भी ध्यान देना चाहिए। बहुत-से फल पकने पर फट जाते हैं, जिससे बीज ज़मीन पर गिर पड़ते हैं। इसलिये फूल या फल पर महीन मलमल की थैली बाँध देना चाहिए। थैली बाँधने के पहले अच्छी तरह देख लेना चाहिए कि उसमें इल्ली या अंडे तो नहीं हैं। परंतु बरसात में थैली कदापि न बाँधी जाय। कारण, पानी से गीली हो जाने के कारण वह चिपक जाती है, जिससे फल या फूलों को हानि पहुँचने की संभावना रहती है।

ख़ूब पके हुए फल ही बीज के लिये चुने जायँ। कड़े छिल-केवाले फल तोड़कर धूप में अच्छी तरह सुखा लिये जायँ, और तब बीज हाथ से अलग निकाले जायँ। कड़े छिलकेवाले वे फल, जो पकने पर फट जाते हैं, महीन मलमल की थैली में ही रक्खे जाने चाहिए, जिसमें बीज ज़मीन पर न गिर जायँ। बीजों को धूप में अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। बीज लगातार तीन दिन तक दिन-भर तो धूप में रक्खे जायँ, और रात को

किसी बरतन, कनस्टर या शीशी में रखकर ढक्कन मज़बूत लगा दिया जाय, जिसमें हवा अंदर न घुस सके। तीन दिन तक धूप में सुखा लेने के बाद बीज किसी ऐसे बरतन में रक्खे जायँ, जिसमें हवा न घुस सके। जुदी-जुदी जाति के फल के पेड़ों और भिन्न-भिन्न रंग के फूल के पेड़ों के बीज जुदे-जुदे बरतनों में रक्खे जायँ, और बरतनों पर उनके नाम लिख दिए जायँ। शोभा के लिये भिन्न-भिन्न रंग के फूलवाले पौदे एक ही क्यारी में बोए जाते हैं। पर बोते समय ही बीजों को मिलाना चाहिए। यों तो जुदे-जुदे बरतनों में ही अलग-अलग रखना चाहिए।

गूदेदार फल पकने पर नरम हो जाते हैं। गूदेदार फल ख़ूब पक जाने पर ही इकट्ठे किए जाने चाहिए। तोड़ने के बाद फलों को सड़ने देना चाहिए। गूदे के सड़ जाने पर बीजों को निकाल कर, दो-तीन बार साफ़ पानी से धोकर, तीन दिन तक छाया में सुखा लो। इसके बाद पाँच दिन तक धूप में सुखाकर किसी ढक्कनदार बरतन में रख दो। परंतु स्मरण रहे कि बरतन में हवा का प्रवेश न होने पावे।

अक्सर देखा जाता है कि कच्चे या अध पके फलों के बीज इकट्ठे करने से, बीजों को सीलदार जगह में रखने से, और कीड़े लग जाने से बीज मर जाते हैं; अर्थात् उनकी उगने की शक्ति नष्ट हो जाती है। पुराने बीज भी कम उगते हैं।

यदि बीज बाज़ार से ख़रीदने पड़ें, तो किसी प्रसिद्ध और

बड़ी दूकान से ही वे ख़रीदे जायँ। बीजों में नीचे लिखे हुए गुण होने चाहिए—

१—एक बीज में किसी दूसरी जाति के बीजों का मेल न हो।

२—बीज चमकीले हों, और उनका रंग साफ़ हो—अर्थात् जिस जाति के बीज हों, उस जाति के उत्तम बीजों के रंग के समान उनका रंग हो।

३—बीजों में कच्चे और अध पक्के बीजों का मेल न हो।

४—बीज पुराने न हों।

५—उनमें किसी प्रकार की दुर्गंध न आती हो।

६—बीजों की उगने की शक्ति नष्ट न हो गई हो।

७—और बीजों में कीड़ा न लगा हो।

बीजों की उगने की शक्ति देखने की तरकीब यह है कि हरएक नमूने के सौ-सौ बीज लेकर गीले ब्लॉटिंग-पेपर या रेत में बो दिए जायँ। बोने के बाद वे एक अँधेरे स्थान में रख दिए जायँ। तीन दिन बाद जिस नमूने के सबसे ज़्यादा बीज उग आए हों, वही अच्छा समझकर ख़रीद लिया जाय। कहीं भिन्न-भिन्न नमूने के सौ-सौ बीज लेकर तौलने की प्रथा है। जिस नमूने के सौ बीजों का वज़न सबसे ज़्यादा होता है, वही ख़रीद लिया जाता है।

धोखेबाज़ व्यापारी लोग अधिक लाभ की आशा से कभी-कभी बीजों में रेत,कूड़ा आदि मिला देते हैं। इसलिये बीज

ख़रीदते वक़्त यह भी देख लेना चाहिए कि उसमें कर्कट, कंकड़, रेत आदि तो नहीं है।

आजकल बीजों के साथ बरतनों में नेफ़थेलीन की गोलियाँ भी रक्खी जाने लगी हैं। नेफ़थेलीन की गोलियों का उपयोग करना बहुत लाभदायक है। कारण, नेफ़थेलीन की गंध से कीड़े मर जाते हैं।

बीज बोना

बीजों के आकार पर ही बीज बोने की पद्धति निर्भर करती है। भिन्न-भिन्न प्रकार के फल और फूलवाले पेड़ों के वर्णन के साथ बीज बोने की रीति भी लिख दी गई है। यहाँ बीज बोने से संबंध रखनेवाली कुछ बातों पर स्थूल दृष्टि से विचार किया जायगा।

बबूल के बीज के समान कड़े छिकलेवाले बीजों को ज़मीन में बोने के पहले छः घंटे तक सलफ़रिक एसिड में भिगो रक्खो। ऐसा करने से वे जल्दी उग आते हैं। इससे कम कड़े छिलके-वाले बीज २४ घंटे तक पानी में भिगो रखने के बाद बोए जाने चाहिए। उँगली सह सके, इतने गरम पानी में १२ घंटे तक डाल रखने से भी बीज जल्दी उग आते हैं। छोटे और नरम छिकलेवाले बीजों को पानी में डालने की कोई ज़रूरत नहीं।

कभी-कभी लोग यह पूछ बैठते हैं कि बीज कितने गहरे बोए जाने चाहिए ? अतएव यहाँ इस प्रश्न का उत्तर दे देना अत्यंत आवश्यक है। भिन्न-भिन्न प्रकार के बीज भिन्न-भिन्न गहराई पर

बोए जाते हैं। बीजों के बोने की गहराई बीजों की मुटाई पर निर्भर है। स्थूल रूप से बीजकी गुलाई की तिगुनी बोने की गहराई रक्खी जानी चाहिए। अर्थात्, यदि बीज की गुलाई ½ इंच हो, तो बीज क़रीब डेढ़ इंच गहरा बोया जाना चाहिए। आगे चलकर गमलों में भरने के लिये एक मिश्रण लिखा गया है। यही मिश्रण नरसरी, बक्स या गमलों में भरकर बीज बोया जाना चाहिए। कभी-कभी बीज एक लंबे समय तक नहीं उगते। ऐसे बीज जिनमें बोए हुए हों, उन गमलों में कोयले का चूरा डालना लाभदायक है। कारण, लगातार पानी देते रहने से ज़मीन में एक प्रकार का विष पैदा हो जाता है, जो पौदे के लिये हानिकारक है। कोयले में इस विष की उत्पत्ति रोकने की शक्ति है।

अंकुरित होने के लिये बीज को प्रकाश और उत्ताप की ज़रूरत होती है। अतएव प्रकाश और उत्ताप का रोकना नुक़सान पहुँचानेवाला है। तथापि इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि प्रकाश और उत्ताप एक ही दिशा की ओर से न मिलें। कारण, पौदा उसी ओर को झुक जाता है, जिस ओर से उसे प्रकाश और उत्ताप मिलते रहते हैं, डालियाँ कम निकलती हैं, और पौदा ऊँचा बढ़ जाता है। कड़ी धूप से पौदे की रक्षा करने के लिये बाँस के चिपटों से छाया कर देनी चाहिए। ऐसा करने से पौदे को कुछ अंश में छाया भी मिल जाती है, और उसे चारों ओर से प्रकाश भी मिलता

रहता है। काफ़ी प्रकाश न मिलने के कारण पौदे कमज़ोर हो जाते हैं, और कभी-कभी मर भी जाते हैं।

गमलों में पौदे लगाना

शोभा और बरामदों में रखने के लिये बहुत-से पौदे गमलों में लगाए जाते हैं। कई पौदे भाँति-भाँति के तार और छेद-वाले मिट्टी के गमलों में बोकर बरामदे या पेड़ की डालियों पर शोभा के लिये लटकाए जाते हैं।

हिंदोस्तान में कुम्हार मिट्टी के गमले बनाते हैं। ये भिन्न-भिन्न आकार के होते हैं। उत्तम गमला वही है, जो बजाने पर घंटी के समान आवाज़ दे। सभी आकार के बहुत-से गमले ख़रीदकर किसी सुरक्षित स्थान में रख देना चाहिए। पुराने गमले, जो ख़ाली पड़े हों, साफ पानी से धोकर रख देने चाहिए। अक्सर देखा गया है कि माली आदि बाग़ के नौकर गमलों को बिना साफ़ किए ही धूप और बरसात में बाहर किसी पेड़ के नीचे पड़े रहने देते हैं; किंतु ऐसा करने से गमले ख़राब हो जाते हैं, और तब मिट्टी भरकर उठाते ही टूट जाते हैं। इसलिये बाग़ के मालिक का कर्तव्य है कि वह गमलों को साफ़ धुलवाकर किसी कमरे में यत्न से रखवा दे।

गमले भरने का मौसम—गमले भरने का मौसम जान लेना प्रत्येक व्यक्ति के लिये अनिवार्य रूप से आवश्यक है। कारण, इस बात के न जानने के कारण लोग चाहे जिस

मौसम में गमले भर देते हैं। फल यह होता है कि पौदे मर जाते हैं।

शीत-प्रधान देशों के पौदों की बाढ़ शीत-काल में ही होती है। इसलिये ऐसे पौदे शीत-काल में (अर्थात् अगहन के लग-भग) ही गमलों में भरे जाने चाहिए। भारतवर्ष-जैसे गरम देशों के पौदे फागुन-चैत के क़रीब या आषाढ़ में, बरसात शुरू होने पर, गमलों में भरे जाने चाहिए। जब तक एक गमला जड़ों से भर न जाय, पौदा दूसरे गमले में कदापि न बदला जाना चाहिए।

गमले भरने ती तरकीब—एक गमले का पौदा दूसरे गमले में इस ग़रज़ से बदला जाता है कि उसे नई मिट्टी मिल सके। यदि पौदा गमले से सावधानी के साथ निकाला जाय, तो उसे किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचती, और तब वह जल्दी बढ़ने लगता है। बहुत-से पौदे ज़मीन से खोदकर गमलों में लगाए जाते हैं। परंतु यह काम बड़ी सावधानी से किया जाना चाहिए। कारण, खोदने से पौदों की जड़ों को क्षति पहुँचे विना नहीं रहती, जिससे पौदे की बाढ़ में रुकावट पहुँचत है। और, यदि पौदे लगाते समय सावधानी न रक्खी गई, तो कभी-कभी पौदे सूख जाते हैं। इसलिये पौदों की रक्षा का सर्वो-त्तम उपाय यही है कि पौदे लगाने के बाद दिन-भर तो गमले किसी अँधेरे स्थान में और रात को खुले और हवादार स्थान में रख दिए जाया करें। ऐसा करने से चार-पाँच दिन

के अंदर ही पौदा अपनी पहले की अवस्था प्राप्त कर लेगा।

बहुत-से पौदे बाहरी स्थानों से मँगवाए जाते हैं। भेजनेवाले जड़ों को मिट्टी के गोले में लपेटकर भेजते हैं। हमने देखा है कि बहुत लोग इस मिट्टी के गोले को ज्यों-का-त्यों ज़मीन् में गाड़ देते हैं। परंतु ऐसा काम ठीक नहीं। कारण, जड़ें एक लंबे समय तक इस गोले से बाहर नहीं निकल पातीं। फल यह होता है कि भोजन न मिलने के कारण पौदा सूख जाता है। इसलिये यह ज़रूरी है कि बोने के पहले जड़ों पर की मिट्टी अलग कर दी जाय। हाथ से मिट्टी निकालने से पतली जड़ों के टूट जाने का डर रहता है। मिट्टी अलग करने की सहल तरकीब तो यह है कि मिट्टी का गोला किसी पानी भरे हुए बरतन में रख दिया जाय। पानी से मिट्टी गीली होजायगी, और तब पौदे को धीरे-धीरे हिलाने से मिट्टी आप-ही-आप अलग हो जायगी। दो-तीन बार साफ़ पानी में जड़ों को धोकर शीघ्र ही गमले या ज़मीन में लगा देना चाहिए। जड़ें धोने के बाद पौदा लगाने में एक मिनट की देर करना भी हानिकारक है। जड़ें गढ़े या गमले में चारों ओर फैला दी जायँ, और तब ऊपर मिट्टी डाल दी जाय। जड़ों के आस-पास की मिट्टी कुछ दबा दी जाय, और तब ख़ूब पानी दे दिया जाय। पानी देने के बाद गमले को किसी अँधेरे स्थान में रख देना चाहिए। गमला रात को ही खुली हवा में रक्खा जाना चाहिए। यह

क्रिया तब तक जारी रक्खी जाय, जब तक पौदे में प्रकाश सहने की शक्ति न आ जाय।

गमले में पौदा रखने के पहले मिट्टी भरना आवश्यक है। हरएक गमले की तली में ज़रूरत से ज्यादा पानी के निकल जाने के लिये, एक छेद होना चाहिए। गमला साफ़ पानी से धो डाला जाय, और तब छेद पर ईंट, मिट्टी के बरतन या खपरैल के टुकड़े रख दिए जायँ। ये टुकड़े चिपटे न हों। चिपटे टुकड़े रखने से थोड़े दिन बाद बीच की जगह में मिट्टी जम जाती है, जिससे छेद बंद हो जाता है। ईंट, कवेलू आदि के टुकड़ों पर घास, सूखे पत्ते, काँजी, सुर्खी, या नारियल का कत्था (नारियल पर के रेशे) डाल दिया जाय। घास-पत्ते आदि इसलिये रक्खे जाते हैं कि मिट्टी बरतनों के टुकड़े आदि में घुसकर छेद न बंद कर सके। चिकनी मिट्टी गमलों में कदापि न भरी जानी चाहिए। भुरभुरी मिट्टी का भरा जाना ही उत्तम है। गमलों में मिट्टी के बजाय नीचे लिखा हुआ मिश्रण भरा जाय, तो अच्छा है।

एक भाग बाग़ की उत्तम मिट्टी, ½ भाग गोबर की पकी हुई या पत्तों की खाद, और कुछ रेत मिलाकर मिश्रण तैयार कर लिया जाय, यही मिश्रण गमले और बक्स आदि में भरा जाना चाहिए।

गमले में ईंट, कवेलू आदि के टुकड़े और घास रख देने के बाद चार-पाँच अंगुल मोटी मिट्टी की तह डाल दी जाय, और

तब पुराने गमले में से पौदा निकाला जाय। मध्यमा और कनिष्ठिका उँगलियों के बीच में पौदे के तने को पकड़कर गमले को दाहने हाथ पर औंधा कर दो, और तब गमले का किनारा किसी कठिन पदार्थ पर धीरे-धीरे पटको। ऐसा करने से गमले की मिट्टी का गोला हाथ पर आ जायगा। बाएँ हाथ से पुराना गमला अलग रख दो। जड़ों पर लगी हुई मिट्टी को अलग करने के लिये मिट्टी के गोले को पानी में रख दो। गरमी के मौसम में ठंडे पानी का उपयोग किया जाय, तो कोई हर्ज नहीं। परंतु शीतकाल में गुनगुने (कुछ गरम) पानी का उपयोग किया जाना चाहिए। जड़ों पर से मिट्टी साफ़ धो डालने पर पौदा नए गमले के ठीक बीच में रक्खा जाय, और तब जड़े चारों ओर फैलाकर गमले में मिट्टी भर दी जाय। मिट्टी भरते समय बार-बार गमले को हिलाते जाना चाहिए, और एक इंच गमला ख़ाली रह जाने पर मिट्टी ख़ूब दबा देनी चाहिए। बाद में मिट्टी पानी से ख़ूब तर कर दी जानी चाहिए। सब काम ख़त्म हो जाने पर गमला उठाकर छाँहदार जगह में रख दिया जाय। जब तक पौदे की बाढ़ शुरू न हो, तब तक गमला धूप में कदापि न रक्खा जाना चाहिए।

यदि एक-आध गमले का पौदा रोगी देख पड़े, तो चट गमला बदल देना चाहिए। ज्यादा धूप, ज्यादा छाया, पानी की कमी, या ज़रूरत से ज्यादा पानी से भी पौदा रोगी हो

जाता है। इसलिये गमला बदलने के पहले इन बातों पर ज़रूर ध्यान दिया जाना चाहिए। परंतु यह बात सदा ध्यान में रखनी चाहिए कि नए गमले और नई मिट्टी मिल जाने पर पौदा शीघ्र ही पूर्वस्थिति प्राप्त कर लेता है।

गमले भरने के संबंध की आवश्यक सूचनाएँ—

१—हरएक जाति के पौदों के गमले भरने के संबंध में तिथि या महीना निश्चित नहीं किया जा सकता।

२—बाढ़ शुरू होते ही पौदे गमले में लगाए जायँ, या गमले बदले जायँ।

३—बाढ़ शुरू होने के पहले गमले भरना या गमले बदलना हानिकारक है। गमला भरने के बाद ही पौदे को खूब पानी दिया जाता है। परंतु बाढ़ रुकी रहने से पौदा पानी को सोख नहीं सकता, जिससे जड़ें सड़ जाती हैं, और यही कारण है कि बाढ़ शुरू होने के पहले गमलों में लगाए हुए पौदे मर जाते हैं। बाढ़ शुरू होने के बाद गमला भरने से पौदा पानी सोख सकेगा। तब यह पानी पत्तों से होकर हवा में मिल जायगा। इसलिये ज्यादा पानी देने से भी पौदे को हानि नहीं पहुँचेगी।

४—झाँकरा-जड़वाले पौदे बड़ी सावधानी से बदले जायँ।

५—ज़मीन से खोदे हुए पौदों की कई जड़ें टूट जाती हैं। ऐसी जड़ों को, टूटे हुए भाग से कुछ ऊपर को, तेज़ चाक़ू से काटकर ही गमले में लगाना चाहिए।

६—शीत-प्रधान देशों के पौदों के गमले शीत-काल में ही

बदले जायँ ; क्योंकि इसी मौसम में उनकी बाढ़ शुरू होती है। गर्म देशों के पौदे फागुन, चैत व आषाढ़ के प्रारंभ में ही दूसरे गमलों में लगाए जायँ।

गमलों को पानी देना—उद्यान-विद्या में पौदों को पानी देने का कार्य अत्यंत महत्त्व का है। प्रत्येक पानी देने-वाले व्यक्ति को स्मरण रखना चाहिए कि पौदे को उतना ही पानी दिया जाय, जितना कि उसे आवश्यक हो। यदि कम पानी दिया जायगा, तो पौदे की बाढ़ रुक जायगी, और तब काफ़ी ख़ूराक न मिलने के कारण पौदा कुछ दिन बाद मर जायगा। यदि ज़रूरत से ज्यादा पानी दिया जायगा, तो जड़ सड़ जाने के कारण पौदा सूख जायगा। अब यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि पौदे को कितना पानी दिया जाना चाहिए? पानी की मिक़दार पौदे की बाढ़ पर निर्भर है। जिस पौदे की बाढ़ ज़ोरों से हो रही हो, उसे भरपूर पानी दिया जाना चाहिए। परंतु जिस पौदे की बाढ़ रुकी हुई हो, उसे उतना ही पानी दिया जाना चाहिए, जितना कि उसे जीवित रहने के लिये आवश्यक हो।

जिन प्रांतों में पानी ज्यादा बरसता है, उन प्रांतों में, बरसात में पौदों को—खासकर मौसमी और शीत-प्रधान देशों के पौदों को—हानि पहुँचने की संभावना रहती है। इसलिये ऐसे पौदों के गमले या क्यारियों से ज्यादा पानी को निकालने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

बहुधा देखा जाता है कि गमलों के पौदों को लोटे, या मशक या अन्य किसी बरतन से पानी दिया जाता है। लोटे या मशक से पानी डालने से जड़ों के ऊपर की मिट्टी कट जाती है, जिससे वे खुल जाती हैं। जड़ें मिट्टी से बाहर निकल आने से पौदे को नुक़सान पहुँचता है। इसलिये महीन छेदवाले 'हज़ारे' से ही गमलों को पानी दिया जाना चाहिए। यदि गमले में पत्थर या खपरैल का टुकड़ा रखकर उस पर लोटे या मशक से पानी डाला जाय, तो जड़ों के खुल जाने का डर नहीं रहता।

पौदों के पत्तों पर धूल जम जाने से उनके छेद बंद हो जाते हैं। इससे पौदों को बहुत हानि पहुँचती है। क्योंकि पौदा इन्हीं छोटे-छोटे छेदों द्वारा श्वासोच्छ्वास की क्रिया करता है। कहें तो कह सकते हैं कि पत्ता ही पौदे की नाक है। पत्तों के सूक्ष्म छेदों द्वारा पौदा हवा से आहार ग्रहण करता है। धूल से पत्तोंके सूक्ष्म छिद्र बंद होजाने पर पौदे का दम घुटने लगता है, और ख़ूराक भी कम मिलने लगती है, जिससे वह सूख जाता है। इसलिये, पौदों को नीरोग और हृष्ट-पुष्ट बनाए रखने के लिये, हर अठवाड़े पत्तों का साफ़ पानी से धोया जाना बहुत ज़रूरी है। अनुभव से मालूम हुआ है कि पत्तों को साबुन के पानी से धोना अधिक लाभदायक है।

पौदे लगाना

पौदे को जन्म-स्थान से हटाकर स्थायी स्थान में लगाने या गमले से निकालकर ज़मीन में लगाने की क्रिया को ही पौदा

लगाना कहते हैं। हमारे निज के मत से बरसात के शुरू में या शीत-काल में ही पौदे लगाने की क्रिया का किया जाना लाभ-दायकहै। कुछ जातियों के, कड़ी प्रकृति के, पौदे साल के किसी भी मौसम में ज़मीन में लगाए जा सकते हैं। तथापि उक्त ऋतुओं में ही पौदे लगाना अच्छा है।

पहले लिख आए हैं कि शीत-प्रधान देशों के पौदे शीत-काल में लगाए जायँ, और गरम देशों के पौदे फागुन, चैत में या बरसात के शुरू होने पर। जिन प्रांतों में ज्यादा पानी बरसता हो, उन प्रांतों में बरसात शुरू होते ही पौदा लगाना हानि-कारक है। कारण, ज्यादा पानी से पेड़ मर जाते हैं। अतएव इन प्रदेशों में पौदे शीत-काल में—अर्थात् बरसात ख़तम होने पर—ही लगाए जाने चाहिए।

ज़मीन तैयार करना—कुछ लोग खेतों को बिना जोते ही रहने देते हैं, और उन्हीं में गढ़े खोदकर पौदे लगाते हैं। फल यह होता है कि कास, दूब आदि घास-पात की जड़ें पौदे की ख़ूराक और ज़मीन की तरी ले लेती हैं, जिससे काफ़ी ख़ूराक न मिलने के कारण पौदा रोगी होकर मर जाता है। इसलिये हरएक आदमी को यह बात सदा ध्यान में रखनी चाहिए कि जिन खेतों में फल या फूल के पेड़ लगाए जानेवाले हों, उनमें बरसात ख़तम होने पर ख़ूब जुताई करना ज़रूरी है। पौदे लगाने के ठीक एक साल पहले से जुताई शुरू होनी चाहिए। गरमी के मौसम में पानी बरस जाय, तो खेतों में

गहरी जुताई की जानी चाहिए। यदि खेतों में कास ज्यादा हों, तो उसे खोदकर निकलवा डालना चाहिए। खेत अच्छी तरह तैयार हो जाने पर छोटे पौदे के लिये दो फ़ीट लंबे, दो फ़ीट चौड़े और दो फ़ीट गहरे गढ़े खोदे जायँ। मध्यम आकार पौदों के लिये गढ़ों की लंबाई-चौड़ाई और गहराई तीन फ़ीट रक्खी जाय। परंतु बड़े पेड़ों के लिये गढ़े चार फ़ीट लंबे, चार फीट चौड़े और चार फ़ीट गहरे किए जाने चाहिए। गढ़े खोदते समय इस बात पर ध्यान रक्खा जाना चाहिए कि ऊपर की एक फ़ुट गहराई तक की मिट्टी एक बाजू पर रक्खी जाय; और नीचे की मिट्टी दूसरे बाजू पर।

पौदे स्थानांतरित करना—पौदों को स्थानांतरित करते समय इस बात पर ध्यान रक्खा जाना चाहिए कि जब तक पौदे की जड़ें पानी सोखना शुरू न करें, तब तक ऐसी तजवीज़ की जाय कि उसके पत्तों द्वारा बहुत कम पानी भाप बनकर उड़ सके। और, इस उद्देश की पूर्ति के लिये, जिन पेड़ों के पत्ते गिर जाते हों, उन्हें पतझाड़ के मौसम में ही स्थानांतरित करना चाहिए। धूप और रूखी हवा के दिनों में पत्तों से ज्यादा पानी भाप बनकर उड़ता है। इसलिये, जहाँ तक हो सके, बदली के दिनों में ही पौदे एक स्थान से दूसरे स्थान पर लगाए जाने चाहिए। यदि हवा में तरी न हो, और सूर्य चमक रहा हो, तो स्थानांतरित करने के बाद पौदे पर छाया कर दी जानी चाहिए, और कभी-कभी पौदे पर पानी भी छिड़कते रहना चाहिए।

पौदे जमीन से बड़ी सावधानी से खोदे जाने चाहिए। जहाँ तक हो सके, जड़ों को बिलकुल चोट न पहुँचने देना चाहिए। गढ़े और गमले में पौदे लगाने के संबंध में पहले लिखा जा चुका है।

गढ़े में पौदा लगाते समय इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाय कि खाद जड़ों पर न पड़ने पावे। पहले जड़ें मीहन मिट्टी से ढक दी जायँ, और तब उस मिट्टी पर खाद डाली जाय। पौदे को जमीन से उखाड़ने के पहले सब कच्ची और छोटी डालियाँ काटकर फेक दी जायँ। कारण, स्थानांतरित करने पर वे कदापि जिंदा न रह सकेंगी। इन डालियों के काट डालने से पौदे के पत्तों की संख्या भी कम हो जायगी। जिससे भाप बनकर पत्तों के छेदों से उड़नेवाले पानी की मिक़दार भी घट जायगी।

मज़दूर लोग तने के बहुत पास से ही पौदे को खोदते हैं; जिससे बहुत सी जड़ें कट जाती हैं। फल यह होता है कि दूसरे स्थान पर लगाने पर पौदा कमज़ोर हो जाता है, और कभी-कभी मर भी जाता है। इसलिये बाग़ के माली या मालिक को चाहिए कि वह सब लंबी जड़ें खोदकर ले ले।

पौदा इस ढंग से हटाया जाना चाहिए कि जड़ों को किसी प्रकार की चोट न पहुँचे। कभी-कभी कई अनिवार्य कारणों से जड़ों को चोट पहुँचे विना नहीं रहती, और यदि पौदा एकदम वहाँ से हटाकर स्थायी स्थान पर लगा दिया जाय, तो उसके

मरने की नौबत आ जाने की संभावना रहती है। ऐसी दशा में अच्छा तो यह होगा कि ज़मीन से निकालने के बाद पौदा काफ़ी बड़े गमले में लगा दिया जाय, और तब ऊपर लिखे अनुसार ख़ूब पानी देकर कुछ दिन तक रात को खुली हवा में रक्खा जाया करे, और दिन-भर किसी अँधेरे स्थान में। इसके बाद थोड़े दिनों तक पौदा आधी धूप और आधी छाया में रक्खा जाय, और तब स्थायी स्थान में लगा दिया जाय।

स्थायी स्थान पर लगाने के पहले पौदे की कुछ जड़ें और डालियाँ छाँट डालना बहुत ज़रूरी है। झाँकरा जड़ें और मूसला जड़ काटकर कुछ छोटी कर दी जायँ, और आधे से भी ज़्यादा पत्ते तोड़ डाले जायँ। यदि पेड़ के पत्ते ज़्यादा बड़े हों, तो आधे-आधे पत्ते काट डालना चाहिए।

छँटाई (pruning)

उत्तम जाति के फल या फूल उत्पन्न करने के उद्देश से ही पेड़ों की छँटाई की जाती है। कभी-कभी ख़ूबसूरती के लिये पौदे को एक विशेष प्रकार का आकार देने के इरादे से भी छँटाई की शरण ली जाती है। छँटाई के संबंध में हरएक पेड़ के वर्णन के साथ विचार किया गया है। यहाँ छँटाई से संबंध रखनेवाले कुछ साधारण नियमों पर ही विचार किया जायगा।

डालियाँ काटने का काम तभी किया जाना चाहिए, जब पौदे की बाढ़ रुकी हुई हो, या फूल और फलों की बाढ़ ख़तम हो जाने पर। परंतु बाढ़ शुरू होने के पहले छँटाई कदापि न की

जानी चाहिए। कारण, ऐसा करने से पौदे की बाढ़ को भारी धक्का पहुँचता है। बाढ़ के मौसम के पहले छँटाई करने से घाव से रस बहने लगता है, जिससे पौदा कमज़ोर हो जाता है।

कभी-कभी डालियों की बढ़नेवाली फुनगियाँ काट दी जाती हैं। यह काम तभी किया जाना चाहिए, जब पौदे की खूब बाढ़ हो रही हो। गर्भाधान हो जाने पर फूलों के पासवाली फुनगियाँ काट डालने से फल अच्छे और बड़े आते हैं। कारण, शाखाओं की बाढ़ रुक जाने से पौदे की शक्ति फलों को बड़ा बनाने में काम आ जाती है।

छँटाई के लिये काम में लाए जानेवाले औज़ारों की धार खूब पैनी होनी चाहिए। कारण, तेज़ औज़ारों से बना हुआ घाव जल्दी भर जाता है। भोथरे और कम तेज़ धारवाले औज़ारों का उपयोग करने से घाव के कुछ अंकुर या अंग (Tissue) मर जाते हैं, जिससे घाव जल्दी नहीं भरता। फल यह होता है कि फंगस-रोग घाव में अपना अड्डा जमाकर अपना काम शुरू कर देते हैं। फंगस-रोगों से पेड़ को बचाए रखने का एक-मात्र उपाय यह है कि वृक्ष के घावों पर 'डामर' पोत दिया जाय। हमारे मत से पानी में गोबर घोलकर लगाने से भी काम चल सकता है।

कुछ आवश्यक औज़ार

१ रास्तों और लॉन पर फिराने के लिये छोटा पत्थर का बेलन—लॉन पर कभी-कभी बेलन फिराने से दूब या

हरियाली ऊँची नहीं बढ़ती, और पत्ते घने हो जाते हैं।

२ दूब काटने की मशीन—लॉन की दूब या घास को काटने के लिये इस मशीन का उपयोग किया जाता है।

३ हल—साधारण किसान लकड़ी के हलों का ही उपयोग करतें हैं; परंतु लकड़ी के हलों की अपेक्षा एक जोड़ी बैल से चलाए जानेवाले लोहे के हल बहुत अच्छे है। इनसे थोड़े समय में ज्यादा काम होता है, और बार-बार बढ़ई या लुहार की शरण में नहीं जाना पड़ता। मेस्टन-हल, मानसून-हल या किर्लोस्कर-बंधु (किर्लोस्कर वाड़ी, सतारा) का लोहे का हल, ये हल अच्छे हैं।

४ पानी के बरतन—भारतवर्ष में मिटटी के घड़े ही इसके लिये उत्तम हैं। भिन्न-भिन्न आकार के मिट्टी के घड़े ख़रीदकर रख लिए जाने चाहिए।

५ फावड़े - मिट्टी भरने, घास छीलने आदि के काम आते हैं।

६ खुरपी—गमलों और तख्तों में उगी हुई घास छीलने के लिये।

७ रेक या दँताली—तख्तों या क्यारियों की मिट्टी बराबर करने के लिये।

८ प्रुनिंग शीयर—क्यारियों और रास्तों के किनारे पर लगाए हुए ड्युरेंटा, मेहँदी आदि काटने के लिये।

९ प्रुनिंग सॉ—यह एक प्रकार की आरी है। जिससे वृक्षों और छोटे पौदों की शाखाएँ काटी जाती हैं।

१० दराँता या हँसिया—घास काटने के लिये।

११ कुदाली और गेंदी—मिट्टी खोदने लिये।

१२ पंप—पत्ते धोने और पौदों पर दवा छिड़कने के लिये।

१३ काँटेदार कुदार (फ़ोर्क)—क्यारियों की मि्ी ढीली करने और कंद खोदने में इसका उपयोग किया जाता है।

१४ कुल्हाड़ी—

१५ बीज रखने के लिये कनस्टर, काँच की शीशियाँ (भिन्न-भिन्न आकार की) और लोहे की कोठियाँ।

१६ डायरी—रोज़ का काम लिखने और बीज बोने, क़लम लगाने आदि की तारीख़ वग़ैरह याद रखने योग्य बातें लिखने के लिये।

१७ ग्रॉफ़्टिंग नाइफ़—यह एक प्रकार का चाक़ू है, जो पौदों की क़लम करने और पेवंद बाँधने के काम आता है।

१८ बडिंग नाइफ़—यह भी एक प्रकार का चाक़ू है, जो पौदों पर चश्मे बाँधने के काम आता है।

१९ टोकनियाँ, लोहे के छोटे धमेले।

२० ज़रीब—ज़मीन नापने के लिये।

२१ तराज़ू काँटा, बाँट आदि।

२२ स्पिरिट लेवल—पानी की नालियों की ढाल देखने के लिये। इससे ज़मीन की ढाल चट मालूम हो जाती है।

२३ हज़ारा—गमलों को पानी देने के लिये इसकी नली के सिरे पर एक छाबा लगा रहता है, जिसमें महीन छेद होते हैं।

२४ बालटियाँ—पानी भरने के लिये।

२५ चलनियाँ—भिन्न-भिन्न आकार के छेदवाली।

२६ कुदाल रस्सियाँ, चरसा—आदि अन्य आवश्यक सामान।

२७ हाथगाड़ी—पौदों के गमले इधर-उधर ले जाने के लिये।

नोट—यह सूची पूर्ण नहीं है। इस सूची में केवल उन्हीं चीज़ों के नाम दिए गए हैं, जो साधारण बाग़ों के लिये उपयुक्त हैं। बाग़ के आकार आदि के अनुसार इस सूची में भी परिवर्तन का होना अनिवार्य है।

वनस्पति-संवर्द्धन *

पहले लिखा जा चुका है कि पौदे दो तरह से पैदा किए जा सकते है—१ बीज से, और २. क़लम से। बीज बोकर पौदे तैयार करने की रीति पर पहले विचार कर आए हैं।

---

* इस अंश में वनस्पति संवर्द्धन पर संक्षेप में विचार किया गया है। एक स्वतंत्र लेखमाला में 'वनस्पति-संवर्द्धन' पर सविस्तार विवेचन किया जायगा।—लेखक

अब यहाँ पौदे के भिन्न-भिन्न भागों के मेल और क़लम लगाकर पौदे तैयार करने की रीति पर विचार किया जायगा।

क़लम करने का उद्देश—दो भिन्न-भिन्न गुणवाले सजातीय वनस्पतियों के गुणों का एकीकरण करने के उद्देश से ही क़लमें लगाई जाती हैं। उन्हीं पौदों का 'मेल' किया जा सकता है, जो सजातीय हों, और जिनका स्वभाव एक-सा हो। उत्तम फल की उत्पत्ति के लिये हमारे धर्म-शास्त्रों ने मानव प्राणी को नियमों में बाँध दिया है। उत्तम-गुण-युत, नीरोग और बुद्धिमान् स्त्री-पुरुषों के संयोग के संतति सर्व-गुण-संपन्न होती हैं। यही नियम वनस्पति के लिये भी लागू होता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्तम गुणवाले सजातीय पौदों का मेल करने से पैदा हुए पौदे में माता और पिता के अच्छे गुण आ जाते है।

पाश्चात्य देशों में वनस्पति-शास्त्र ने ग़ज़ब की उन्नति की है। वहाँ अनेकों विद्वान् नवीन आविष्कार में अपना जीवन उत्सर्ग कर देते हैं। अमेरिका में कृषि-शास्त्र और उद्यान-शास्त्र ने बहुत बड़ी उन्नति की है। फलों की खेती में तो संसार में अमेरिका की (विशेषकर केलीफोर्निया की) बराबरी करने-वाला शायद ही कोई देश हो।

सब प्रकार के नाज और कुछ फलवाले पेड़ों के बीज ही बोने के काम में लाए जाते हैं। बीज से तैयार किए हुए पौदे में फल देर से लगते हैं। पर क़लम या पेबंद से तैयार किए

हुए पौदे में फल-फूल जल्दी आ जाते हैं। मगर ये पौदे ज्यादा दिन तक ज़िंदा नहीं रहते।

शाखा, पत्ता या जड़ काटकर लगाकर या दो पौदों के भागों को मिलाकर पौदे तैयार किए जाते हैं। जिस पौदे में किसी सजातीय दूसरे पौदे के किसी भाग का सम्मिलन किया जाता है, उसे वनस्पतिशास्त्र में मादा (Stock) कहते हैं। और, जिस पौदे का मेल किया जाता है, उसे नर (Scion) कहते हैं। मादा पौदा नीरोग, ज़ोरदार और पुष्ट होना चाहिए, और ऐसे ही पौदे मेल के लिये उपयुक्त हैं। परंतु यह स्मरण रहे कि द्विदल-जाति (आम, नींबू, नारंगी आदि) के पौदों की ही क़लमें लगाई जा सकती हैं। नारियल, सुपारी, ताड़ आदि के समान एक दलवाले पौदे इस काम के लिये अनुपयुक्त हैं।

क़लम

क़लमें अनेक प्रकार से लगाई जाती हैं। परतु उनमें दो रीतियाँ मुख्य हैं—एक तो किसी वृक्ष की शाखा या पत्ता काटकर बोते हैं, जिससे पौदा बन जाता है; और दूसरी यह कि दो सजातीय पौदों की शाखाओं या चश्मों (eye-buds) का संयोग कर पौदे तैयार करना।

पहले वर्ग की क़लमें लगाना सरल है; परंतु दूसरे प्रकार की क़लमें लगाने की कई रीतियाँ होने के कारण वह काम ज़रा कठिन है। बिना हाथ जमे काम नहीं चल सकता।

डाली लगाना—किसी वृक्ष की शाखा काटकर या तोड़कर लगाने की क्रिया को ही 'डाली लगाना' कहते हैं। क़लम करने की यह अत्यंत सरल रीति है। जो छोटे पेड़ बहुत जल्दी बढ़ते हैं, और जिनका काष्ठ कठिन होता है, उनकी डाली लगाने से उत्तम 'रोपे' तैयार होते हैं। यहाँ यह बात स्मरण रखनी चाँहिए कि पौदे की जो डालियाँ ज़मीन की तरफ़ झुकी रहती हैं, उनमें जड़ें जल्दी फूट आती हैं। इसलिये ऐसी ही डालियाँ 'डाली लगाने' के लिये चुनी जानी चाहिए।

डाली लगाने का समय—जिस मौसम में पौदों का रसाभिसरण ज़ोरों से हो रहा हो, अर्थात् जिस मौसम में पौदों की बाढ़ ज़ोरों से हो रही हो, वही मौसम डाली लगाने के लिये सर्वोत्तम है। कारण, इस समय शाखा में जड़ें जल्दी निकल आती हैं। एक वर्ष से कम उम्र की शाखा लगाने से जड़ें नहीं फूटतीं; अतएव वही डाली काटकर ज़मीन में लगानी चाहिए, जिसकी उम्र एक वर्ष या इससे अधिक हो। भिन्न-भिन्न जाति के पौदों की बाढ़ भिन्न-भिन्न समय में शुरू होती है। तथापि साधारणतः सब प्रकार के पौदों का रसाभिसरण होली के लगभग शुरू होता है, और इसके बाद बरसात से अगहन तक रहता है। शीत-प्रधान देशों के पौदों की क़लमें शीत-काल में ही लगाई जानी चाहिए।

शाखाओं पर आँखें (buds) होती हैं। इन्हीं में जड़ें छोड़ने की शक्ति रहती है। शाखा की संधि के स्थान से भी जड़ें निक-

लती हैं। अतएव डाली आँख या संधि से कुछ नीचे की ओर से ही काटी जानी चाहिए। काटी हुई शाखा के तीन आँखें ज़रूर होनी चाहिए। परंतु काटते समय शाखा को किसी प्रकार की चोट न पहुँचने देनी चाहिए। कुछ लोग शाखा को खींचकर तोड़ लेते हैं। तोड़ने से डाली संधि के स्थान से टूट जाती है, और उसके साथ कुछ छाल भी चली आती है। इसे भी लगाने के काम में लाते हैं। डाली लगाते समय अक्सर सब पत्ते तोड़ लिए जाते हैं, किंतु ऐसा करने से कभी-कभी शाखा जड़ नहीं पकड़ती। कारण, जड़ फूटने तक शाखा के रक्षण का भार पत्तों के ज़िम्मे रहता है। शाखा को जीवित रखने के लिये जिस अन्नांश की ज़रूरत होती है, वह उसे पत्तों द्वारा ही प्राप्त होता है। जड़ें छोड़ने में शाखा को पत्तों से बड़ी मदद मिलती है। इसलिये कुछ पत्ते शाखा पर ज़रूर रहने देना चाहिए। यदि पत्ते बड़े हों, तो आधे काट डालना चाहिए।

दाब-क़लम (layering)—ऊपर पेड़ की शाखा को काट-कर लगाने की तरकीब बताई गई है। परंतु 'दाब-क़लम' में डाली को पेड़ से अलग करने की ज़रूरत नहीं पड़ती। डाली को पेड़ पर रखकर ही क़लम लगाई जाती है। 'दाब-क़लम' कई प्रकार से लगाई जाती है। परंतु उनके लगाने की तरकीब में बहुत थोड़ा अंतर है।

पहली तरकीब—जो डाली ज़ोरदार, पकी और ज़मीन की तरफ़ झुकी हुई हो, उसे ही इस काम के लिये चुनना चाहिए।

डाली चुनने पर दो आँखों के बीच की क़रीब इंच-सवा इंच छाल

दाब-क़लम (१)

तेज़ चाक़ू से निकालकर उसे कुछ झुकाकर ज़मीन के अंदर तीन-चार इंच गहरी गाड़ देनी चाहिए। जिस भाग की छाल छीली गई हो, उसे ही मिट्टी के अंदर गाड़कर ऊपर पत्थर रख देना चाहिए, जिसमें वह उखड़ने न पावे। जिस जगह डाली गाड़ी गई हो, वहाँ की मिट्टी सदा गीली रखनी चाहिए। ज़मीन में गाड़ी हुई डाली का पत्तों को बाज़ू की ज़मीन के पास का भाग मोटा नज़र आने पर समझ लेना चाहिए कि जड़ें निकल आई हैं। जड़ें निकल आने के बाद इस शाखा को वृक्ष से अलग करने के लिये सफ़ाई के साथ चाक़ू से काट डालना चाहिए। काटते समय इस बात पर ध्यान रखना चाहिए कि डाली के ज़मीन के अंदर गड़े हुए भाग को झटका न लगे। पेड़ से अलग करने के बाद इसे खोदकर गमले या अन्य स्थान पर लगा देना

चाहिए। रोपा लगाने के बाद कुछ रोज़ तक उसे खूब पानी देते रहना और धूप के समय उस पर कुछ छाया भी कर देनी चाहिए।

दूसरी तरकीब—कुछ लोग शाखा की छाल नहीं निकालते; उसे बीच से चीरकर ऊपर लिखी हुई रीति से ज़मीन में गाड़ देते हैं, और तब जड़ें निकल आने पर पेड़ से अलग कर दूसरी जगह लगा देते हैं।

दाब-कलम (२)

यदि शाखा बहुत ऊँची हो, और ज़मीन के अंदर गाड़ने के लिये झुकाई न जा सके, तो जो भाग ज़मीन के अंदर गाड़ना हो, उसे छीलकर या चीरकर तैयार कर लेना चाहिए, और तब गमले की एक बाजू तोड़कर उसमें उसे गाड़ देना चाहिए। जड़ें निकल आने पर शाखा को पेड़ से काटकर दूसरी जगह लगा देना चाहिए।

तीसरी तरकीब—कहीं डाली को न तो छीलते ही हैं, और न चीरते ही। उसे तोड़कर ही ज़मीन में गाड़ देते हैं। तोड़ने
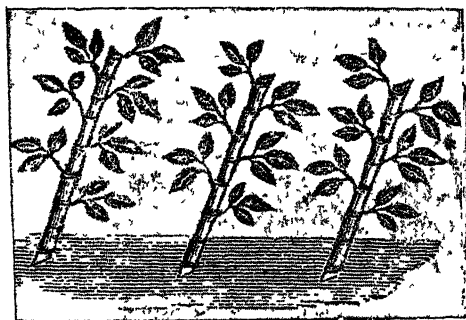
क़लमें ज़मीन में लगाई गई हैं

से शाखा का आधा भाग तो टूट जाता है, और आधा शाखा से जुड़ा रहता है। जड़ें छोड़नेपर इसे भी पहले की तरह काटकर अन्यत्र लगा देते हैं।

गुट्टी—पेड़ की डाली को ज़मीन में या गमले में न गाड़कर जड़ें पैदा करने की क्रिया को 'गुट्टी' कहते हैं।

डाली की आँख के नीचे से १½ इंच तक की छाल छील डाली जाय। छाल निकाले हुए स्थान पर तब मिट्टी और गोबर के मिश्रण का एक गोला लपेटकर उस पर टाट का टुकड़ा बाँध दो। इस मिट्टी के गोले को सदा गीला बनाए रखना ज़रूरी है। इसलिये एक मिट्टी के बरतन की तली में छेद कर, उसमें एक कपड़े की चिंदी पिरोकर, उसे मिट्टी के गोले पर लपेट देना

१—छाल छीलकर तैयार की हुई शाखा

२—मिट्टी लगाकर थैले का टुकड़ा बाँधी हुई शाखा

३—मिट्टी को गीली बनाए रखने के लिये 'ब' बरतन में पानी भरा गया है

अ—बरतन में लगाई हुई चिंदी

क— ,, ,, ,,

चाहिए। बरतन में पानी भर देने से पानी की बूँदें इस चिंदी के द्वारा एक-एक करके मिट्टी के गोले पर गिरती रहेंगी, जिससे वह सूखने न पावेगा। डेढ़-दो मास में डाली में जड़ें निकल आवेंगी। कभी-कभी इससे भी अधिक समय लगता है। जड़ों के सिरों के मिट्टी से बाहर निकल आने पर डाली को काटकर दूसरे स्थान पर लगा देना चाहिए।

ऊपर एक ही पेड़ की डाली की सहायता से 'रोपे' तैयार करने की रीतियों पर विचार किया गया है। अब आगे चलकर संकरीकरण पर विचार किया जायगा।

दो भिन्न-भिन्न पौदों के दो भागों के संयोग से पौदे तैयार करने की रीति को ही 'संकरीकरण' कहते हैं। इस रीति से द्विदल-जाति के पौदों का ही संयोग किया जा सकता है, एकदल-जाति के वनस्पति का नहीं। इसका कारण यह है कि जिस ऋतु में पौदों का रसाभिसरण ज़ोरों से होता है, अर्थात् उनकी बाढ़ ज़ोरों से होती रहती है, उस ऋतु में वृक्ष की छाल भीतरी काष्ठ से जल्दी अलग हो जाती है। कारण, उस ऋतु में छाल और काष्ठ के बीच में सूक्ष्म कोशों (Cambium) का स्तर तैयार होता रहता है। दो जाति के पौदों के विशेष भागों को एकत्र कर उन्हें हवा और पानी से बचाए रक्खें, तो उक्त सूक्ष्म कोशों का स्तर बनते समय उनका संयोग हो जाता है। परंतु इस प्रकार का संयोग सजातीय पौदों में ही होता है।

पौदों का रसाभिसरण जारी है या नहीं, इस बात को जानने की सरल तरकीब यह है कि चाक़ू से पेड़ की छाल को चीरकर उसे भीतरी काष्ठ से अलग करने की कोशिश करनी चाहिए। यदि छाल जल्दी अलग हो जाय, तो जान लेना चाहिए कि यही समय संकरीकरण के लिये उपयुक्त है।

चश्मे बाँधना—एक पेड़ की डाली से आँख निकालकर दूसरे पेड़ की छाल में बिठाने की क्रिया को ही 'चश्मा बाँधना' कहते हैं। इस क्रिया को करने के लिये विशेष प्रकार के चाक़ू की ज़रूरत पड़ती है, जिसका वर्णन पीछे कर आए हैं। चश्मा बाँधने के पहले देख लेना चाहिए कि इस समय चश्मा बाँधा जा सकता है या नहीं। इस बात का निश्चय कर लेने पर जिस वृक्ष पर चश्मा बाँधना हो, उसकी छाल में, आँख के कुछ नीचे, एक खड़ा चीरा दिया जाय। इस चीरे के ऊपर एक आड़ा
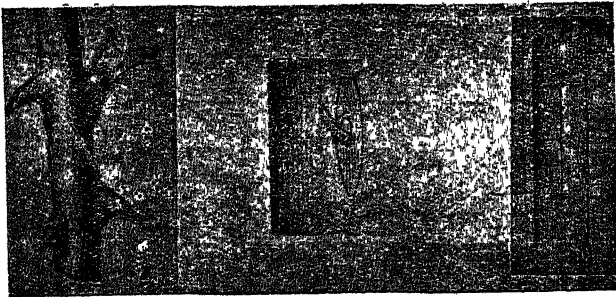
१—चश्मा निकालने के लिये चुनी हुई शाखा
२—तैयार किया हुआ चश्मा
३—चश्मा बिठाने के लिये शाखा में चीरा दिया गया है
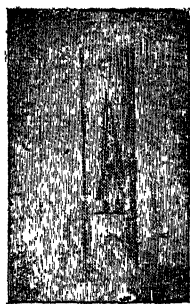
१—शाखा पर चश्मा बैठाया गया है

२—चश्मा बिठाने पर बंद बाँधा गया है

चीरा और दिया जाय। इसके बाद आँख निकाली जाय। डाली की एक अच्छी आँख चुनकर उससे एक इंच ऊपर से काष्ठ समेत दो इंच लंबी छाल निकाल ली जाय। इस छाल से काष्ठ बड़ी सावधानी से अलग कर दिया जाय। तब आँख के ऊपर और नीचे आध-आध इंच छाल रखकर शेष काट डाली जाय। यदि काष्ठ निकालते समय आँख में छेद हो गया, या अन्य किसी कारण से आँख ख़राब हो गई, तो सब मेहनत व्यर्थ चली जायगी। इसलिये ख़राब हुई आँख कदापि काम में न लानी चाहिए। आँख तैयार हो जाने पर चाकू के बेंट से छाल ऊपर उठाकर उसमें यह आँख बड़ी सावधानी से बिठा दी जाय। आँख बिठाने के बाद छाल कुछ दबा दी जाय, जिसमें वह आँख से चिपक जाय। आँख चीरे के मध्य

भाग में ही रक्खी जानी चाहिए। तब इस चीरे पर, नीचे से ऊपर की ओर, केले की छाल खूब मज़बूती से लपेट देनी चाहिए, जिसमें हवा और पानी भीतर न जा सके। बाँधते समय आँख ज़रूर खुली रहने देनी चाहिए। आँख के ऊपर एक पत्ता इस ढंग से बाँध देना चाहिए कि उस पर छाया रहे, पंद्रह-बीस दिन तक यदि आँख सतेज और हरी बनी रहे, तो समझ लेना चाहिए कि वह लग गई। यदि वह मर गई होगी, तो काली पड़ जायगी।

आँख से निकलनेवाली शाखा के नव-दस इंच बढ़ जाने पर मूल पौदे की अन्य सब शाखाएँ काट डाली जायँ। और, आँख से दो-तीन अंगुल ऊपर से पौदे का सब भाग, तीक्ष्ण धारवाली छुरी से, काट डाला जाय।

कहीं-कहीं मुख्य पौदे का तना ऊपर से काट डालने के बाद ही चश्मा बाँधने की प्रथा है। परंतु इससे नुक़सान यह होता है कि यदि आँख न लगी, तो पौदे का सब विस्तार व्यर्थ जाता है।

भारतवर्ष के अधिकांश माली छाल में खड़ा चीरा करके, तना झुकाकर, उसमें आँख बिठा देते हैं। तना छोड़ते ही छाल आँख की छाल पर मज़बूत जम जाती है। हमारे मत से यह रीति अच्छी है।

कुछ सूचनाएँ— १. चश्मा बाँधने की क्रिया सवेरे या शाम

को ही की जानी चाहिए। माली लोग बहुत करके शाम को ही चश्मा बाँधते हैं।

२. ज़ोरदार, नीरोग और पकी शाखा ही आँख के लिये चुनी जाय। वही शाखा चुनी जानी चाहिए, जिसमें एक बार फल लग चुके हों, और उसी पेड़ की शाखा चुनी जानी चाहिए, जिसके फल ज़्यादा मीठे, बड़े और सुडौल हों।

३. बरसात में आँखें जल्दी लगती हैं; किंतु बरसात के प्रारंभ में चश्मे बाँधना ज़्यादा फ़ायदेमंद है। शीत-काल में भी चश्मे बाँधे जा सकते हैं। परंतु उस समय यह देख लेना चाहिए कि चश्मे उन्हीं पेड़ों पर बाँधे जायँ, जिनकी बाढ़ जारी हो।

४. चश्मे से पत्ते निकल आने पर निचले भाग के ऊपर का बंद खोलकर कुछ ढीला बाँध देना चाहिए। मगर ऊपर के भाग का बंद कुछ रोज़ और वैसा ही रहने देना चाहिए। आँख लग जाने के क़रीब दो महीने बाद सब बंद निकाल डालने चाहिए।

५. चश्मा बाँधने के लिये डोरी या सुतली कदापि काम में न लाई जाय। इनसे वृक्ष की छाल कट जाती है।

दूसरी तरकीब—आँख ख़राब हो जाने के भय से आजकल आँख की छाल से लगा हुआ काष्ठ न निकालकर ही आँखें चढ़ा दी जाती हैं। यह रीति भी अच्छी है।

१ नर, २ मादा

भेंट-क़लम—दो पौदों की दो शाखाओं की छाल छील-कर उनका संयोग कर पौदे तैयार करने की रीति को 'भेंट-क़लम' कहते हैं। इस रीति से एक ही पौदे पर भिन्न-भिन्न जाति के सवर्गीय पौदों की क़लमें चढ़ाई जा सकती हैं, जिससे एक ही पौदे में भाँति-भाँति के फल या फूल निकलने लगते हैं।

जिस पेड़ पर क़लम बिठानी हो, उसकी शाखा, और जिस

पौदे पर क़लम चढ़ाई जानेवाली हो, उसकी शाखा या तने की मुटाई का बराबर होना अत्यंत आवश्यक है। जिस पौदे पर क़लम बिठाना हो, वह कम उम्र का होना चाहिए।

संयोग किया हुआ पौदा

जिन दो शाखाओं का, या शाखा और तने का, संयोग करना हो, उन्हें सफ़ाई के साथ बड़ी सावधानी से छील डालना चाहिए। शाखाएँ इस ढंग से छीली जानी चाहिए कि एक दूसरी पर अच्छी तरह जम जाय। छीलने के बाद शाखाओं

को, एक दूसरी पर जमाकर, मजबूत बाँध दो। परंतु शाखाओं

भेट-कलम

अ—मादा-पौदे की शाखा

ब—नर-पौदे की शाखा

स—मादा-पौदे की शाखा काटने का स्थान

क—नर-पौदे की शाखा काटने का स्थान

का रस सूखने के पहले ही बाँधने का काम खत्म कर दिया जाय, तो और अच्छा। कारण, इससे संयोग जल्दी हो जाता है। बाँधने के बाद जोड़ पर मिट्टी और गोबर का मिश्रण लपेट देना चाहिए। इसे हमेशा गीला बनाए रखना जरूरी है।
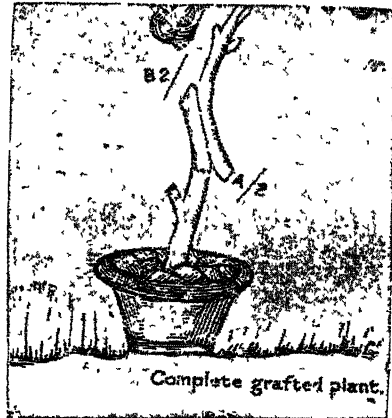
भेंट-क़लम से तैयार किया हुआ पौदा

(संयोग हो जाने पर बंद निकाल लिए गए हैं)

यदि गुट्टी की तरह इस पर भी मिट्टी का बरतन बाँध दिया जाय, तो अच्छा। हवा के झोंकों से डालियों के उखड़ जाने का डर रहता है, अतएव लकड़ी के सहारे से बाँध दी जानी चाहिए।

खूँटी मारना—वृक्ष का तना ज़मीन से तीन-चार फ़ीट की ऊँचाई पर काट डाला जाता है। फिर तने को बीच से चीरकर उसमें एक लकड़ी का टुकड़ा रख दिया जाता है, जिसमें वे मिल न जायँ। तब एक सबल और उत्तम जाति के पौदे की
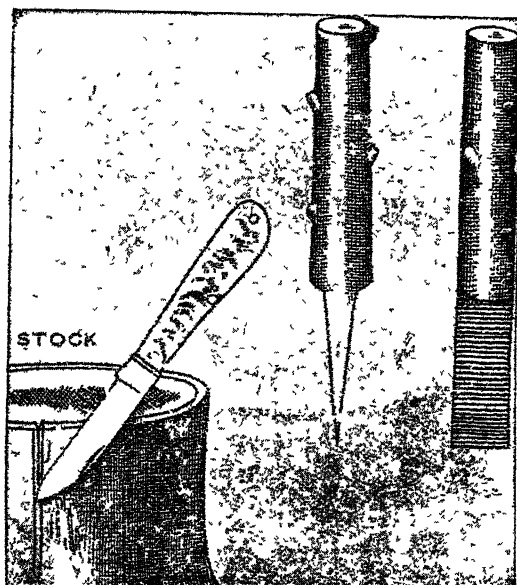
१—नर-पौदा—

अ—खूँटी बिठाने के लिये बनाया हुआ चीरा

२—तैयार की हुई खूँटी

३—,, ,,

शाखा छील-छालकर इस चीरे में बिठा दी जाती है। शाखा इस ढंग से छीली जानी चाहिए कि वह चीरे में अच्छी तरह जम जाय। जिस शाखा पर तीन आँखें हों, वहीं चुनी जानी
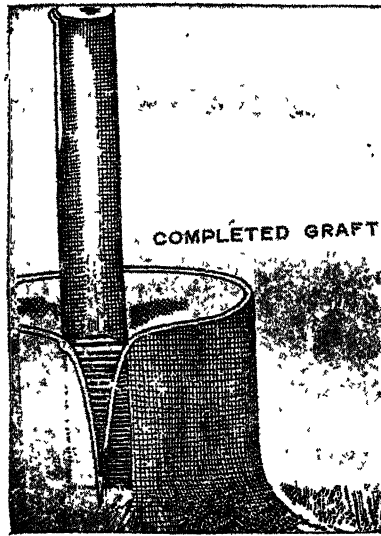
खूँटी बिठाया हुआ भाग (क्राउन ग्राफ़्टिंग)

चाहिए, और चीरे में जमाते समय दो आँखें ऊपर की ओर रहने देनी चाहिए। शाखा को चीरे में जमाकर, मज़बूत बाँधकर, उस पर मिट्टी लपेट देनी चाहिए।

यदि तना ज्यादा मोटा हो, तो उस पर दो-तीन या इससे भी अधिक शाखाएँ लगाई जा सकती हैं।

इसके अलावा और भी तीन-चार रीतियों द्वारा शाखाएँ बिठाई जाती हैं; परंतु विस्तार-भय से हमने उन पर यहाँ कुछ नहीं लिखा।

जड़ पर खूँटी मारना—ऊपर जितनी रीतियों का वर्णन कर आए हैं, उनमें पौदे के ज़मीन के बाहर के भिन्न-भिन्न
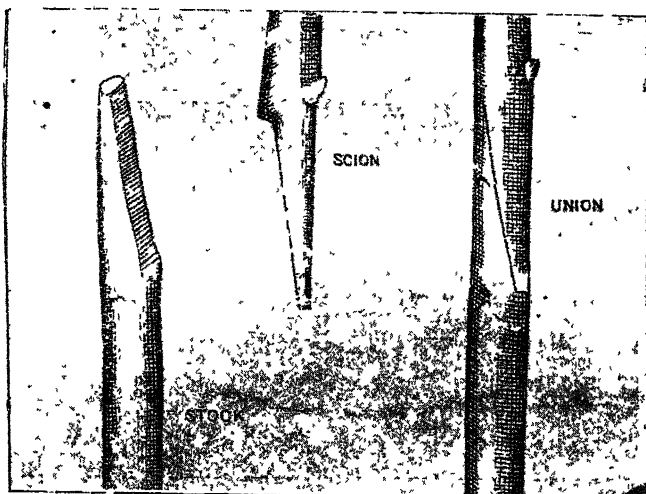
१—नर पौदे की शाखा

२—मादा-पौदे की शाखा

३—संयोग किया हुआ भाग

भागों के संयोगों पर ही लिखा गया है। अब यहाँ जड़ पर खूँटी मारने की विधि पर कुछ लिखा जायगा।

जिस पेड़ की जड़ पर क़लम बिठाना हो, उसकी जड़ें खोलकर एक अच्छी-सी जड़ चुन लेनी चाहिए। फिर इस जड़ को पौदे से काट डालना चाहिए। परंतु यह स्मरण रहे कि वह ज़मीन

से न निकाली जाय। जड़ के ऊपर के सिरे को चीरकर उसमें ऊपर लिखी हुई रीति से किसी वृक्ष की शाखा बिठा देनी चाहिए। शाखा के लग जाने पर पौदा वहाँ से हटाकर अन्यत्र लगा दिया जाय।
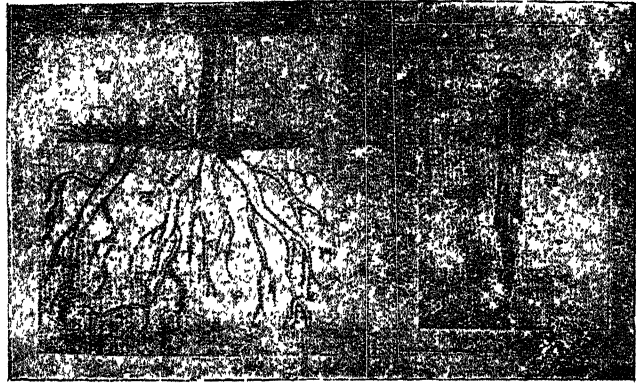
१—जड़ पर खूँटी बिठाई गई है

२—जड़ पर बिठाने के लिये तैयार की हुई खूँटी

इस रीति को ग्रहण करने से एक लाभ यह है कि दो विजातीय पौदों का संयोग सफलता-पूर्वक किया जा सकता है।

फलों का बाग़

लोगों की यह घातक धारणा हो गई है कि उद्यान-विद्या और कृषि-कर्म-विद्या का परस्पर बिलकुल संबंध नहीं है। परंतु ऐसा सोचना एकदम भ्रम है। असल में उद्यान-विद्या कृषि-शास्त्र की

ही एक शाखा है। भारत के विद्वानों ने भारत की कृषि को निरक्षर लोगों के हाथों में सौंपकर भारत का बड़ा अपकार किया है। उसका सुधार उन्हें अब शीघ्र करना चाहिए।

भारतवर्ष के सभी प्रांतों में फल के पेड़ सुगमता-पूर्वक नहीं बोए जा सकते। फल के पेड़ों पर आब-हवा का गहरा असर पड़ता है। भिन्न-भिन्न प्रकार के जल-वायु में भिन्न-भिन्न जाति के फलवाले पेड़ खूब फूलते-फलते हैं।

ज़मीन – भिन्न-भिन्न प्रकार के फलवाले पेड़ों पर लिखते समय ज़मीन, खाद आदि विषयों पर लिखा जायगा। यहाँ केवल इतना ही लिख देना काफ़ी होगा कि भिन्न-भिन्न प्रकार के फल के पेड़ों को भिन्न-भिन्न प्रकार की ज़मीन दरकार होती है। यहाँ तक कि एक ही जाति के भिन्न-भिन्न वर्ग के पेड़ों को भी जुदे-जुदे ढंग की ज़मीन आवश्यक होती है।

कई प्रकार के फलवाले पेड़ ऐसे भी हैं, जो कई प्रकार की ज़मीन और आब-हवा में बोए जा सकते हैं। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न जातियों के पौदों पर पेवंद या क़लम चढ़ाकर भी विशेष प्रकार की ज़मीन में सुगमता-पूर्वक पेड़ उगाए जा सकते हैं।

फलों के बाग़ों के संबंध में मुख्य विषय—दो प्रकार के विषयों पर ही फल के पेड़ों की खेती निर्भर है। ये दो विषय हैं—व्यक्ति का व्यक्तित्व और बाज़ार का रुख़। व्यक्ति के व्यक्तित्व पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता; परंतु फिर भी हरएक आदमी यह बात अच्छी तरह जानता है कि एक-सी

परिस्थिति और अवस्था में रहने पर भी दो मनुष्यों के स्वभाव में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ रहता है, और उन्नति के एक-से साधन प्राप्त रहने पर भी दोनो की अवस्था एक-सी नहीं रहती। कार्य-कुशलता, उद्योग-प्रियता, दूरदर्शिता, कार्य करने की शक्ति और प्रामाणिकता पर ही किसी धंदे की उन्नति निर्भर है। यही बात खेती पर भी घटित होती है। तथापि केवल द्रव्य को लक्ष्य में रखकर ही व्यक्ति को कृषि-सरीखे उद्योग-धंदों में हाथ न लगाना चाहिए। जीवन का लक्ष्य सुख है, धन नहीं। और, सुख तो मध्यम श्रेणी में रहकर भी प्राप्त किया जा सकता है। कृषि अपने भक्तों को धन भले ही न देती हो ; किंतु वह उन्हें ऐसा वरदान देती है, जिससे वे धनवान् न होने पर भी सुख और स्वच्छंदता के साथ जीवन बिता सकते हैं ; अर्थात् वे कृषि द्वारा उन दैनिक आवश्यकता की चीज़ों को शुद्ध और पवित्र रूप में एवं पर्याप्त मात्रा में प्राप्त कर सकते हैं, जिन्हें विपुल धन नहीं प्राप्त कर सकता। संसार के उद्योग-धंदों में एक किसान का धंदा ही ऐसा है, जिसमें सट्टे की तरह एका-एक लाखों रुपए हाथ नहीं लगते। तथापि किसान अपने जीवन को बिना किसी प्रकार के दुःख और असंतोष के बिता सकता है।

यह बात सबको अच्छी तरह विदित है कि बाज़ारों में उत्तम पदार्थ की ही माँग रहती है। परंतु किसी भी प्रकार के पदार्थों का सग्रह क्यों न ले लिया जाय, उसमें 'उत्तम' गुण-

वाले पदार्थों का अभाव-सा ही रहता है। व्यक्ति अपने धंदे में जितना ही निष्णात और योग्यतम होता है, वह उतने ही उत्तम गुणों से युक्त पदार्थ पैदा कर सकता है। और, अधिक पदार्थ पैदा करने के लिये उस विषय के विज्ञान-मूलक अधिक ज्ञान की आवश्यकता है।

अक्सर देखा जाता है कि बाजारों में जो फल उत्तम कह-कर बेचे जाते हैं, उनमें अधिकांश साधारण श्रेणी के ही होते हैं। जिस पदार्थ की बराबरी करनेवाला पदार्थ बाज़ार में न मिले, वही उत्तम माना जा सकता है।

व्यक्ति अपने धंदे में जितना ही अधिक चतुर, दूरदर्शी और उद्योगप्रिय होगा, उतना ही वह अपने लक्ष्य के अधिक समीप पहुँच सकेगा। इससे यह बात स्पष्ट मालूम होती है कि व्यक्तित्व ही फलों की खेती की बड़ी कुंजी (yaster Key) है। फलों की खेती करनेवाले व्यक्ति को चाहिए कि वह अपने बाग़ में उन्हीं फलों के पेड़ बोवे, जो उसके पड़ोसी के बाग़ में न हों, और जिनकी माँग अधिक हो। फिर चाहे उसके फल निम्न-श्रेणी के ही क्यों न हों।

यदि फल के पेड़ों की खेती करनेवालों की संख्या अत्यधिक हो, तो यह धंदा हाथ में लेनेवाले व्यक्ति को लोगों की रुचि, अपनी पूँजी, अपनी योग्यता और बाज़ार पर खूब विचार करके ही यह काम शुरू करना चाहिए। अदूरदर्शिता और विना आगा-पीछा सोचे किसी काम को हाथ में लेना हानिकारक

और अपमान-जनक है। उक्त बातों पर ध्यान रखकर कार्यारंभ करने से असफलता का भय बिलकुल नहीं रहता।

पाश्चात्त्य देशों में फलों की खेती ने ख़ूब तरक़्क़ी की है। वहाँ के फल-कृषक सदा अपने फलों के गुणों और उनकी उपज की मात्रा को बढ़ानेवाले उपायों को खोजा करते हैं। परंतु भारतवर्ष में इस ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। किसी बाग़ में जाइए, फलों के पेड़ों की दुर्दशा देखकर आपको कष्ट हुए बिना नहीं रहेगा। भारतवर्ष के अधिकांश बाग़ों में खाद, पानी और स्वच्छता पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। हमने कई बाग़ों में देखा है कि पेड़ प्रकृति-माता की हिफ़ाज़त में ही छोड़ दिए गए हैं। इसका परिणाम वही हुआ, जो होना चाहिए, अर्थात् पौदों में किसी साल तो फल लगते हैं, और किसी साल नहीं लगते। फलों का आकार, मधुरता और संख्या भी बहुत घट गई है। अतएव पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिये यह ज़रूरी है कि पौदों की रक्षा और स्वास्थ्य पर ख़ूब ध्यान दिया जाय।

फलों की खेती करनेवाले को स्थानीय परिस्थिति का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। ज़मीन, स्थानिक परि-स्थिति, अपनी पूँजी और रुचि पर ख़ूब विचार करने के बाद ही उसे कार्यारंभ करना चाहिए। उसे पुस्तकों और शिक्षकों द्वारा फलों की कृषि से संबंध रखनेवाले सिद्धांत-तत्त्व ज्ञात हो सकेंगे, वे उसे रास्ता दिखा देंगे। उनके द्वारा उसे वह ज्ञान

प्राप्त हो जायगा, जिसके बल पर वह स्थानीय प्रश्नों को चट समझ लेगा। परंतु उसे इन प्रश्नों को स्वयं ही हल करना पड़ेगा, और यही फलों की खेती में सफलता प्राप्त करने का सरल मार्ग है।

फ़लों की खेती का दारमदार शिक्षा पर है, और यदि वह शिक्षा वाणिज्य की दृष्टि से प्राप्त की गई होगी, तो भारी लाभ होने की संभावना है। कारण, फ़ीसदी दस आदमी ही इस काम में सफलता प्राप्त कर सकते हैं, और उन दस में से एक ही आदमी ऐसा मिलेगा, जो फलों को बेचकर ज्यादा फ़ायदा उठा सकता है। विज्ञान-मूलक कृषि-शिक्षा पाया हुआ व्यक्ति ही कृषि-कर्म में लाभ उठा सकता है। ये ही लोग शिक्षित मन, उत्तम ज्ञान और निश्चय के बल पर पुश्तैनी किसानों की अपेक्षा अधिक लाभ उठा सकते हैं। इन गुणों के अभाव के कारण ही भारतीय कृषकों की इतनी दुर्दशा हुई है। इन गुणों की कमी के कारण ही रात-दिन कठिन परिश्रम करने पर भी भारतीय किसानों को एक-एक दाने के लिये तरसना पड़ता है। भारत का अन्न-कष्ट और भी भीषण न होने पावे, इस-लिये अब भारत के साक्षर और धनी लोगों को चाहिए कि वे कृषि-कर्म को अपने हाथों में लें।

फ़सल पैदा करना ही भारतीय किसानों का एकमात्र उद्देश्य है। उसके बेचने का काम वे नहीं करते। यह काम महाजनों के ही ज़िम्मे है। यही कारण है कि महाजन तो मालामाल

हो रहे हैं, और किसानों के घरों में फूटी कौड़ी भी नहीं मिलती। यह नियम फलों पर भी लागू होता है। फल के बाग़ों के मालिक अपनी फ़सल कुँजड़ों या दूसरे व्यापारियों के हाथ बेच देते हैं। कुँजड़े माल बहुत सस्ते में ख़रीद लेते हैं, और फिर बाज़ार में उसे बेचकर ख़ूब नफ़ा उठाते हैं। हमारी राय में जब तक बाग़ का मालिक बाज़ार में अपना माल बेचने का काम अपने ही हाथ में न लेगा, तब तक अधिक लाभ की आशा करना आकाश-कुसुम-सदृश है। फल बेचने के लिये बाग़ के मालिकों का एक संघ स्थापित किया जाना चाहिए। इसी संघ के द्वारा सहकारिता के तत्त्व पर फलों की बिक्री की व्यवस्था करने से अच्छा लाभ रहेगा; यह संघ अपना माल दूर-दूर के बाज़ारों में भी भेज सकेगा। 'सहकारिता' एक स्वतंत्र विषय है। अतएव हम इस संबंध में यहाँ अधिक लिखना उचित नहीं समझते।

फलों के बाग़ कहाँ लगाए जायँ?

इस प्रश्न का ठीक उत्तर देना ज़रा कठिन है। तथापि कुछ साधारण नियमों पर विचार किया जायगा। ये नियम सब प्रकार के फलों के पेड़ों पर लागू हो सकते हैं, और यदि उन पर ध्यान दिया जायगा, तो विशेष लाभ होने की संभावना है।

स्थान—ज़मीन के प्रश्न को एक तरफ़ रखकर स्थान निर्द्धारित करने के लिये परिस्थिति पर ज़्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए। जहाँ तक संभव हो, बाग़ सड़क के किनारे,

शहरों के पास, लगाया जाय। फलों की खेती के लिये वही स्थान सर्वोत्तम है, जहाँ ज़मीन में पानी न भरा रहता हो, अर्थात् जल का निकास अच्छा हो, सब प्रकार की ज़मीन हो, और जहाँ से बाज़ार बहुत दूर न हो, साथ ही जहाँ नगरों में पहुँचने के लिये पक्के मार्ग बने हों। आजकल रेल हो जाने से दूर के बाज़ारों में भी फल भेजे जा सकते हैं। परंतु अभी फल ले जाने के संबंध में रेलवे-कंपनियों ने विशेष सुविधाएँ नहीं की हैं। बाग़ उसी स्थान पर लगाए जाने चाहिए, जहाँ से माल जल्द और आसानी से बाज़ारों में पहुँचाया जा सके। बाग़ में एक ही दो जाति के फलों के पेड़ लगाने की अपेक्षा सभी प्रकार के फलों के पेड़ों का बोया जाना ज्यादा फ़ायदे-मंद है।

फल के पेड़ों के खेतों की जुताई

अक्सर देखा जाता है कि फल के पेड़ों के खेतों की जुताई पर ज्यादा क्या, बिलकुल ही ध्यान नहीं दिया जाता। खेतों में पौदे लगा देने के बाद भी जुताई की जानी चाहिए। घास-पात को उखाड़ डालने के अलावा जुताई से और भी कई लाभ होते हैं। उन पर स्थानाभाव के कारण यहाँ विचार नहीं किया जा सकता। तथापि फलों की खेती करनेवाले को इतना अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि जुताई से धरती की दरारें बंद हो जाती हैं, अतः मिट्टी की तरी भाप बनकर उड़ने नहीं पाती। मिट्टी के अंदर छिपकर बैठे हुए कीड़े और उनके अंडे

ज़मीन की सतह पर आ जाते हैं, और तब धूप और पक्षी उन्हें नष्ट कर डालते हैं। घास-पात की जड़ें भी ऊपर आती और धूप के कारण नष्ट हो जाती हैं।

पेड़ लगाने के बाद ज़मीन को बार-बार जोतते रहने से जड़ें अधिक गहरी हो जाती हैं। प्रारंभ में, एक-दो वर्ष तक, ६ इंच की गहराई तक जुताई करना फ़ायदेमंद है। पेड़ के चारों ओर दो-तीन फ़ीट ज़मीन में हल न लगने देना चाहिए।

कुछ वर्षों तक हल देते रहने से ज़मीन सुधर जायगी, और जड़ें गहरी जम जायँगी, जिससे बाद में 'बखर' देने से भी काम चल सकेगा।

फल के पेड़ों के बीच में फ़सल बोना---यह एक विवाद-ग्रस्त विषय है। तथापि हमारे मत से बीच में वे ही फ़सलें बोई जानी चाहिए, जो ज़मीन की उपजाऊ शक्ति बढ़ावें, या जो ज़मीन से उपयोगी तत्त्व—पौदों की ख़ूराक—को अधिक परिमाण में न खींचें। परंतु फूल-फल लगने के बाद किसी प्रकार की फ़सल न बोई जानी चाहिए। प्रति तीसरे-चौथे वर्ष सन बोकर मिट्टी में मिला देना चाहिए। इससे ज़मीन की उर्वरा-शक्ति बढ़ती रहती है।

जातियों का चुनाव

फल के पेड़ों की जातियों का चुनाव करते समय निम्न-लिखित नियमों पर पूरा ध्यान देना चाहिए—

१—वे ही जातियाँ चुनी जानी चाहिए, जिन पर मालिक

का अनुराग हो, और जिनकी समीपवर्ती नगर में अधिक माँग हो, अर्थात् मालिक को अपनी तथा नागरिक लोगों की रुचि का पूरा ख़याल रखना चाहिए।

२—फल के पेड़ बोने के उद्देश्य पर ध्यान रक्खा जाय।

३—किसी दूसरे प्रांत में एक विशेष जाति के फल अच्छे होते हैं, इसी बात पर उन्हें अपने बाग़ में स्थान न देना चाहिए।

४—वे ही पौदे लगाए जायँ, जो स्थानीय परिस्थिति के अनुकूल हों।

५—अपनी योग्यता पर ध्यान रखकर ही चुनाव किया जाना चाहिए, अर्थात् उसी जाति के पौदे लगाए जाने चाहिए, जिनके संबंध में मालिक को पूर्ण ज्ञान हो। अन्यत्र के उत्तम फलों के पेड़ों की खेती अपने यहाँ बढ़ाने का भी यत्न करते रहना चाहिए।

पेड़ों के बीच में अंतर – भिन्न-भिन्न जातियों के पौदों में अंतर भी कम-ज्यादा रक्खा जाता है। कुछ पौदे ३०-४० फ़ीट की दूरी पर बोए जाते हैं, और कुछ १०-१२ फ़ीट की दूरी पर।

जरूरत से ज्यादा या कम अंतर रखने से विशेष हानि होती है। पास-पास पेड़ लगाने से उनकी जड़ों को काफ़ी भोजन और स्थान नहीं मिलता। पौदों के बीच में इतना अंतर रखना चाहिए कि उनकी जड़ें मिल-मिलकर भोजनों के लिये झगड़ने न पावें।

नीचे एक सूची दी गई है, उससे पाठकों को मालूम हो जायगा कि किस जाति के दो पौदों के बीच में कितना अंतर रक्खा जाना चाहिए—

आम	३० फ़ीट
पपीता	१० ,,
खट्टा नींबू	१५ ,,
केला	१२ ,,
सेब	२० ,,
बेर	१५ ,,
ज़र्द आड़ू (Apricot)	२० ,,
नारंगी	१८ से २० फ़ीट
अंगूर	१० फ़ीट
जामुन	१५ से २० फ़ीट
अनार	१५ फ़ीट
आड़ू	२० ,,
अंजीर	१० ,,

स्थानाभाव के कारण इससे अधिक पौदों के नाम और अंतर यहाँ नहीं दिए जा सकते।

फलों का बाहर भेजना

आम, लीची, नारंगी, अनार, आड़ू आदि फल बहुत दूर-दूर के बाज़ारों में भेजे जाते हैं। अतएव इसके संबंध में भी यहाँ कुछ लिखना अप्रासंगिक न होगा।

फलों को डाली और दो-चार पत्तों समेत ही तोड़ना चाहिए। इस प्रकार तोड़े हुए फल जल्दी ख़राब नहीं होते। इसके अलावा पकना शुरू होते ही फल तोड़े जाने चाहिए। तोड़े हुए फलों को छाँटकर ठंडे कमरे में रख देना चाहिए। नीरोग और अच्छे फल ही बाहर भेजे जाने चाहिए।

फल रेल से ही दूसरे स्थानों को भेजे जाते हैं। इसलिये यह ज़रूरी है कि उनको इस तरह बंद करके भेजे, जिसमें चोरी भी न हो, और उठाने-धरने में फल ख़राब भी न होने पावें। अक्सर देखा जाता है कि नारंगी, आम आदि फल बाँस की टोकरियों में ही बाहर भेजे जाते हैं; किंतु टोकरियों को लकड़ी के फ़्रेम में नहीं रखते, जिससे बहुत-से फल ख़राब हो जाते हैं। इस-लिये अगर बाँस की टोकरियों को ही काम में लाना हो, तो उनको लकड़ियों के फ़्रेम (चौकठे) में बंद करके भेजना चाहिए। इससे फल उतने ख़राब नहीं होते, और चोरी का डर भी कम हो जाता है। हमारे मत में तो देवदारु की लकड़ी या चीड़ के बक्स ही इस काम के लिये सर्वोत्तम हैं। इनकी पेंदी में पत्तों की एक तह रखकर फिर एक तह फलों की और एक पत्तों की रक्खी जानी चाहिए। बक्स भर जाने पर फलों को पत्तों की मोटी तह से ढक देना चाहिए। बक्स में छोटे-छोटे छेद कर देने चाहिए, जिसमें फलों को काफ़ी हवा मिलती रहे। आम, लीची, जामुन आदि को इन्हीं के हरे पत्तों में रखकर

बाहर भेजना अच्छा है। घास का और कामों में उपयोग भी किया जा सकता है।

अक्सर देखा जाता है कि रोगी फल भी अच्छे फलों के साथ रखकर भेज दिए जाते हैं, जिससे दूसरे फल भी ख़राब हो जाते हैं। इसलिये इस बात पर अवश्य ही ध्यान दिया जाना चाहिए। कड़े, नीरोग और अधपके फल ही दूसरे बाज़ारों में भेजे जा सकते हैं। पूरे पके हुए फल रास्ते में ही सड़ जाते हैं, जिससे उस बक्स के अन्य फलों में भी रोग फैल जाता है।

वृक्षों की हिफ़ाज़त

आवश्यक सूचनाएँ—१ गरमी से छोटे पौदों को ज़्यादा नुक़सान पहुँचता है। अतएव उन पर घास, खजूर के पत्ते आदि से छाया कर देनी चाहिए।

२ अगर पौदा नाज़ुक हो, और हवा से उसे हानि पहुँचने की संभावना हो, तो थूनी का सहारा दे दिया जाना चाहिए।

३. गरमी में पौदों की छाल जल जाती है। अतएव गरम प्रदेशों में तनों पर छाया कर देनी चाहिए। परंतु छाया ऐसे पदार्थों से की जानी चाहिए, जिनसे तने को हवा मिलती रहे। खजूर के पत्ते इसके लिये अच्छे हैं।

४ बहुत-से पेड़ों की छाल बहुत कड़ी हो जाती है, जिससे तने की बाढ़ में रुकावट पहुँचती है। इसलिये यह आवश्यक है कि कड़ी छाल खुरच दी जाय, और तब वह स्थान साबुन या कार्बोलिक एसिड से धो डाला जाय।

यदि छाल में तेज़ चाक़ू घुसेड़कर एक लंबा चीरा दे दिया जाय, तो भी काम चल सकता है।

५. वृक्ष की ऊपरी छाल निर्जीव हो जाती है। उसे खुरच डालना चाहिए। कारण, उसमें कीड़े और रोग अपना घर बना लेते हैं। यह काम तभी किया जाय, जब पौदे की अच्छी बाढ़ हो गई हो।

पुष्प-वाटिका

पुष्प-वाटिका के संबंध में हमें बहुत कम लिखना है। हमारा विचार इस विषय को छोड़ ही देने का था; परंतु आजकल बँगलों और घरों के आस-पास पुष्प-वृक्ष और लताएँ लगाई जाने लगी हैं, और इसीलिये इस विषय को छोड़ना उपयुक्त नहीं समझा।

पुष्प-वाटिका से संबंध रखनेवाली कुछ बातें पीछे लिखी जा चुकी हैं, अतएव यहाँ संक्षेप में ही इस विषय पर विचार किया जायगा।

बँगले या मकान के सामने कमलाकृति, त्रिकोण, चतुष्कोण, अष्टकोण आदि भिन्न-भिन्न आकृति की क्यारियाँ बनाई जायँ, और हरएक क्यारी में भिन्न-भिन्न प्रकार के मौसमी (Annuals) फूल बोए जायँ। रास्तों के किनारों पर भी मौसमी फूल बोए जाते हैं। लॉन पर छोटी-छोटी क्यारियों में भिन्न-भिन्न रंगों के फूल अत्यंत नयनाभिराम और मनोहर मालूम होते हैं।

फूल के पेड़ पाँच वर्गों में बाँटे जा सकते हैं। यथा—

१. पुष्पवृक्ष (चंपा, हरसिंगार आदि) २ फूल के पेड़ (गुलाब, कनेर, तगर आदि) ३. पुष्प-लता (जोही, जूही, चमेली आदि) ४. पुष्प-गुच्छ (गुलसब्बो, गुलाबास आदि) ५. पानी में होनेवाले फूल के पेड़ (कमल, कुमुद आदि)।

पुष्प-वृक्ष बड़े होते हैं। अतएव वे वाटिका में शोभा नहीं पा सकते। परंतु उनके फूल बहुत सुगंधित होते हैं। अतएव वे मकान के पिछवाड़े या अन्य बाजू पर जरूर लगाए जाने चाहिए।

रोसा-घास, खस आदि कुछ पौदे भी सुगंधित होते हैं। अतएव स्थान हो, तो ये भी लगाए जाने चाहिए।

सब प्रकार के पुष्प-वृक्ष साधारणतः उपजाऊ ज़मीन में ही बोए जाने चाहिए। अतएव भिन्न-भिन्न पुष्प-वृक्षों पर विचार करते समय इस संबंध में कुछ नहीं लिखा गया। इन पेड़ों के लिये खाद का प्रश्न विशेष महत्त्व का है। अतएव हरएक पेड़ के वर्णन के साथ खाद पर विचार किया गया है।

पुष्प-वाटिका के पौदों की छँटाई, निराई, गुड़ाई, पेड़ के नीचे का कर्कट हटाना, पानी देना आदि काम बहुत महत्त्व के हैं। इसलिये पुष्प-वाटिकाओं के लिये जुदे आदमी रक्खे जाने चाहिए। नौकरों पर ही सब काम छोड़ रखने से पुष्प-वाटिका नष्ट हो जाती है। स्वयं भी उसकी देख-भाल करते रहना चाहिए।

मौसमी फूलों के बीज बोना—वर्षायु पौदों के बीज

बरसात ख़तम होने पर, मध्य कार्त्तिक के क़रीब, बोए जायँ। परंतु दक्षिण-भारत के ज्येष्ठ-आषाढ़ में बोना अच्छा है। बंगाल में कुछ पौदे मौसम ख़तम होने के कुछ पहले फूलने लगते हैं। इन पौदों को कुछ पहले बोना चाहिए। ऐसा न किया जायगा, तो बहार ख़तम होने के बहुत पहले ही पौदे मर जायँगे।

नेमोफ़िला, लार्कस्पर आदि कुछ पौदे बहुत जल्दी फूलने लगते हैं। अतएव कुछ बीज मार्गशीर्ष में भी बोए जाने चाहिए।

बीज बोने की रीति—बीज गमलों में या बक्स में बोए जायँ। पीछे गमलों में भरने के लिये मिश्रण बनाने की रीति लिखी जा चुकी है। वही मिश्रण गमलों में भरकर बीज बोया जाना चाहिए। चार-पाँच इंच ऊँचे बढ़ जाने पर पौदे स्थायी स्थान पर लगा दिए जायँ।

बीज एक क़तार में बोए जायँ, और धूप के समय उन पर छाया कर दी जाय।

पौदे उखाड़ने के २४ घंटे पहले जन्मस्थली पानी से ख़ूब तर कर दी जानी चाहिए। ऐसा करने से उखाड़ते समय पौदे की जड़ें नहीं टूटने पावेंगी। फिर पौदे तख़्ते या क्यारियों में, क़तारों में, लगा दिए जायँ। मौसमी फूलों के पौदों को सदा पानी देते रहना चाहिए।

नारियल

नारियल का पेड़ उष्ण-कटिबंध के सब देशों में होता है। इसकी उँचाई ५०-१०० फ़ीट तक होती है। पौदे के सिर पर

पत्ते, छाते की तरह, फैले रहते हैं। ज़मीन और काश्त करने की रीति में फ़र्क़ होने के कारण फलों की मिठास में भी फ़र्क़ पड़ जाता है।

उपयोग—इस पेड़ के सभी अवयव मानव-जाति के काम आते हैं। वृक्ष के तने से खंभे बनाए जाते हैं। गीला और सूखा गूदा खाया जाता है। नारियल की गरी से भाँति-भाँति के पकवान भी बनाए जाते हैं। इसका तेल खाने, जलाने और बालों में लगाने के काम आता है। साबुन, मोमबत्ती आदि के कारख़ानों में भी इसका उपयोग किया जाता है। रेशों से ब्रुश आदि भाँति-भाँति के पदार्थ बनाए जाते हैं। नारियल की खली पशुओं को खिलाई जाती है। नरेटी से बटन, बरतन आदि तैयार किए जाते हैं। नरेटी का तेल गज की अव्यर्थ ओषधि माना जाता है। हिंदू लोग इसके फल को मांगलिक मानते हैं, और सब मंगल-कार्यों में इसका उपयोग किया जाता है।

ज़मीन—समुद्र-तटवर्ती प्रदेशों में नारियल बहुत होता है। ५० अंश तक से ६० अंश तक ताप-क्रमवाले देश इसके लिये अच्छे माने जाते हैं। तथापि वर्षा का औसत प्रतिवर्ष ४० से ६० इंच तक होना चाहिए। वर्षा बरसात के सभी महीनों में होती रहनी चाहिए। इसके लिये रेतीली, भुरभुरी और ज़ोरदार ज़मीन उपयुक्त है। ज़मीन में खारी पानी का अंश बिलकुल न होना चाहिए। रेत-मिली काली और लाल तथा समुद्र-किनारे की रेतीली ज़मीन में नारियल अच्छे होते हैं।

बोने की तरकीब—नारियल के रोपे तैयार करके बाग़ों में लगाए जाते हैं। बीज के लिये उसी पेड़ के फल चुने जाने चाहिए, जिसके फल मोटे, भारी और मीठे हों, और जिसकी बाढ़ अच्छी हो।

बीज के नारियलों को पेड़ पर ही पकने देना चाहिए। गरमी के मौसम में इन्हें जमा कर घरों में टांग देते हैं, जहाँ वे अच्छी तरह पक जाते हैं। परंतु इनको चींटियों से बचाते रहना चाहिए। बरसात के दिनों में बीज के नारियल कुओं में डाल दिए जाते हैं। अकुर निकल आने तक फल कुएँ में ही पड़े रहने दिए जाते हैं। कहीं-कहीं अंकुरित करने के लिये नारियल ज़मीन में भी गाड़े जाते हैं। अंकुरित हो जाने पर बीज कुएँ से निकालकर रेतीली जन्मस्थली में, एक फ़ीट के अंतर पर, बो दिए जाते हैं। बीज बोने के पहले जन्मस्थली की मिट्टी खोद-जोतकर खूब ढीली कर लेनी चाहिए, और उसमें खूब खाद भी दी जानी चाहिए। बीज बोने के बाद जन्मस्थली को हर दूसरे या तीसरे दिन सींचते रहना चाहिए। इसका अंकुर मीठा होता है, इसलिये ऐसी तजबीज़ करनी चाहिए कि उसे चींटियों से नुक़सान न पहुँचने पावे। डेढ़-दो वर्ष की उम्र के पौदे स्थायी स्थान पर बाग़ों में, १८ से २५ फ़ीट के फ़ासले पर, लगाए जाते हैं।

कहीं-कहीं सूखकर आप-ही-आप ज़मीन पर गिरनेवाले फल ही बीज के लिये रक्खे जाते हैं। इनको मृगशिरा-नक्षत्र में, जन्मस्थली में, ज़मीन में, गाड़ देते हैं। एक महीने में वे उग

आते हैं। वर्ष डेढ़ वर्ष बाद इनको वहाँ से हटाकर खेतों में लगा देते हैं।

स्थायी स्थान पर लगाने के बाद तीन वर्ष तक पौदों की ख़ूब हिफ़ाजत रखनी पड़ती है। उनको ज्यादा पानी भी दरकार होता है।

बोने की दूसरी तरकीब—बारह महीने में नारियल अच्छी तरह से पक जाता है। जो फल बारह महीने तक पेड़ पर रहने के बाद सूखने लगता है, वही बीज के लिये चुना जाता है। पुराने पेड़ पर लगे हुए फल बीज के लिये अच्छे माने जाते हैं। फलों को ज़मीन पर गिरने के पहले ही वृक्ष से उतार लेते हैं। बाद को धूप में रख देते हैं। कहीं-कहीं घर के छप्परों पर रखने की भी चाल है। बहुत-से लोग फलों को रस्सी से बाँधकर वृक्षों पर लटका देते हैं। मघा-नक्षत्र के बरसने तक फलों को उसी स्थान पर पड़ा रहने देते हैं। बाद को वे जन्मस्थली में बो दिए जाते हैं। जन्मस्थली का छाँहदार स्थान में होना बहुत ज़रूरी है। मगर आम, काजू और बाँस की छाया से पौदों को नुक़सान पहुँचता है। नारियल के वृक्ष की छाया में पौदा ख़ूब बढ़ता है। जन्मस्थली में एक-एक फुट के अंतर पर गढ़े खोदे जाते हैं, और तब आधसेर नमक और आधसेर राख मिट्टी में मिलाकर गढ़े भर दिए जाते हैं। गढ़े की मिट्टी ज़मीन से क़रीब एक बालिश्त ऊँची रक्खी जाती है। अंकुर निकले हुए और अंकुर न निकले हुए बीज

गढ़ों में इस ढंग से गाड़े जाते हैं कि आधा बीज मिट्टी के अंदर दबा रहता है, और आधा बाहर निकला। अंकुर हमेशा ऊपर रक्खा जाता है। फिर घास की पतली तह से अंकुर वग़ैरह ढक दिए जाते हैं। पौदों को रोज़ पानी देना पड़ता है। परंतु उतना ही पानी दिया जाना चाहिए, जितना मिट्टी को तर बनाए रखने के लिये काफी हो। अगर दीमक नज़र आवे, तो घास हटाकर पौदे के पास नमक या खारी रेत और राख मिलाकर डाल देनी चाहिए। क़रीब छ महीने बाद इनमें तीन पत्ते निकल आते हैं। इसके बाद ही ये रोपे खेतों में लगा दिए जाते हैं। बंबई, अलीबाग़ और बसई के लोगों का विश्वास है कि तीन वर्ष तक जन्मस्थली में रक्खे हुए पौदे ही अच्छे होते हैं। पौदे माघ से वैशाख तक किसी मौसम में स्थानांतरित किए जा सकते हैं।

खाद—नारियल के लिये मछली की खाद बहुत अच्छी है। हरएक वृक्ष के लिये सात-आठ सेर खाद काफ़ी है। परंतु दिक़्क़त यह है कि एक साल यह खाद देने से फिर हर साल देनी पड़ती है। मघा-नक्षत्र से बीस दिन पहले पौदे की जड़ें थोड़ी-थोड़ी खोल दी जाती हैं। तब क्यारी-सी बनाकर उसमें खाद डाल देते हैं। क्यारी ऐसी बनाई जानी चाहिए कि उसमे पानी बाहर न बह सके। 'गोमांतक' में, चैत्र-मास में, पौदे को घास की राख और नमक दिया जाता है। वहाँ के लोगों का कहना है कि यह खाद नारियल के लिये उत्तम है।

दूसरी फ़सल बोना—रोपे लगाने के बाद दो क़तारों के बीच की ज़मीन में पपैया, जामुन, तरकारियाँ मूँगफली आदि ऐसी फ़सलें बोई जा सकती हैं, जिनसे पौदों को नुक़सान पहुँचने की संभावना न हो। बोने के क़रीब पाँच-सात साल बाद पौदा फलने लगता है, और १५-१६ साल तक फलता रहता है। फलना शुरू होने के बाद पौदे को प्रतिवर्ष हरी खाद देनी चाहिए। एक पौदे में ५० से ७५ तक फल आते हैं। इसके अलावा पौदे से 'माँड़ी'-नामक मादक द्रव्य भी निकलता है। इससे भी हर पौदे से तीन रुपए से लगाकर आठ रुपए तक आमदनी हो जाया करती है।

शत्रु—नारियल को दो-तीन प्रकार के कीड़ों से नुक़सान पहुँचता है। एक कीड़ा पत्ते की जड़ के पास छेद कर तने में घुस जाता है। इस छेद में लोहे का तार डालकर कीड़ा मारा जा सकता है। छेद में तारपीन का तेल भरकर मिट्टी से उसका मुँह बंद कर देने पर भी कीड़ा मर जाता है। कीड़ा सड़े पदार्थों में, ख़ासकर खाद के ढेर में, अंडे रखता है। इस-लिये जहाँ तक हो सके, बाग़ों में गंदगी न रहने देना चाहिए।

एक और कीड़ा है, जो वृक्ष के सिरे पर के कोमल भाग पर अंडे रखता है। रात के वक्त, नारियल के सड़े पानी को चौड़े बरतन में भरकर उसके बीच में दीपक जलाने से पूरी बाढ़ को पहुँचा हुआ कीड़ा प्रकाश से आकर्षित हो, पानी में गिरकर, मर जायगा।

अनानास

कहा जाता है, अनानास की जन्म-भूमि ब्रेज़िल-देश है, और वहीं से यह भारतवर्ष में लाया गया है। भारत के अधिकांश प्रांतों में इसकी खेती की जाती है। बंगाल, आसाम, पीलीभीत, बर्मा, लंका और गुजरात में अनानास की खेती सफलता-पूर्वक की जा सकती है। उत्तर-भारत के पहाड़ी हिस्सों इसमें की फ़सल अच्छी नहीं होती।

घनी छायावाले स्थान पर इसे कभी न बोना चाहिए। कारण, घनी छाया से पौदों की वृद्धि में बहुत रुकावट पहुँचती है। तो भी थोड़ी छाया से पौदों को लाभ ही पहुँचता है।

अनानास की अनेक जातियाँ हैं। स्थानाभाव के कारण उन सब पर यहाँ विचार नहीं किया जा सकता। सीलोन और ढाका नाम की जातियाँ उत्तम मानी जाती हैं।

अनानास का पेड़ केतकी के पेड़ के समान होता है। इसका पौदा और फल देखने में बहुत ख़ूबसूरत होते हैं। रशिया के अधिकांश गरम देशों में इसकी खेती की जाती है।

ज़मीन—बलुआ, दुमट जमीन में यह बोया जाता है। परंतु इसके लिये भुरभुरी और नदी-नालों के पानी के साथ बहकर आई हुई मिट्टीवाली ज़मीन अच्छी है। ज़मीन में ख़ूब खाद दिया जाना जरूरी है।

बोने का समय—सितंबर (कुँआर) में पौदों के पास उगे हुए छोटे-छोटे पौदे एक खेत से खोदकर दूसरे खेत में,

इसकी खेती भारतवर्ष के क़रीब-क़रीब सभी प्रांतों में की जाती है। पेड़ ७ से १० फ़ीट तक ऊँचा होता है।

केले की अनेक जातियाँ हैं। उन सब पर यहाँ विचार करना संभव नहीं। नीचे केले की मुख्य-मुख्य जातियों के नाम दिए जाते हैं—

दक्षिण-हिंदुस्तान में सोन-केला, राय-केला या राज-केला, कनेरपात और बीजापुरी नाम की जातियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं। इनके अलावा गुजरात में खासड़िया या टापरा, सोनेरी, लीली और लाल नाम की जातियाँ अच्छी मानी जाती हैं। इनके अलावा दक्षिण-हिंदुस्तान में मुठेली, लाल वेलची और सफ़ेद वेलची नाम की केले की जातियाँ भी बोई जाती हैं। बंगाल-प्रांत में चंपा, चीनी चंपा, मर्तबान, ढाका मर्तबान, कंतेल, कचकेला और मोहनभोग नाम की जातियाँ मुख्य हैं। भिन्न-भिन्न जातियों के फलों का आकार और स्वाद जुदा-जुदा होता है। इधर कुछ वर्षों से विदेशी जातियाँ भी बोई जाने लगी हैं।

केले में एक वर्ष में फल आते हैं। केले के फूल में स्त्री-केसर और नर-केसर एक ही फूल में रहता है। एक वृक्ष में एक ही फूल लगता है, और फल भी एक ही जगह लगते हैं। एक वृक्ष में २००-३०० तक फल लगते हैं।

उपयोग—केले का फल कच्चा खाया जाता है। मलाबार में पके केले के छोटे-छोटे टुकड़े कर उन्हें सुखाते हैं। ये कई दिन

तक ख़राब नहीं होते । कच्चे केले सुखाकर आटा बनाया जाता है। जंगली केलों में बीज रहते हैं। ग़रीब लोग इन बीजों को पीसकर रोटी बनाते हैं। केले के रेशों से रस्सी आदि बनाई जाती हैं। पौदे का कुछ भाग काग़ज़ बनाने के काम में भी आता है। इसकी राख कपड़े धोने के काम आती है। बंगाल में ग़रीब लोग इस राख को नमक की जगह काम में लाते हैं।

ज़मीन—दुमट या मटियार दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है। चिकनी मिट्टीवाले खेत में बोने से फ़सल अच्छी नहीं होती। इसके लिये भुरभुरी ज़मीन उत्तम मानी जाती है। फ़ासफ़रिक एसिड, पोटाश, चूना और नाइट्रोजनवाली ज़मीन में केला बहुत अच्छा होता है।

बोने की रीति— इसका पौदा हर जगह जड़ पकड़ लेता है। परंतु अच्छे फल प्राप्त करने के लिये ज्यादा सावधानी से खेती की जानी चाहिए।

बाग़ों में केले के पौदों की जड़ में से कई छोटे-छोटे पौदे निकल आते हैं। इन्हीं को खोदकर दूसरी जगह लगाते हैं।

गरमी के मौसम के पहले ज़मीन को गहरा जोतकर गरमी-भर पड़ी रहने देते हैं। बरसात में पंद्रह-पंद्रह फ़ीट के अंतर पर तीन फ़ीट गहरे गढ़े खोदकर पौदे लगा दिए जाते हैं।

कुछ लोगों का मत है कि गरमी के दिनों में पौदे लगाए जायँ, तो अच्छा है। कारण, उस मौसम में ज़मीन गरम रहती है,

जिससे पौदे जल्दी जड़ पकड़ लेते हैं। परंतु सारी फ़सल एक ही साथ न पकने पावे, इसलिये फ़सल चैत्र से वैशाख तक पंद्रह-पंद्रह दिन के अंतर से बोई जाती है। उनके मत से बरसात में लगाए हुए पौदे जल्दी जड़ नहीं पकड़ते, जिससे कई पौदे सूख जाते हैं।

खाद—इसको ज्यादा खाद की जरूरत होती है। इसलिये फ़सल बोने के एक, दो और तीन महीने के बाद खाद दी जानी चाहिए।

(१) ५ सेर रेंडी की खली, और ७ सेर मछली की खाद

(२) २ सेर रेंडी की खली
२ सेर सलफ़ेट ऑफ़ अमोनिया
½ सेर सलफ़ेट ऑफ़ पोटाश
,, सेर सुपरफ़ासफ़ेट
} मिलाकर

उक्त दोनो ही प्रकार की खाद केले के लिये अच्छी है। ऊपर लिखा हुआ मिश्रण का परिमाण एक पेड़ के लिये है।

पौदे की जड़ों क आस-पास की मिट्टी कुछ हटाकर यह मिश्रण थालों में डाल दिया जाय।

सिंचाई—आवश्यकता के अनुसार पानी दिया जाना चाहिए।

बोने के क़रीब १०-१२ महीने बाद पहली फ़सल आती है। केले के खेत में हर साल हरी खाद देते रहना चाहिए। एक बार फल देने के बाद पौदा बेकाम हो जाता है, इसलिये उसे काट डालना चाहिए। इस पौदे के पास ही छोटे-छोटे चार-पाँच पौदे

उग आते हैं। उन सबको बढ़ने देने से बड़े पौदे को नुक़सान पहुँचता है। इसलिये जिस समय सबसे बड़ा पौदा फलने लगे, उस समय दूसरे पौदे की आधी बाढ़ हो जानी चाहिए, और तीसरा पौदा दो फ़ीट से ज्यादा ऊँचा न हो। किसी पौदे के पास दो से ज्यादा पौदे न रहने देना चाहिए। तीन से ज्यादा पौदे हों, तो शेष सब काटकर फेक देने चाहिए। प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो गया है कि खाद और जुताई-निराई आदि पर ज्यादा ध्यान देने से फलों की संख्या बढ़ जाती है। यदि प्रतिवर्ष ख़ूब खाद डाली जाय, तो एक ही खेत में लगातार पाँच वर्ष तक केले की फ़सल रक्खी जा सकती है। पाँच वर्ष के बाद केले की फ़सल उस खेत में कदापि न रक्खी जानी चाहिए, और फिर तीन वर्ष तक उस खेत में केला न बोना चाहिए।

पूरी बाढ़ हो जाने के बाद फलों का गुच्छा वृक्ष से अलग कर अँधेरे में लटका दिया जाता है। बहुत-से स्थानों में फल पकाने के लिये दूसरी ही तरकीब काम में लाई जाती है।

विशेष सूचना—खेत की निराई, गुड़ाई और जुताई पर ख़ूब ध्यान दिया जाना चाहिए। फलों का गुच्छा भर जाने पर फूल काट डालना चाहिए; नहीं तो फल अच्छे नहीं भरेंगे। जहाँ तक हो सके, केले की फ़सल ऐसे स्थान पर बोनी चाहिए, जहाँ हवा से उसको नुक़सान पहुँचने का डर कम हो। यदि हवा से पौदों को नुक़सान पहुँचने का अंदेशा हो, तो पत्ते चीर

देना चाहिए। और, पौदे को बाँस आदि की थूनियाँ गाड़कर सहारा दे देना चाहिए। जहाँ तक हो सके बहुत जल्दी पौदे पर का सूखा पत्ता काटकर फेंक देना चाहिए। फलों के गुच्छे को भी थूनियाँ गाड़कर सहारा दे दिया जाना चाहिए।

अंजीर

अंजीर, बरगद, पीपल और गूलर एक ही जाति के पेड़ हैं। ये गरम प्रदेशों में होते हैं। इनके फूल दिखाई नहीं पड़ते, और इसीलिये कहा जाता है कि ये पौदे बिना फूल के ही फलते हैं। परंतु असल में यह बात नहीं है। जिन्हें फल कहा जाता है, वे ही फूल हैं।

पंजाब, सिंध, बलूचिस्तान, बंबई आदि प्रांतों में इसकी खेती अधिक की जाती है। अंजीर का पेड़ छ-सात फीट की ऊँचाई तक बढ़ता है, और बाग़ बीस वर्ष तक टिकता है।

जाति—अंजीर की दो जातियाँ हैं, हरी और लाल। दोनो ही जातियों के फल एक-से मधुर होते हैं।

इसका फल सुकुमार होता है। वैशाख-ज्येष्ठ में फल पकने लगते हैं। क़लम लगाने के दूसरे ही साल कुछ फल आ जाते हैं; परंतु तीसरे वर्ष से ज्यादा फल आने लगते हैं।

यह साल में दो बार फूलता है। पहली बार बरसात में, और दूसरी बार गरमी में। साल में एक ही फ़सल को फलने देना फ़ायदेमंद है। कारण, दोनो फ़सलें लेने से पौदा कमज़ोर हो जाता है, और ज्यादा दिनों तक ज़िंदा नहीं रहता। सुखाए

हुए अंजीर कई दिन तक ख़राब नहीं होते। मस्कत में ही अंजीर अच्छे सुखाए जाते हैं। भारतवर्ष में सुखाए हुए अंजीर जल्दी ख़राब हो जाते हैं।

उपयोग—इसके पक्के फल खाए जाते हैं, और कच्चे फलों की तरकारी बनाई जाती है।

ज़मीन—अंजीर हर तरह की ज़मीन में हो सकता है; परंतु जिस ज़मीन में पानी का निकास न हो, उसमें कम जमता है। जिस ज़मीन में चूने का अंश अधिक हो, वह अंजीर के लिये अच्छी है।

बोने की तरकीब—खेत में १०-१५ फ़ीट के फ़ासले पर क़तारों में गढ़े खोदे जायँ। दो गढ़ों के बीच में उतना ही फ़ासला रक्खा जाय, जितना कि दो क़तारों में रक्खा गया है। गढ़े तीन फ़ीट की गोलाई में तीन फ़ीट गहरे खोदे जायँ। गोबर की सड़ी हुई खाद और मिट्टी बराबर-बराबर मिलाकर गढ़े भर दिए जायँ।

पौदा तैयार करना—एक साल की शाखा को काटकर छाँहदार जगह में लगाने से वह जड़ पकड़ लेती है। यही पौदा फिर बरसात के प्रारंभ में खेत में लगाया जाता है। दाब-क़लम (Layring) द्वारा भी रोपे तैयार किए जा सकते हैं।

सिंचाई—बरसात के बाद पौदों को हर चौथे-पाँचवें दिन पानी दिया जाना चाहिए। फल आने के बाद बहार ख़तम

होने तक तीसरे दिन सिंचाई होना ज़रूरी है। जो काफ़ी पानी न मिलेगा, तो फल छोटे आवेंगे।

खाद—अंजीर के लिये मछली की खाद सर्वोत्तम है। हर पेड़ के लिये ७ सेर मछली की खाद काफ़ी है। गोबर की खाद भी अच्छी है। दोनो ही प्रकार की खाद नवंबर से जनवरी तक (अगहन से माघ तक), पौदे की जड़ें खोलकर, देनी चाहिए।

छँटाई—शुरू में पौदे को १८ इंच तक सीधा बढ़ने देना चाहिए। इस उँचाई तक जितनी डालियाँ निकलें, वे सब तोड़ दी जानी चाहिए। इसके बाद पौदे का सिरा काट डाला जाय। ऐसा करने से कुछ डालियाँ निकल आवेंगी। एक फ़ुट लंबी हो जाने पर उनको काटकर कुछ छोटी कर देना चाहिए। सब कमज़ोर डालियाँ बिलकुल काट डाली जायँ। और, जहाँ बहुत-सी शाखाएँ पास-पास आ गई हों, वहाँ की कुछ डालियाँ काट डाली जायँ। तब फिर इन शाखाओं को बढ़ने देना चाहिए।

ठंडी हवावाले प्रदेशों में अंजीर में ज़्यादा पत्ते निकल आते हैं। इसलिये कुछ पत्ते तोड़ डालना चाहिए। ज़्यादा पत्तेवाले पौदों में फल कम बैठते हैं।

पौदों की छँटाई खाद डालने के पहले ही की जानी चाहिए।

अंजीर के पौदे में गाँठ के पास दो आँखें होती हैं। एक आँख से निकली हुई डाली में फल लगते हैं। दूसरी आँख से निकली हुई डाली में फल नहीं लगते। जिस डाली में फल न

लगें, वह काट डाली जाय, और फलवाली शाखा पूरी बाढ़ होने तक रहने दी जाय। पूरी बाढ़ होने के एक महीने बाद इस डाली की फुनगी तोड़ डालनी चाहिए। ऐसा करने से फल मोटे होते हैं। फल तोड़ लेने के बाद इन शाखाओं को भी काट डालना चाहिए। सिर्फ कुछ छोटी-छोटी शाखाएँ रहने देना चाहिए। फलों का पकना शुरू होने पर उनके पास के पत्ते भी तोड़ डालने चाहिए।

हवादार जगह पर लगाए हुए पौदों के फल बड़े और मधुर होते हैं। इटली में पकना शुरू होने के बाद शीघ्र ही अलपीन से छेदकर फलों में आलिव का तेल या मीठा तेल भरते हैं। कहा जाता है कि ऐसा करने से फल बड़े होते हैं।

पपीता (रेंड़ककड़ी)

कहा जाता है, पपीते की जन्मभूमि वेस्ट इंडीज़ द्वीपसमूह और अमेरिका है। कह नहीं सकते, भारतवर्ष में यह कब लाया गया। प्राचीन संस्कृत-ग्रंथों में इसका वर्णन पाया जाता है। इससे अनुमान होता है कि संभवतः इसका आदिस्थान भारत ही है। फलों के लिये इसकी खेती भारत के क़रीब-क़रीब सभी प्रांतों में की जाती है। सिलहट, बँगलोर, ऊटकमंड और सिलोगर्क फल सर्वोत्तम माने जाते हैं। यह वृक्ष बंबई, आसाम, बँगलोर, पंजाब, युक्त प्रांत आदि में बहुत बोया जाता है।

पपीते के वृक्ष में शाखाएँ नहीं होतीं। फिर भी अपवाद-

स्वरूप कुछ पेड़ों में दो-चार शाखाएँ निकल भी आती हैं। पपीते का पेड़ क़रीब २०-२५ फ़ीट ऊँचा होता है। इसका तना पोला होता है।

आब-हवा और ज़मीन—सूखी और तर आब-हवावाले प्रांतों में यह सफलता-पूर्वक बोया जा सकता है। सभी तरह की ज़मीन में इसकी खेती की जा सकती है। किंतु जिसमें रेत और चूने का अंश हो, वह ज़मीन इसके लिये अच्छी होती है। जिस ज़मीन में पानी भरा रहता हो, वह इसके लिये अच्छी नहीं है।

बोने की तरकीब—दो-तीन बार हल चलाकर खेत की मिट्टी ख़ूब ढीली कर दी जानी चाहिए। फिर हेंगा या सरावन चलाकर मिट्टी बराबर कर दी जाय। इसके बाद, १०-१० या १५-१५ फ़ीट के फ़ासले पर, तीन फ़ीट गहरे, तीन फ़ीट लंबे और तीन फ़ीट चौड़े गढ़े खोदे जायँ। क़रीब २० दिन तक गढ़ों को धूप और हवा लगने देनी चाहिए। पीछे हरएक गढ़ा एक टोकनी गोबर की खाद और मिट्टी के मिश्रण से भर दिया जाय। पौदे लगाने या बीज बोने के पहले गढ़ों की मिट्टी पानी से तर कर दी जानी चाहिए, जिसमें वह जम जाय।

बीज जन्मस्थली या गढ़ों में ही बोए जाने चाहिए। गढ़ों में बीज बोना फ़ायदेमंद नहीं; क्योंकि निराई, गुड़ाई और छोटे पौदों पर छाया करने आदि में बहुत ख़र्च होता और मिहनत पड़ती है। परंतु जन्मस्थली में पौदों की हिफ़ाज़त

आसानी से की जा सकती है। अतएव जन्मस्थली में ही बीज बोए जाने चाहिए।

गढ़ों में पौदे सीधे लगाए जायँ, और जड़ों की मिट्टी कुछ दबा दी जाय। पौदे लगाने के बाद शीघ्र ही पानी दे दिया जाय।

पौदे तैयार करना—बक्स या जन्मस्थली में, शीत-काल के प्रारंभ में या गरमी के मौसम में, किसी समय, बीज बोया जा सकता है। ख़ूब पके हुए फल के बीज ही बोने के काम में लाए जाने चाहिए। पुराने बीज कदापि न बोए जायँ। आठ-दस दिन में बीज अंकुरित हो जाते हैं।

बोने का मौसम—पपीते के स्थायी स्थान पर लगाने का सबसे अच्छा मौसम सितंबर-आक्टोबर का है; क्योंकि इस मौसम में जन्मस्थली से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाए हुए पौदों की जुलाई और अगस्त की भारी वर्षा से रक्षा हो जाती है, और जनवरी-फ़रवरी का घोर शीत और पाले का समय आने तक वे अच्छी तरह जम जाते हैं, जिससे पाले से उनको अधिक हानि पहुँचने की संभावना नहीं रहती। सितंबर-ऑक्टोबर के बाद बोए हुए पौदों के पाले से नष्ट हो जाने का डर रहता है।

फल—पपीते का पौदा बहुत जल्दी बढ़ता और एक साल की उम्र में ही फलने लगता है। पाँच-छ महीने की उम्र होते ही पपीते के पौदे में फूल आने लगते हैं।

फल वृक्ष के पत्तों को जड़ों में लगते हैं। कच्चे फलों का रंग हरा और गूदा सफेद होता है। पके फल की छाल पर पीले रंग की झाईं आ जाती है। गूदे का रंग भी बदल जाता और बीज भी काले हो जाते हैं।

जाति—नर और मादा जाति के पौदे अलग-अलग होते हैं। मादा जाति के पौदों में ही फल लगते हैं। अतएव सौ मादा पौदों के तख्ते में कम-से-कम एक नर पौदे का होना बहुत जरूरी है। नर पौदे में नर फूल ही होते हैं, और मादा पौदे में मादा फूल। परंतु कभी-कभी एक ही वृक्ष में दोनो प्रकार के फूल भी पाए जाते हैं, और यही कारण है कि कभी-कभी नर जाति के वृक्ष में भी फल निकल आते हैं। किंतु नर जाति के वृक्ष में लगे हुए फल छोटे होते हैं और उतने स्वादिष्ठ भी नहीं होते।

मादा वृक्ष के फूल हरी झाईं-मिले पीले रंग के और घटी के आकार के होते हैं। ये नर जाति के वृक्ष के फलों से कुछ बड़े भी होते हैं। नर जाति के फूल अधिक सुगंधित होत हैं। जहाँ तक हो सके, नर जाति के वृक्ष के उत्तम फल ही बीज के लिये चुने जायँ; क्योंकि इन बीजों से पैदा हुए दोनो ही जाति के पौदों में फल लगते हैं।

सिंचाई—पपीते की सिंचाई पर खूब ध्यान दिया जाना चाहिए, और विशेष सावधानी रखना जरूरी है। हरएक पौदे के चारों ओर पानी के लिये छिछला गढ़ा होना और हर

दूसरे-तीसरे दिन पौदों को पानी दिया जाना चाहिए। यदि पपीते के पेड़ पानी की नाली के किनारे बोए गए हों, तो हर आठवें-दसवें दिन पानी देना काफ़ी है। परंतु यह स्मरण रखना चाहिए कि किसी भी हालत में वृक्षों की जड़ों में पानी भरा न रहे; क्योंकि इससे वृक्षों को बहुत नुक़सान पहुँचता है।

रक्षा—पाले से पौदों को बहुत हानि पहुँचती है। ठंड ज्यादा पड़ने पर या पाला पड़ने के कुछ समय पहले बार-बार सिंचाई करना ज्यादा फ़ायदेमंद है। इसका पेड़ पोला होता है, इससे ज़ोर की हवा में उसके टूट जाने का डर रहता है। अतएव यह ज़रूरी है कि ये ऐसे स्थान पर बोए जायँ, जहाँ ज़ोर की हवा का झोंका इनको हानि न पहुँचा सके। शीतकाल में नए लगाए पौदों के अंकुर पर घास डाल देना फ़ायदेमंद है। ऐसा करने से अंकुर के आस-पास का ताप-मान वातावरण से कुछ ऊँचा रहेगा।

उपयोग—कच्चे फलों की भाजी बनाई जाती है। पके फल खाए जाते हैं। गरमी के मौसम में पके फल ज्यादा रुचिकर मालूम होते हैं। पपीते का उपयोग दवाओं में बहुत अधिक किया जाता है। पपीते के कच्चे फल के दूध से 'पेपसिन' बनाया जाता है। भारतवर्ष के योगरत्नाकर, भावप्रकाश आदि ग्रंथों में पपीते के गुणों का ख़ूब बखान किया गया है। पपीता बवासीर को फ़ायदा पहुँचता और ज़ायक़ा बढ़ाता है। कम

दूध उतरने लगने पर औरतों को पपीता खिलाया जाता है, जिससे खूब दूध उतरने लगता है। कहा जाता है, पपीते का दूध दाद और बिच्छू की उत्तम दवा है।

आवश्यक सूचनाएं—पपीते का वृक्ष पाँच वर्ष तक जीवित रहता है, किंतु प्रतिवर्ष गोबर की खाद देते रहने से वह दस वर्ष तक टिक सकता है। इसके फल बहुत पास-पास लगते हैं, अतएव थोड़े-से फलों को तोड़ डालना चाहिए, और शेष सब फूल भी तोड़कर फेक देने चाहिए। ऐसा करने से फलों का आकार बढ़ जाता है।

हरएक वृक्ष में ७५ फल लगते हैं, और एक एकड़ ज़मीन में क़रीब ३०० वृक्ष रह सकते हैं। यदि एक फल एक या दो आने को बेचा जाय, तो किसी भी हालत में एक एकड़ ज़मीन में एक हज़ार रुपयों से कम की आमदनी नहीं हो सकती।

पपीते की छँटाई करने की ज़रूरत नहीं होती। किंतु हवा से टूटी हुई डालियाँ और पत्ते काटकर फेकना बहुत ज़रूरी है।

पपीते का वृक्ष कीड़ों और रोगों से एकदम बचा हुआ है।

शुरू में पौदे का बढ़नेवाला भाग यानी अंकुर काट डालने से डालियाँ ज्यादा निकलेंगी, और फल भी अधिक लगेंगे। धूप से फल फट जाते हैं। इसलिये उनको धूप से बचा रखना चाहिए। पूरी बाढ़ होते ही फलों को तोड़कर पकने के लिये भूसे में गाड़ देना चाहिए।

अनार

अनार दक्षिण-एशिया के सब देशों में होता है। कंधार और जलालाबाद के अनार बड़े और मीठे होते हैं। मस्कत के अनार के दाने छोटे और नरम होते हैं। मस्कत, फ़ारस और बसरे से हर साल बंबई को हजारों रुपए के अनार आते हैं। ये कई दिन तक ख़राब नहीं होते। अनार का पेड़ ख़ूबसूरत होता है। फूलने पर इसकी शोभा मनोहर होती है।

जाति—अनार की दो मुख्य जातियाँ हैं। एक जाति के फलों के दाने सफ़ेद होते हैं, और दूसरी के लाल।

फल—पौदा लगाने के चार वर्ष बाद फल निकलने लगते हैं। अनार की साल में दो फ़सलें होती हैं। पहली फ़सल कार्तिक-अगहन में, और दूसरी आषाढ़ में। पहली फ़सल के फल उत्तम माने जाते हैं। अनार का फल नारंगी के फल के समान बड़ा होता है; परंतु इसका छिलका बहुत कड़ा होता है।

उपयोग—पके फल के दाने खाए जाते हैं। अनार का शरबत भी बनाया जाता है। इसकी छाल से कपड़े और चमड़ा रँगा जाता है। मरक्को-चमड़े में इसी का रंग दिया जाता है।

जमीन—सब तरह की ज़मीन में इसकी खेती की जा सकती है। परंतु बलुआ दुमट और चूने के अंशवाली ज़मीन इसके लिये अच्छी है।

बोने की तरकीब—बीज; दाब-क़लम (Layring), डाली लगाकर और दो डालियों के संयोग से रोपे तैयार किए जाते हैं।

क़लम और पेबंद के लिये जनवरी या अगस्त (पौष-माघ या-श्रावण) ही उपयुक्त हैं।

खेत में २० फ़ीट के अंतर पर तीन फीट गहरे गढ़े खोदे जायँ। गोबर की खाद और पुराना चूना मिलाकर मिट्टी से गढ़े भर दिए जायँ, और तब बरसात में रोपे इन गढ़ों में लगा दिए जायँ।

छँटाई—दिसंबर-जनवरी (अगहन-पौष) में पौदों की छँटाई की जानी चाहिए। सूखी और कमज़ोर डालियाँ काट डालना और पौदे को ठीक आकार का बना लेना चाहिए।

खाद—छँटाई ख़तम होने के बाद पौदे की जड़ें खोल दी जायँ। उन्हें क़रीब एक महीने तक खुला रहने देना चाहिए। इसके बाद पुराना चूना और सड़े हुए गोबर की खाद मिलाकर जड़ों में डाल दी जाय।

पक्षी की बीट की खाद अनार के लिये बहुत अच्छी है। परंतु यह कम मिलती है, इसलिये बकरी की लेंड़ी की खाद दी जाती है।

सिंचाई—गरमीके मौसम में सिंचाई खूब की जानी चाहिए। माघ-फागुन (फ़रवरी-मार्च) के क़रीब पौदे फूलने लगते हैं। इसलिये इस समय यदि जून तक काफ़ी पानी न दिया जायगा, तो फूल गिर पड़ेंगे। फल लगने के बाद सप्ताह में एक बार खाद का घोल दिया जाय, तो अच्छा हो।

आवश्यक सूचनाएँ—पौदे की जड़ों से अक्सर छोटे-छोटे

पौदे उग आते हैं। इनको काट डालना चाहिए; नहीं तो फल अच्छे नहीं निकलेंगे।

शत्रु—एक प्रकार का कीड़ फलों में घुसकर उन्हें नष्ट कर डालता है। इससे फल की रक्षा करने का सरल उपाय यह है कि फूल आने पर महीन मलमल की एक थैली उस पर बाँध दी जाय। थैली बाँधने के पहले फूल को अच्छी तरह देख लेना चाहिए कि उसमें अंडे तो नहीं हैं।

अमरूद

भारतवर्ष के सभी प्रांतों में अमरूद की खेती की जाती है। अमरूद का वृक्ष बारह वर्ष तक खूब फलता है। बाद को इसके फलों का आकार छोटा होता जाता है। २५ वर्ष के पुराने अमरूद के बाग़ पाए जाते हैं; परंतु खूब हिफ़ाज़त रखनी पड़ती है।

जाति—इसकी कई जातियाँ हैं। भिन्न-भिन्न जातियों के फलों का आकार और स्वाद जुदा-जुदा होता है। कुछ जातियों के फलों के गूदे का रंग जुदा-जुदा होता है। कुछ जातियों के फलों में ज्यादा बीज होते हैं, और कुछ में कम।

फल—पौदा, बोने के तीन-चार वर्ष बाद, फलने लगता है। आषाढ़-श्रावण से फागुन-चैत तक पौदा फलता रहता है। इस अवधि में इसकी दो फ़सलें होती हैं।

उपयोग—फल खाए जाते हैं। लकड़ी से बंदूक़ के दस्ते बनाए जाते हैं। छाल और पत्तों से, आसाम में, चमड़ा रँगा जाता है।

ज़मीन—बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है। मगर सभी तरह की ज़मीन में यह बोया जा सकता है। पानी के निकासवाली काली ज़मीन में भी यह अच्छा होता है।

बोने की तरकीब—बीज के लिये रक्खे हुए फल को वृक्ष पर ही पकने देना चाहिए। बीज वर्षा के प्रारंभ में बोए जाते हैं। कहीं-कहीं दाब-क़लम से भी रोपे तैयार किए जाते हैं। एक साल तक पौदे जन्मस्थली में रक्खे जाते हैं। जन्मस्थली में दो पौदों के बीच में एक बालिश्त-का अंतर रखना चाहिए। दूसरी बरसात में पौदे पंद्रह-पंद्रह फ़ीट के अंतर पर खेतों में बोए जाते हैं।

सिंचाई— रोपे लगाने के बाद यदि पानी न बरसे, तो पौदों को रोज़ सुबह-शाम सींचना चाहिए। जड़ पकड़ लेने पर हर चौथे या पाँचवें दिन सिंचाई की जानी चाहिए।

खाद—फूल आने पर पौदों की जड़ें खोलकर एक अठवाड़े तक धूप में तपने देना चाहिए। इसके बाद मल की खाद, भेड़-बकरी की मेंगनी. लकड़ी की राख, गोबर की खाद आदि का महीन चूरा मिट्टी में मिलाकर उससे जड़ें ढक देना चाहिए। यदि महुए या तिल की खली डाली जायगी, तो फल बड़े और ज्यादा आवेंगे।

सूचना— पौदे की छोटी-छोटी शाखाएँ काट डालने से फल अच्छे आते हैं। पुराने पेड़ में फल न लगें, तो उसका तना ज़मीन से एक फ़ुट की उँचाई पर से काट डालना चाहिए।

यदि पौदे में ज्यादा फल लगें, तो कुछ तोड़ डालना चाहिए। इससे फल बड़े निकलते हैं।

जाँब

दक्षिण-भारत में यह ज्यादा बोया जाता है। पेड़ लगाने के क़रीब छः साल बाद पौदा फलने लगता है। इसकी दो जातियाँ हैं—खट्टी जाँब और मलक्का जाँब। पहली जाति का पेड़ बहुत ऊँचा होता है। इसके फूल लाल और फल सफ़ेद तथा बड़े होते हैं। मलक्का जाँब का पेड़ ज्यादा ऊँचा नहीं होता। इसके फूल सफ़ेद और फल कुछ पीला होता है। जाँब के फल में सुगंध आती है, और वह मीठा भी होता है। गुलाबी जाँब नाम की एक और भी जाति है; जिसके फलों का रंग गुलाबी होता है। यह स्वादिष्ठ होता है, और महँगा भी बिकता है।

जमीन—यह रेतीली जमीन में अच्छा होता है।

बोने की तरकीब—बीज जन्मस्थली में बोया जाता है। क़रीब २ फ़ीट ऊँचा पौदा खेतों में १०-१५ फ़ीट के फ़ासले पर बोया जाता है।

सिंचाई—पौदे को हर चौथे दिन पानी दिया जाना चाहिए।

खाद—गोबर और मेंगनी की खाद इसके लिये अच्छी है।

आड़ू या शफ़तालू

पेशावर, क्वेटा आदि कुछ स्थानों के आड़ू विशेष प्रसिद्ध हैं। पूसा, पँचगानी, बँगलोर, सहारनपुर आदि स्थानों में आड़ू अच्छे होते हैं। समतल-प्रदेशों में आड़ू मई-जून में फलता है।

परंतु कोटा में अगस्त से ऑक्टोबर तक फल लगते हैं। जिन प्रांतों में बरसात जल्दी शुरू होती है, उन प्रांतों में जल्दी पकने-वाली जातियाँ बोई जानी चाहिए।

जाति—इसकी कई जातियाँ हैं। चायना फ्लैट, निकल्स लार्ज, एंडरसन स्प्रिंग, हिल्स, पेरेगान, स्लिप स्टोन आदि कुछ जातियों के फल जल्दी पक जाते हैं। अजक ग्रंडर नोबल, डाहाग, अरली रिवर, अरली यार्क, रॉयल जॉर्ज और स्टर्लींग कासल नाम की जातियाँ मैदानों में नहीं फलतीं।

ज़मीन—बलुआ दुमट ज़मीन में आड़ू अच्छा होता है। तथापि मटियार ज़मीन के सिवा और सब तरह की ज़मीन में इसकी खेती की जा सकती है।

बोने की तरकीब—बीज या पेबंद (Ring grafting) से पौदे तैयार किए जाते हैं। बीज ऑक्टोबर-नवंबर (आश्विन-कार्त्तिक) के क़रीब बोया जाता है, और लगभग छ महीने में उगता है। परंतु बीज से तैयार किए हुए पौदे अच्छे नहीं होते इसलिये बीज से तैयार किए हुए पौदे गमलों में लगाकर उन पर उत्तम जाति के पौदों का पेबंद चढ़ाया जाता है। एप्रिल, मई या जून में आड़ू, आलूबुख़ारा और अलूचे पर भोंगली पेबंद (Ring grafting) चढ़ाया जाता है।

पौदे पहले जन्मस्थली में, डेढ़-डेढ़ फ़ीट के अंतर पर, बोए जाते हैं। दो क़तारों के बीच में ढाई फ़ीट का अंतर रक्खा

जाता है। जनवरी में पौदे खेत में २०-२० फ़ीट के अंतर पर लगाए जाते हैं। पौदा लगाने के पहले गढ़े में गोबर की खाद डालनी चाहिए।

सिंचाई—ज़रूरत के माफ़िक़ सिंचाई की जानी चाहिए।

खाद—नवंबर-दिसंबर में जड़ें खोलकर एक अठवारे तक धूप में तपने देना चाहिए, और तब गोबर की खाद और मिट्टी से उनको ढक दो। यह काम हर साल किया जाय।

छँटाई—पतझड़ के बाद छँटाई की जानी चाहिए। यदि पत्ते न गिरें, तो कुछ दिन तक सिंचाई न करनी चाहिए। जड़ें खोलने के बाद शीघ्र ही सब सड़ी और कमज़ोर डालियाँ काट डाली जायँ।

अलूचा

विदेशी जातियों के सिवा दूसरी सब जातियाँ समतल-प्रदेशों में बोई जा सकती हैं। अलूचा मई-जून में फलता है।

जाति—छोटा और बड़ा आलू बुख़ारा, काला, लाल और पीला अलूचा, ड्वार्फ़ अरली यलो, ड्वार्फ़ अरली रेड, लदख अलूचा और केलसे जापान नाम की जातियाँ बहुत अच्छी हैं।

ज़मीन—दुमट ज़मीन में यह अच्छा होता है। परंतु पानी के निकास की तजवीज़ ज़रूर की जानी चाहिए।

बोने की रीति—शीत-काल में ही इसका बीज बोया जाता है। कहीं-कहीं बरसात में भी बोते हैं।

खेत में तीन फ़ीट गहरे और पाँच फ़ीट गोल गढ़े बीस-बीस

फीट के अंतर पर खोदे जायँ। फिर वे गढ़े मिट्टी और गोबर की खाद मिलाकर उससे भर दिए जायँ।

बीज जन्मस्थली में बोया जाता है। क़रीब एक फ़ुट ऊँचे पौदे खेत में लगाए जाते हैं। पौदे लगाने के बाद जल्दी ही सिंचाई की जानी चाहिए। जापानी जाति के पौदे आठ वर्ष में और दूसरे चार वर्ष में फलने लगते हैं।

सिंचाई—फल लगने पर पौदों को ख़ूब पानी दिया जाना चाहिए। और, फल तोड़ लेने तक सिंचाई जारी रखनी चाहिए।

खाद—हर साल शीत-काल में ख़ूब खाद दी जानी चाहिए। ज वरी में जड़ें खोलकर कुछ दिन तक उन्हें धूप लगने देनी चाहिए। इसके बाद जड़ें गोबर की खाद और मिट्टी से ढक दी जायँ।

छँटाई—पेड़ के पत्ते गिर जाने पर डालियों का ⅓ भाग काट डाला जाय। वृक्ष की डालियाँ जो ज्यादा पास-पास हों, वे भी काट डाली जायँ; जिससे हवा और प्रकाश प्रवेश कर सके। साथ ही कमज़ोर और ख़राब डालियाँ भी काट डालना चाहिए। यदि जनवरी में पत्ते न गिरे, तो आठ-दस दिन तक सिंचाई न करनी चाहिए, और जड़ें भी खोल देना चाहिए। ऐसा करने से पत्ते गिरने लगेंगे।

रोपे तैयार करना—बीज से, डाली लगाकर और पेबंद द्वारा रोपे तैयार किए जा सकते हैं। अगस्त-सितंबर (श्रावण-

भाद्रपद) में बीज बोया जाता है, और वह क़रीब चार महीने में उगता है। नवंबर से जनवरी तक (कार्त्तिक से पौष तक) डाली लगाई जाती है। पेबंद मई-जून (जेठ-वैशाख) में किया जाता है। चश्मा बाँधकर भी रोपे तैयार किए जाते हैं।

बिही

यह पौदा चीन से आया है, और उत्तर-भारत में बहुत बोया जाता है। बंबई-प्रदेश में यह पूना, सतारा आदि स्थानों में बोया जाता है। वहाँ यह फलता भी है, परंतु अन्य स्थानों में इसमें फल नहीं लगते।

ज़मीन—दुमट जमीन इसके लिये अच्छी है।

बोने की तरकीब—डाली लगाकर पौदा तैयार किया जाता है। बरसात में पौदा खेतों में लगाया जाता है। यह आठ वर्ष में फलता है।

सिंचाई—फल निकल आने पर हर तीसरे दिन सिंचाई की जानी चाहिए। फलों के पकने पर पानी देना कम कर दिया जाय।

शेष सब बातें अलूचा की तरह जानो।

आम

भारतवर्ष में आम बहुत प्राचीन काल से बोया जाता है। ईसा से १५० वर्ष पूर्व के बौद्ध स्तूपों में आम के पेड़ के चित्र पाए जाते हैं। वेदों में भी कई जगह आम का उल्लेख किया

गया है। इससे मानना पड़ता है कि आम की जन्मभूमि भारत ही है।

आम गरम देशों में होता है। नेटाल, क्वींसलैंड, कनारी द्वीपसमूह और फ्लॉरिडा में भी आम होता है।

वर्णन—आम का पेड़ बहुत ऊँचा होता है, और फैलता भी बहुत है। आम के पत्ते छ इंच से १२ इंच तक लंबे और २-३ इंच चौड़े होते है। आम के फूल छोटे पीले और पंखड़ियों की जड़ के पास कुछ लाल होते हैं। जनवरी, फ़रवरी और मार्च में आम बौरते है, और फल मई से सितंबर तक पकते रहते हैं।

जाति—आम की अनेक जातियाँ है। भिन्न-भिन्न जातियों के फलों का आकार स्वाद और रंग जुदा-जुदा होता है।

भारतवर्ष में आलफ़ेंसो, चीना, गोपालभोग, लँगड़ा, बड़ा मालदह, पीटर, सिंगापुर सुंदरशा, मुर्शिदाबाद और पश्चिमोत्तर-प्रदेश में सफ़ेदा, दसहरी बंबई नाम की जातियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं। इनके अलावा भतूरा, बतावी, बोगल, कालापहाड़, खीरा, छोटा मोहनभोग, नारीच, आसमानतारा, अरमान, प्याराखास, शाहपसंद नाम की जातियाँ भी बहुत होती हैं। पश्चिम-भारत में पायरी, फरंडीन और कावसजी-पटेल नाम की जातियों का बड़ा नाम है, दक्षिण-भारत में शेवप्पा, शेंदरी कारले आम, खोबरे आम, केसरिया आम आदि जातियाँ ज्यादा बोई जाती हैं।

स्थानाभाव के कारण आम की कुछ ही जातियों के नाम-मात्र लिख दिए गए हैं। अब आम की कुछ और जातियों के नाम दिए जाते हैं। साथ ही यह भी लिख दिया जायगा कि उनके फल कब पकते हैं।

(१) कचमीठा—कच्चा फल भी मीठा होता है। यह एप्रिल और मई में खाया जाता है।

(२) मिठुआ, बंबई आम—ये जून महीने के पकते हैं।

(३) लँगड़ा, किशनभोग, फ़ज़ली आदि जातियाँ जुलाई में पकती हैं।

(४) सीपिया, सुकुल आदि अगस्त में पकते हैं।

(५) ररही, बथुआ, मीरजाफ़र, कटिका आदि के फल सितंबर और ऑक्टोबर में पकते हैं।

(६) बारहमासी बारहो महीने फल देता है।

(७) दुफ़सला आम साल में दो बार फलता है।

आब-हवा—जून से सितंबर तक ५० से १०० इंच तक वर्षा होनेवाले सभी प्रांतों में आम होता है। यदि अच्छी तरह हिफ़ाज़त और सावधानी की जाय, तो अन्य प्रांतों में भी यह बोया जा सकता है। भारत की आब-हवा आम के लिये बहुत उपयुक्त है। और, यही कारण है कि भारत के अधिकांश प्रांतों में आम के पेड़ पाए जाते हैं। भारतवर्ष में बंबई, मुज़फ़्फ़रपुर, हाजीपुर, भागलपुर, दरभंगे, मदरास आदि के आम बहुत अच्छे माने जाते हैं।

ज़मीन—पानी के निकासवाली दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है। जो ज़मीन गरमी के मौसम में अधिक गहराई तक फट जाती हो, वह आम के लिये निकम्मी है। पथरीली और चिकनी मिट्टीवाली ज़मीन में भी इसे न बोना चाहिए। यदि मिट्टी में काफ़ी लोहा और चूना हो, तो और भी अच्छा। आम के लिये मिट्टी में १० सैकड़े चूने का अंश होना अतीव आवश्यक है।

मिट्टी में बहुत अधिक तरी रहने से फलों का स्वाद ख़राब हो जाता है। यदि मिट्टी में बालू का अंश बहुत ज़्यादा होगा, तो वृक्ष कमज़ोर हो जायँगे, और फल का स्वाद और आकार भी बिगड़ जायगा।

बोने का समय—साधारण नियम तो यह है कि जिस मौसम में पौदे की बाढ़ ज़ोरों से जारी हो, उसी मौसम में वह बोया भी जाना चाहिए। मार्च-एप्रिल और बरसात में आम की बाढ़ ज़ोरों से होती है। अतएव आम के पौदे लगाने का यही उत्तम समय है। नवंबर या फ़रवरी से एप्रिल तक बोए हुए पौदे बरसात में बड़ी तेज़ी से बढ़ते हैं, क्योंकि बरसात शुरू होने के पहले पौदे अच्छी तरह ज़मीन में जम जाते हैं। अतएव शीत-काल को छोड़कर साल के दूसरे किसी मौसम में आम के पेड़ लगाए जा सकते हैं। दिसंबर-जनवरी और मई-जून बोने का उत्तम समय है।

बोने की तरकीब—आम के पौदे स्थायी स्थान पर, ३०-३०

फ़ीट के फ़ासले पर बोए जाते हैं। बोने के पहले तीन-फ़ीट लंबे, तीन फ़ीट चौड़े और तीन फ़ीट गहरे गढ़े तीस-तीस फ़ीट के फ़ासले पर खोदे जाने चाहिए। हरएक गढ़े में दो टोकरी गोबर की खाद, एक टोकरी बालू और मिट्टी मिलाकर भर देनी चाहिए। तदनंतर गढ़े की मिट्टी कुछ दबा दी जाय। मिट्टी इस ढंग से दबाई जाय कि गढ़े की सतह पर भी वह बराबर रहे— कहीं गढ़ा न रहने पावे। यदि गढ़ा रह जायगा, तो बोया हुआ पौदा सीधा न बढ़कर झुक जायगा

इन गढ़ों को कम-से-कम तीन सप्ताह तक खूब धूप और हवा लगने देना चाहिए। हर दूसरे रोज़ खूब पानी भी दिया जाना चाहिए।

फागुन-चैत में गढ़े खोदकर उन्हें मृगशिरा-नक्षत्र तक धूप में तपने देना चाहिए। बरसात के आरंभ में गढ़े की पेंदी में राख की दो इंच मोटी तह डाल दी जाय। फिर राख पर चार इंच मोटी तह गोबर की खाद को डाल दी जाय। तब तालाब या नदी-नालों की तह की मिट्टी से गढ़ा भर दिया जाय। काली मिट्टी भी काम में लाई जा सकती है। इस प्रकार गढ़े भरने से पौदों की बाढ़ अच्छी होती है।

अक्सर देखा जाता है कि दूसरे गाँवों से मँगवाए हुए क़लमी आम के पेड़ पारसल से निकालते ही एकदम गढ़ों में—स्थायी स्थान पर—बो दिए जाते हैं। ऐसा करने से कुछ पौदे मर भी जाते हैं। अतएव दूर से मँगवाए हुए पौदे पहले

जन्मस्थली में लगाए जाने चाहिए। जन्मस्थली साएदार और साधारण ठंडी जगह में होनी चाहिए। क़रीब एक महीने तक जन्मस्थली में रखने से पौदे फिर से अपनी खोई हुई ताक़त पा लेंगे। फिर उन्हें स्थायी स्थान में बो देना चाहिए। पौदे लगाने के बाद एक सप्ताह तक सबेरे और शाम को पानी दिया जाना चाहिए।

इस बात पर विशेष ध्यान रखना चाहिए कि पौदे लगाने के बाद गढ़ों की मिट्टी में दरारे न पड़ने पावें।

यदि पौदे गरमी या ठंड के मौसम में लगाए जायँ, तो उन पर घास या खजूर के पत्तों की छाया कर देनी चाहिए। यदि नए लगाए हुए आम के बाग़ में केले बो दिए जायँ, तो और भी अच्छा। केलों के पेड़ों से नए लगाए पौदों पर छाया रहेगी, और हवा में भी तरी बनी रहेगी। किंतु केले का पौदा आम के वृक्ष से कम-से-कम छ: फ़ीट के फ़ासले पर लगाया जाना चाहिए।

बाग़ की हिफ़ाज़त आदि—नए लगाए पौदों की जानवरों से रक्षा करना निहायत ज़रूरी है। हरएक पौदे के चारों ओर काँटे या बाँस का जालीदार कटहरा लगा देने से काम चल सकता है। दसवें-बारहवें दिन निराई करना बहुत ही आवश्यक है।

पहले पाँच साल तक पौदों के बीच की ज़मीन में उरद, मूँग, मटर आदि बोए जा सकते हैं। इनके बोने से ज़मीन

साफ़ और मालिक को कुछ आमदनी भी हो जाती है। इन फ़सलों को बोने से ज़मीन में नत्रजन की मिक़दार बढ़ती है। यदि द्विदल जाति (दालवाली जाति) की फ़सल बोकर फूल लगते ही उसे हल चलाकर ज़मीन में मिला दिया जाय, तो और भी अच्छा। यह हरी खाद बहुत फ़ायदा पहुँचाती है।

आम के बाग़ की कुल ज़मीन को कम-से-कम साल में एक बार हल से जोत देना चाहिए। बरसात शुरू होने के कुछ दिन पहले हल चलाया जाना चाहिए, जिससे बरसात का पानी मिट्टी में जमा होता रहे। आम के गिरे हुए पत्ते ज़मीन पर ही पड़े रहने देना चाहिए, जिससे वे वहीं सड़कर खाद का काम दें।

खाद—अगर आम के पौदों की उम्र तीन साल से कम हो, तो उनकी बाढ़ के लिये खली और गोबर की खाद दी जानी चाहिए। खली देने की सबसे अच्छी रीति यह है कि खली का महीन चूरा करके उसे तीन-चार रोज़ तक पानी में भिगो रक्खे, और फिर खली को घोल डाले। एक साल में, एक पेड़ में एक सेर खली देना काफ़ी है।

हर साल हर पेड़ में एक टोकरी गोबर की खाद दी जानी चाहिए। पूरी बाढ़ को पहुँचे हुए पौदे को पाँच टोकरी गोबर की खाद दी जानी चाहिए।

यदि सितंबर के क़रीब हरएक पेड़ में क़रीब पाँच सेर नमक

डाला जायगा, तो उनकी बाढ़ रुक जायगी, और जनवरी-फ़रवरी में कलियाँ आने लगेंगी।

सुपरफ़ासफ़ेट देने से फल लगाना शुरू हो जाता है। इसलिये पूरी बाढ़ को पहुँचे हुए पेड़ को हर साल क़रीब पाँच सेर सुपरफ़ासफ़ेट दिया जाना चाहिए। इससे फलों का आकार और स्वाद भी बढ़ जाता है।

फल उतार लेने के एक महीने बाद यह लिखा हुआ खाद का मिश्रण हरएक पेड़ में डाला जाना चाहिए—

रेंड़ी की खली	२ सेर
हड्डी का महीन चूरा	२ सेर
चूना	१ सेर
	५ सेर

पेड़ की जड़ें खोल करके ही खाद दी जानी चाहिए। नौसादर और चूना देने से भी फल जल्दी लगते हैं।

सिंचाई—खाद डालने के बाद हर पेड़ के चारों ओर एक गोल क्यारी-सी बनाई जाय। क्यारी का घेरा उतना ही बड़ा हो, जितना कि आम की शाखा और पत्तों का घेरा। इसी क्यारी में सिंचाई का पानी भरा जाना चाहिए। परंतु स्मरण रहे कि पेड़ के तने के चारों ओर तीन फ़ीट की गोलाई तक मिट्टी चढ़ा दी जाय। बड़े पेड़ों के बारहों महीने पानी देने की ज़रूरत नहीं होती। दस वर्ष की उम्र हो जाने पर आम के पेड़ को पानी देने की ज़रूरत नहीं रहती। शीत-काल में, फूलों का

गर्भाधान होने तक, सिंचाई न की जानी चाहिए। छोटे-छोटे फूल देख पड़ने पर १०-१२ दिन का बीच देकर पानी डाला जाय। ज्यादा पानी देने से फलों के डंठल मज़बूत हो जाते हैं, और फलों का गिरना कम हो जाता है।

छँटाई—आम के पेड़ की छँटाई की ज़रूरत नहीं होती। सूखी और रोग लगी हुई डालियों को काटकर अलग कर देना चाहिए। पौदे को कोई ख़ास तरह का आकार देना हो, तो शाखाओं और पत्तों का काटा जाना आवश्यक है।

बरसात के अंत में छँटाई होनी चाहिए, और जहाँ से डाल काटी गई हो, वहाँ गोबर और चिकनी मिट्टी पानी में सानकर लगा देनी चाहिए। इससे ज़ख़्म जल्दी भर जायगा।

शाखाओं की अपेक्षा जड़ों की छँटाई अधिक लाभदायक है। जन्मस्थली से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाते समय मुख्य जड़ को थोड़ा-सा काट डालना अच्छा है। बौर आने के कुछ पहले ज़मीन की सतह के पास-पास फैली हुई जड़ों को काटने से फल ख़ूब लगते हैं। यह अनुभव की बात है।

हर साल फलना—किसी ख़ास पेड़ से हर साल फलों की फ़सल पाना असंभव-सा है, चाहे उसकी कितनी ही हिफ़ाज़त क्यों न की जाय, और उसको कितनी ही खाद क्यों न दी जाय। यदि कृत्रिम उपायों से प्रतिवर्ष फल फलाए जायँगे, तो वृक्ष कमजोर हो जायगा। कुछ समय के बाद वह बाँझ भी हो जायगा, अर्थात् उसमें फल नहीं लगेंगे।

साधारणतः हर दूसरे-तीसरे वर्ष आम का पेड़ फलता है। ज्यादा हिफ़ाज़त और खाद की अधिकता से यह अवधि घटाई जा सकती है, और फलों का आकार और स्वाद भी ऊँचे दर्जे का बनाया जा सकता है।

फूलों के मौसम में बादल, गरमी तथा बादलों के गरजने और वर्षा के कारण फूल ख़राब हो जाते हैं, जिससे फल भी नहीं लगते।

ज़ोर की हवा और अंधड़-तूफ़ान से फल और फूल, दोनों ही झड़ जाते हैं, जिससे फ़सल मारी जाती है।

नीचे लिखी बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए—

(१) प्रतिवर्ष आम के बाग़ की ज़मीन को एक-दो बार हल चलाकर जोत डालना चाहिए।

(२) आम के पेड़ की डालियों और पत्तों के घिराव से दो गज़ अधिक के घिराव की ज़मीन सदा साफ़ रखनी चाहिए।

(३) गिरे हुए पत्तों को ज़मीन में ही सड़ जाने देना चाहिए।

(४) मूँग, मोठ, सन, मूँगफली आदि की फ़सलें प्रथम पाँच वर्ष तक बाग़ की ज़मीन में बोई जा सकती हैं। हरी खाद देना फ़ायदेमंद है।

(५) छोटे छोटे फल लगते ही ख़ूब सिंचाई करते रहना चाहिए।

(६) वृक्ष के सभी फल एकदम कभी न तोड़े जायँ। थोड़े-थोड़े करके, चार-पाँच बार में, तोड़ा जाना ठीक है।

आम के शत्रु—आम के बहुत शत्रु हैं। यहाँ ऐसे कीड़ों के बारे में ही कुछ लिखा जायगा।

आम की मक्खी—इससे आम की फ़सल को बहुत नुक़सान पहुँचता है। ये मक्खियाँ छोटी-छोटी टहनियों और फूलों का रस पी जाती और नए निकले हुए पत्तों में अंडे देती हैं। 'इल्ली' पत्ते और फूल खाकर बढ़ती रहती है। परिणाम यह होता है कि फ़सल मारी जाती है।

वृक्ष के नीचे धुआँ कर देने से लाभ हो सकता है। फ़िनाइल इमलशन छिड़कना भी फ़ायदेमंद है। किंतु आम का पेड़ बहुत बड़ा होता है; इससे इमलशन छिड़कना असंभव-सा है।

आम की वीविल—यह फल के अंदर घुसकर उसको भीतर से ख़राब कर डालती है।

पेड़ को केरोसिन के मिश्रण से धो देना लाभदायक है। शीत-काल में हर महीने इस तरह की धुलाई की जानी चाहिए। पेड़ के आस-पास की मिट्टी को उलट-पुलट डाले, जिससे उसमें ख़ूब धूप लगे।

चेप नाम के रोग से भी आम को बहुत हानि पहुँचती है। बौर खिलने के पहले 'क्रूड आयल इमलशन' छिड़कना इसका अच्छा उपाय है। इमलशन तैयार करने की रीति यह है - पाँच सेर पानी में आध सेर साबुन घोलकर उसे ख़ूब गरम करे। फिर आँच से नीचे उतारकर दस सेर मिट्टी का तेल उसमें

मिलावे। एक भाग मिश्रण में ६० भाग पानी मिलाकर काम में लाना चाहिए।

बाल्यावस्था में चूहे पौदे का तना कुतर डालते हैं। इसलिये तने के चारों ओर तार की जाली लगा देनी चाहिए। पत्ते खाने-वाली इल्ली आम के पत्ते खा जाती है। पेड़ के नीचे डामर की पुती हुई चटाइयाँ बिछाकर डालियाँ हिलाने से इल्लियाँ नीचे गिर पड़ेंगी। उन्हें पकड़कर मार डाले और छेद को मिट्टी से बंद कर दे।

फल जमा करना—अक्सर देखा जाता है कि फल वृक्ष से ज़मीन पर गिराए जाते हैं। ऐसा करने से बहुत-से फल कट-फट जाते हैं। इसलिये एक लंबे बाँस में एक हुक लगाकर उसके नीचे एक जाली लगा दी जाय। हुक की सहायता से फल तोड़ा जा सकता है। तब यह फल उस जाली में आ गिरेगा।

तोड़े हुए फल आम के पत्तों पर पास-पास जमाकर रख देने से ख़ूब पकते हैं। अधपके फल ही तोड़े जाने चाहिए।

उपयोग—आम के पत्ते, फूल, फल, छाल आदि कई प्रकार से काम में लाए जाते हैं। आम के फूलों को उबालकर चटनी बनाई जाती है, जो बहुत अच्छी और ख़ुशबूदार होती है। कच्चे फलों को छीलकर गूदे के टुकड़े कर धूप में सुखा लेते है। यह अमचूर कहलाता है, जो साग, भाजी, दाल आदि में खटाई के तौर पर डालने और चटनी बनाने के काम में आता है। पके आम के रस को धूप में सुखाते हैं, जिसे अमरस

कहते हैं। बंबई के आमों का अमरस बहुत अच्छा होता है। कच्चे आम के फल से अचार, मुरब्बा आदि भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थ बनाए जाते हैं। वैद्यक में भी आम के फलों के गुणों का ख़ूब वर्णन किया गया है।

पौदे तैयार करना—आम की गुठली ही बोई जाती है। साधारणतः गुठली बोकर ही पौदे तैयार किए जाते हैं। गुठली से तैयार हुए वृक्षों में बहुत देर में फल लगते हैं। गुठली से तैयार किए हुए पौदों को तीन साल तक, साल में एक बार करके, एक जगह से दूसरी जगह लगाते रहना चाहिए। हर बार, स्थानांतरित करते समय, मुख्य जड़ का कुछ भाग काट दिया जाय। इस रीति से तैयार किए हुए वृक्ष ५-६ वर्ष के होने पर फलने लगते हैं।

'भेंट-क़लम' और 'गुट्टी' से भी पौदे तैयार किए जा सकते हैं।

फलों को बाहर भेजना—अक्सर देखा जाता है, आम के फल बाँस के टोकरों में भरकर बाहर भेजे जाते हैं। किंतु हमारी राय में तो देवदार की लकड़ी के बक्सों में फल भेजना अत्युत्तम है। टोकरों में भेजने पर उठाने-धरने के समय बार-बार धक्का लगने से बहुत-से फल ख़राब हो जाते हैं। किंतु देव-दार के बक्स में भेजने पर फलों के ख़राब होने का उतना डर नहीं रहता, और न फलों के चुराए जाने का ही खटका रहता है। किंतु यह स्मरण रखना चाहिए कि देवदार के बक्स में चारो ओर छोटे-छोटे छेद अवश्य कर देने चाहिए। इससे फलों

में हवा लगती रहेगी। बक्सों में आम के पत्तों के ऊपर फल जमाकर रक्खे जायँ। एक-एक तह पत्तों की देकर उन पर फल जमाए जायँ।

नीरोग फलों को ही बाहर भेजना चाहिए। क्योंकि एक रोगी फल से बक्स के और भी बहुत-से फल बिगड़ जायँगे; जिससे हानि उठानी पड़ेगी।

अच्छे प्रकार के उत्तम फल ठीक हालत में ही बाहर भेजे जाने चाहिए। ख़राब फल भेजने से बाज़ार में बदनामी होती है, जिससे बहुत ही अधिक हानि उठानी पड़ती है।

अंगूर

अंगूर की लता चढ़ती है। बेल फैलती भी ख़ूब है। लता थूनी या मचान पर चढ़ाई जाती है। अंगूर की छाया बहुत ठंडी होती है, इसलिये इसकी छाया में दूसरे पौदों के गमले रक्खे जा सकते हैं।

भारतवर्ष में अंगूर अति प्राचीन काल से बोया जाता है। मुसलमानों के शासन-काल में अंगूर की खेती को बहुत धक्का पहुँचा। हिंदुस्थान के भीतर हिमालय के कुछ प्रांतों में, और पंजाब तथा काश्मीर में उत्तम जाति के अंगूर होते हैं। बंगाल और मदरास में अंगूर की खेती कम होती है। बंबई-प्रांत में अंगूर अहमदनगर, नासिक और पूना-ज़िले में होता है। औरंगाबाद और दौलताबाद के आस-पास भी अंगूर बोया

जाता है। जिन प्रांतों में ज्यादा पानी बरसता है, उनमें अंगूर नहीं हो सकता।

जाति—आकृति रंग और रुचि के अनुसार अंगूरकी अनेक जातियाँ हैं। एक ही जाति के भिन्न-भिन्न स्थानों में भिन्न-भिन्न नाम हैं। पंजाब और काशमीर में निचे लिखी हुई जातियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं—

क़ंदहारी, किशमिश (विना बीज की छोटी दाख), गुलाब-दान, हुसेनी, साहबी, फ़क़ीरी या असकारी, करघणी और जलालाबादी। जलालाबादी को खट्टा अगूर भी कहते हैं। हुसेनी-जाति को योरप में ह्वाइट पुर्तगाल कहते हैं। इसके अलावा मालगा, कांस्टेंशिया, बेदाना, मस्कतैल आदि विदेशी जातियाँ भी बोई जाने लगी हैं।

उपयाग—इसका फल बहुत रुचिकर होता है। अंगूर को सुखाकर मुनक्का, बेदाना, दाख आदि बनाते हैं। दाखें दवा के भी काम में लाई जाती हैं।

ज़मीन—पानी के निकासवाली किसी भी ज़मीन में अंगूर बोया जा सकता है। अंगूर के लिये ऐसी ज़मीन चुननी चाहिए, जिसमें गरमी के मौसम में दरारे न फटें, और जो क़रीब अठारह इंच की गहराई तक एक-सी काली हो। अंगूर की बेल को हवा से भी नुक़सान पहुँचता है। इसलिये ऐसा स्थान चुना जाना चाहिए, जहाँ ज्यादा हवा न लगती हो।

बोने की तरकीब—बीज, लता या क़लम लगाकर अंगूर

का पौदा तैयार किया जाता है। छोटे-छोटे गमलों में पाँच-सात बीज बोए जाते हैं, और खूब पानी दिया जाता है। पौदों के ६ इंच ऊँचे बढ़ जाने पर गमले बदल दिए जाते हैं। बेल को तब लकड़ियों का सहारा दिया जाता है।

डेढ़ फ़ीट के क़रीब ऊँची हो जाने पर बेलें चौड़े और बड़े गमलों में लगाई जाती हैं। इन्हीं बेलों से दाब-क़लम (layering) द्वारा रोपे तैयार किए जाते हैं। परंतु कुछ काश्तकारों का अनुभव है कि डाली लगाकर तैयार किए हुए पौदे ज्यादा दिन तक टिकते हैं, और फ़सल भी अच्छी होती है। अगस्त-सितंबर (भाद्रपद-आश्विन) में पकी टहनी को इस तरह से काटते हैं कि हरएक टुकड़े पर तीन-चार आँखें रह जायँ। तब ये टुकड़े कुएँ के नज़दीक किसी गीली ज़मीन में बो दिए जाते हैं। टहनी के उस भाग पर जो ज़मीन से बाहर रहता है, गोबर या मिट्टी लगा देनी चाहिए। रोज़ पानी देते रहने से आठ-दस रोज़ में अंकुर निकल आता है। काफ़ी ऊँचाई तक बढ़ जाने पर बेलें खोदकर खेत में लगाई जाती है।

खेत में १० या १५ फीट के अंतर पर तीन फ़ीट गहरे गढ़े खोदे जायँ। वे खाद और मिट्टी से भर दिए जायँ। इन्हीं में रोपे लगाना चाहिए। रोपे लगाने के बाद हर चौथे-पाँचवें दिन पानी देते रहना चाहिए। बेल के बढ़ जाने पर थूनी का सहारा दिया जाना बहुत ज़रूरी है।

कहीं-कहीं गमलों के बजाय जन्मस्थली में रोपे तैयार किए

जाते हैं। इसलिये जन्मस्थली के संबंध में यहाँ कुछ लिखना अप्रासंगिक न होगा।

जन्मस्थली की ज़मीन एक फ़ुट की गहराई तक खोदकर ढीली कर दी जाय। तब छः-छः फ़ीट के अंतर पर तीन फ़ीट चौड़ी और क़रीब नव इंच गहरी नालियाँ बनाई जायँ। मिट्टी बीच की ज़मीन पर डाल दी जाय। इस छः फीट चौड़ी ज़मीन पर नव इंच लंबी डालियाँ, एक-एक फ़ुट के अंतर पर, बो दी जायँ। सब-की-सब डालियाँ ज़मीन में गाड़ दी जायँ। इन पर घास डाल दी जाय। शुरू में ख़ूब पानी दिया जाना चाहिए, ताकि मिट्टी बैठ जाय। बाद को उतना ही पानी दिया जाना चाहिए, जितना कि जमीन को तर बनाए रखने के लिये काफ़ी हो। क़लमें अक्सर ऑक्टोबर-नवंबर (कार्तिक-अगहन) में लगाई जाती हैं। बाढ़ का मौसम आने के एक महीने पहले पौदे स्थानांतरित किए जाने चाहिए। स्थानांतरित करने के एक या दो महीने पहले कुछ आँखें काट डाली जाती हैं। पौदों को जन्मस्थली से हटाकर खेत में लगाने का मौसम गरमियों में ही पड़ता है। इसलिये रोपे लगाने के बाद उन पर छाया करना बहुत ज़रूरी है।

वर्षा के आरंभ में फूल आने लगते हैं। इस फ़सल के फल पकने के पहले ही झड़ जाते हैं। वर्षा के अंत में जो फल लगते हैं, वे शीत-काल में बढ़ते और गरमी में पकते हैं।

छँटाई—बोने के एक वर्ष बाद छँटाई की जाती है। बेलों

की टहनियाँ दो फ़ीट लंबी रखकर बाक़ी काट दी जाती हैं। इस समय जड़ें खोली जाती हैं, और क़रीब एक अठवाड़े के बाद खाद डालकर उन्हें ढक दिया जाता है। दो साल तक फूल गिरा दिए जायँ, और तीसरे साल से फ़सल लेना शुरू किया जाय।

अंगूर की बेल में एक ही तना रखना चाहिए। शाखाएँ कम रहने पावें। यदि तना टूट जाय, तो एक नीरोग और ज़ोरदार आँख के पास से उसे काट देना चाहिए। तने को थूनी से एक फुट से ज़्यादा ऊँचा न बढ़ने देना चाहिए। इस बात पर ज़्यादा ख़याल रखना चाहिए कि डालियाँ तने के एक ही बाज़ू पर न निकलने पावें। टहनियाँ बहुत पास-पास भी न रक्खी जायँ। टहनियाँ इतनी रखनी चाहिए कि पौदे के सभी भागों को काफ़ी उजियाला और हवा मिलती रहे। कुछ टहनियाँ रख लेने के बाद जितनी आँखों से पत्ते निकलें, उन्हें अंकुरित होते ही मसलकर नष्ट कर डालना चाहिए। हरएक डाली पर तीन से ज़्यादा फल के गुच्छे न रक्खे जाने चाहिए।

फल तोड़ लेने के बाद गरमी के मौसम में जिन डालियों में फल लगे थे, उन डालियों को दो फ़ीट लंबी रखकर काट डालना चाहिए। उनमें बहुत-सी डालियाँ निकल आवेंगी। ऑक्टोबर में तीन आँखें रखकर शाखा का शेष भाग काट डाला जाय। इनसे जो शाखाएँ निकलेंगी, उनमें ही फूल आवेंगे। जिस

जगह फूल निकले हों, उस जगह से क़रीब दो बालिश्त लंबी शाखा रखने के बाद फुनगी तोड़ डाली जाय। पौदा छोटा हो, तो हरएक डाली पर फल का एक ही गुच्छा रक्खा जाय। परंतु पौदे के जम जाने पर दो-तीन तक गुच्छे रक्खे जा सकते हैं।

सूचना—फल पकना शुरू होते ही पानी देना कम करते जाना चाहिए; जिससे फलों की फ़सल ख़तम होने तक पत्ते पीले पड़ जायँ। पत्तों के पीले पड़ते ही कुछ दिन के लिये पानी देना कम कर देने से वे गिर पड़ेंगे। यही समय छँटाई करने के लिये अच्छा है। छँटाई करने के बाद जो नई डालियाँ निकलें, वे थोड़े दिन तक लटकती रहने दी जायँ। फिर वे सहारे से बाँध दी जायँ। इसी समय हरएक पौदे के चारों ओर तीन फ़ीट तक की मिट्टी खोदकर जड़ें खोल दी जायँ, और तब ख़ूब खाद डाली जाय। इस समय पुडरेट देना फ़ायदेमंद है। बरसात में जितने फूल लगें, सब नष्ट कर दिए जायँ। तीन साल तक बौर गिरा दिए जायँ। तीसरे या चौथे साल फल अच्छे आते हैं। नव-दस साल बाद पौदा कमज़ोर हो जाता है।

दूसरी फ़सल बोना—फ़सल के बीच में नोलकोल, चुक़ंदर, गोबी आदि की फ़सलें बोई जा सकती हैं। वही फ़सल बोई जानी चाहिए, जो पौदों को ढक न दे, जिससे पौदों को प्रकाश मिलने में रुकावट न पहुँचे।

सिंचाई और खाद—अंगूर की जड़ों के आस-पास की मिट्टी हर आठवें-दसवें दिन गोड़ देनी चाहिए। फिर पानी दे देना चाहिए। वर्ष में एक या दो बार नमक और बकरे की मेंगनी की खाद देना फ़ायदेमंद है। मछली की खाद देने से ज्यादा फ़ायदा होता है, और दीमक से फ़सल की रक्षा भी होती है। ख़ून और हड्डी का चूरा देने से भी फ़ायदा पहुँचता है। परंतु स्मरण रहे कि खाद जड़ों पर न डाली जाय।

नासिक में मैले की खाद दी जाती है। हर फ़सल के लिये हर साल एप्रिल (बैसाख) में हरएक पेड़ को ४ सेर कुसुम या दूसरी किसी प्रकार की खली, १ सेर हड्डी का चूरा और ½ सेर सल्फ़ेट ऑफ़् पोटाश दिया जाय, तो अच्छा है।

शत्रु—फ़िलोक्सेरा नाम के कीड़े से बेलों को बहुत नुक़सान पहुँचता है। यह कीड़ा कश्मीर आदि स्थानों में पाया जाता है। अनुभव से जाना गया है कि बेल के पास अकरकरा का पौदा लगाने से कीड़ा नुक़सान नहीं पहुँचा सकता। इस कीड़े के अंडों का नाश करने के लिये पत्तों पर पत्थर का कोयला और गंधक छिड़कना चाहिए।

फलों के गुच्छों पर महीन कपड़ा बाँध देने से भी कीड़ों से उनकी रक्षा हो सकती है।

स्मट नाम के फ़ंगस-रोग से भी ज्यादा हानि पहुँचती है। जिस प्रांत में यह रोग हर साल होता हो, वहाँ बीज को बोने के पहले पाँच मिनट तक गरम पानी में डुबाना और फिर

बोना चाहिए। गंधक की धूनी देने से भी यह रोग अच्छा हो जाता है। यह सब करने पर भी रोग न मिटे, तो पौदे को ज़मीन से तीन फ़ीट की ऊँचाई पर काटकर जला डालना चाहिए।

बेर

कहा जाता है, बेर का आदि स्थान सीरिया या लिबंट है। परंतु भारतवर्ष में यह अति प्राचीन काल से होता है। हिंदुस्थान के सभी प्रांतों में यह पाया जाता है। कई प्रांतों में यह जंगली अवस्था में भी देख पड़ता है। बड़ौदा, अहमदाबाद, नागपुर, काशी, लखनऊ आदि कुछ स्थान बेर के लिये प्रसिद्ध हैं।

जाति—फलों के स्वाद, आकार आदि के कारण उसकी कई जातियाँ मान ली गई हैं।

ज़मीन—हर तरह की ज़मीन में यह बोया जा सकता है।

पौदे तैयार करना—अक्सर बीज से ही रोपे तैयार किए जाते है। परंतु भेंट-क़लम और चश्मा बाँधकर तथा दाब-क़लम से भी इसके रोपे तैयार किए जा सकते हैं। खूँटी-क़लम (Crown grafting) से तैयार किए हुए पौदे भी अच्छे होते हैं।

बोने की रीति—पौदे खेत में १५ फ़ीट के अंतर पर गढ़ों में लगाए जाते हैं।

खाद—ज्यादातर गोबर की खाद ही दी जाती है।

छँटाई—फल तोड़ने के बाद पेड़ की सब छोटी डालियाँ

(आदमी की कलाई के बराबर मुटाईवाली) काट डाली जाती हैं।

सिंचाई—जरूरत के माफ़िक़ पानी दिया जाना चाहिए। पौदों के जम जाने पर पानी की उतनी जरूरत नहीं रहती।

सूचना—बेर उन्हीं प्रांतों में बोया जाता है, जहाँ वर्षा कम हो। छँटाई के बाद निकली हुई डालियाँ बरसात में फलती हैं। परंतु इस मौसम के फलों में कीड़े ज्यादा रहते हैं। फल भी खट्टे और ख़राब होते हैं। चश्मा बाँधना और दाब-क़लम आदि क्रियाएँ जून से दिसंबर तक ही की जानी चाहिए।

नारंगी

कहा जाता है, नारंगी का पौदा ईरान से लाया गया है। परंतु नेपाल और नीलगिरि पर यह जंगली अवस्था में पाया जाता है। भारतवर्ष में नारंगी बहुत बोई जाती है। नागपुर, दिल्ली, नेपाल, आसाम आदि की नारंगी बहुत प्रसिद्ध है।

फल—पेड़ लगाने के चार-पाँच वर्ष बाद पौदा फलने लगता है। नारंगी साल में दो बार फलती है। फ़रवरी-मार्च की फ़सल के फल नव-दस महीने में तैयार होते हैं, और बरसाती फ़सल के फल मार्च के क़रीब पकते हैं। एक ही पौदे की दोनों फ़सलों के फल लेने से पेड़ जल्दी कमज़ोर हो जाता है। इसलिये एक फ़सल के फूल गिरा देना चाहिए। नारंगी का फल गोल और दोनों सिरों पर चिपटा होता है। संतरा नारंगी से कुछ मोटा होता है।

उपयोग—नारंगी का फल बहुत स्वादिष्ठ होता है। फल के छिलकों और पत्तों से सुगंधित तेल तैयार किया जाता है। फलों के छिलकों से शरबत भी तैयार करते हैं। बीजों से तेल निकाला जाता है।

जाति—नारंगी की अनेक जातियाँ हैं। कुछ मुख्य जातियों पर यहाँ विचार किया जायगा।

१—सिलहट और खासिया पहाड़ी के प्रांतों में पतले छिलके की गोल नारंगी होती है। इसका पौदा बीज से तैयार किया जाता है।

२—कुर्ग की नारंगी का ऊपरी छिलका भीतरी भाग से जुदा रहता है।

३—नागपुर और दक्षिण-भारत के अधिकांश भागों में होनेवाले संतरे का छिलका ढीला होता है।

४—दक्षिण-भारत के कुछ भागों में मौसांबी नारंगी होती हैं। यह मुज़ांबिक से लाई गई है।

५—जमैका संतरे।

६—नेवल नारंगी।

७—कौला। इसका छिलका खुरदरा होता है।

८—जाफ़ा। नींबू के आकार का कुछ लंबा फल होता है।

९—रेशमी। छोटी और ज्यादा बीजवाली।

इनके अलावा मालटा, सेंट मिचेलस आदि और भी कई जातियाँ बोई जाती हैं।

ज़मीन—नारंगी ऊँचे स्थान पर बोई जानी चाहिए। ज़मीन ऐसी हो, जो गरमी के दिनों में ज्यादा गहराई तक न फटे, और जल का निकास भी अच्छा हो। ज़ोरदार, भुरभुरी और बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है। चॉक के अंशवाली हलकी या कचला मिट्टीवाली ज़मीन में नारंगी का पेड़ अच्छा होता है।

बोने की तरकीब—ऑक्टोबर से दिसंबर तक (आश्विन से अगहन-पूस तक) जँभीरी के बीज भी जन्मस्थली में एक-एक फुट के फ़ासले पर बोए जाते हैं। क़रीब एक महीने बाद पौदा स्थानांतरित किया जाता है। दो पौदों के बीच में डेढ़ फ़ीट और दो क़तारों के बीच में ढाई फ़ीट का अंतर रक्खा जाता है। तीन साल की उम्रवाले पौदे पर चश्मा बाँधकर अच्छी नसल के पौदे तैयार किए जाते हैं। चश्मा बाँधने की क्रिया जुलाई या अगस्त (आषाढ़ या श्रावण में) की जाती है।

सीमा-प्रांत में खट्टे के पौदे पर चश्मा बाँधा जाता है। अँगरेज़ी अक्षर टी के आकार में छाल को चीरकर उसमें चश्मा बिठाया जाता है। ज़मीन से छः इंच की उँचाई पर ही आँख बाँधी जाती है। यह क्रिया उसी मौसम में की जानी चाहिए, जब पौदे की बाढ़ जारी हो। आँख बाँधने के छः महीने बाद आँख बाँधे हुए स्थान से ऊपर का भाग काट डाला जाता और तब पौदा स्थायी स्थान पर लगाया जाता है। खेत में २०-२० फ़ीट के अंतर पर चार फ़ीट गहरे गढ़े खोदे जाते हैं।

दो भाग मिट्टी और एक भाग गोबर की खाद मिलाकर गढ़े भर दिए जाते हैं। इन्हीं में रोपे लगाए जाते हैं। अक्सर पौदे बरसात में ही स्थानांतरित किए जाते हैं। परंतु यदि ज्यादा सिंचाई की तजवीज की जा सके, तो रोपे फ़रवरी में भी स्थायी स्थान पर लगाए जा सकते हैं।

खाद—पौदों के पाँच वर्ष से अधिक उम्र के हो जाने पर मार्च (फ़ागुन-चैत) में पानी देना बंद कर दिया जाता है। तब जड़ें खोल दी जाती हैं। क़रीब एक सप्ताह तक जड़ों को धूप से तपने देना चाहिए। इसके बाद जड़ों पर गोबर की खाद की तीन इंच मोटी तह डालकर ऊपर से मिट्टी ढक देना चाहिए। शीघ्र ही पत्ते गिरने लगेंगे। बरसात के शुरू में खूब पानी दिया गया होगा, तो इससे कुछ पहले पेड़ नए पत्तों और फूलों से लद जायगा। इस फ़सल के फल दिसंबर से फ़रवरी तक (अगहन-पूस से माघ-फागुन तक) पकते हैं। इसी फ़सल के फल अच्छे समझे जाते हैं।

दूसरी फ़सल फ़रवरी-मार्च (फागुन के लगभग) में होती है। इसी वक्त आम में बौर भी आते हैं। इसलिये इसे अमिया बहार कहते हैं। इस बहार की फ़सल के लिये पेड़ की जड़ें दिसंबर में खोली जाती हैं।

छँटाई—जब तक पौदा छोटा रहता है, तब तक उसे सुंदर आकार देने के लिये छँटाई की जाती है। परंतु बाद को छँटाई करना उतना फ़ायदेमंद नहीं। पाँचवें साल में फूल और

फल निकलने लगते हैं। इसलिये छँटाई का काम सावधानी से किया जाना चाहिए। उतनी ही डालियाँ काटनी चाहिए, जितनी पौदे के प्रकाश और हवा मिलने के मार्ग में रुकावट डालती हों। यदि एक ही स्थान पर घने फल लगे हों, तो कुछ को गिरा देना चाहिए। पौदे पर की सड़ी और कमज़ोर डालियाँ भी काट दी जानी चाहिए।

शत्रु—नारंगी के पौदों पर कई प्रकार के फ़ंगस-रोग हमला करते हैं। 'कॉलर रॉट' ही ज्यादातर होता है। रोगी भाग को काटकर ज़ख्म पर कारबोलिक एसिड लगा देना चाहिए। स्केब-रोग हो जाने पर पत्ते, तने और फल से पानी-सा पतला पदार्थ बहने लगता है। नीले-थोथे का मिश्रण छिड़कना फायदे-मंद है।

एक इल्ली तने में छेदकर भीतर घुसकर उसे खोखला बना डालती है। छेद में मिट्टी का तेल डालने से इल्ली मर जाती है।

जुलाई (अषाढ़) में एक जाति की इल्ली पत्तों को सफ़ाचट कर जाती है। इल्ली को पकड़कर पानी और मिट्टी के तेल के मिश्रण में डाल देना चाहिए।

एक प्रकार की तितली पके फलों में छेद कर रस पी जाती है। सबेरे फल पर एक छेद नज़र आता है। उसके चारों ओर पीला धब्बा पड़ जाता है, और शाम को फल ज़मीन पर गिर पड़ता है। रात के वक़्त तितली को हाथ या जाल से पकड़कर मार डालना चाहिए।

आवश्यक सूचना—फलों के पकने के लिये सूखा मौसम दरकार होता है। हर साल सौ इंच तक की वर्षावाले प्रांतों में नारंगी बोई जा सकती है। जहाँ पानी कम बरसता हो, वहाँ भी सिंचाई से इसकी खेती की जा सकती है। कुछ प्रांतों में गरमी के मौसम में तने पर काग़ज़ लपेटना पड़ता है। कारण, कड़ी धूप से तना जल जाता है। कहीं-कहीं धूप से फल जल जाते हैं, और कभी-कभी फट भी जाते हैं। इसलिये अधपके फल ही तोड़ लेना फ़ायदेमंद है।

नारंगी का बाग़ लगाना लाभ-दायक है। यदि ख़ूब हिफ़ाज़त रक्खी जाय, तो पौदे ३० साल तक ज़िंदा रह सकते हैं। ५ वें वर्ष से लगाकर १५वें वर्ष तक पौदा अच्छा फलता है।

बिजौरा

बिजौरे का पेड़ साधारणतः पाँच-सात हाथ ऊँचा होता है। इसके फूल सफ़ेद और सुगंधित होते हैं। बंगाल और मदरास में उत्तम जाति का बिजौरा होता है। समुद्र की सतह से तीन हज़ार फ़ीट की ऊँचाई तक के प्रांतों में यह बोया जा सकता है।

जाति—इसकी मुख्य दो जातियाँ हैं। एक जाति के फल का गूदा सफ़ेद और दूसरी का लाल होता है। ऊपर से दोनों जातियों के फल एक-से ही देख पड़ते हैं। उत्तम जाति के बिजौरे का फल मांस के रंग का होता है। एक जाति के फल में बीज नहीं होते।

फल—नींबू की जाति के सब फलों में बिजौरे का फल

सबसे बड़ा होता है। कभी-कभी दस सेर तक वज़न के फल पाए जाते हैं। फलों का गूदा बहुत ज़ायक़ेदार होता है।

ज़मीन—बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है। ज़मीन ज़ोरदार और भुरभुरी हो। उसमें जल का निकास भी अच्छा होना चाहिए।

बोने की तरकीब—बीज बोकर रोपे तैयार किए जाते हैं। फ़रवरी-मार्च (फागुन-चैत) में जँभीरी पर चश्मा बाँधकर भी पौदे तैयार किए जाते हैं। कहीं-कहीं बिजौरे पर भी चश्मा बाँधते हैं।

खेत में २०-२० फ़ीट के फ़ासले पर गढ़े खोदे जाते हैं। गढ़ों में गोबर की खाद और मिट्टी भरकर पौदे बोते हैं। बोने के चार वर्ष बाद पेड़ फलने लगता है।

छँटाई—सड़ी, ख़राब और कमज़ोर डालियाँ काटकर अलग कर दी जायँ। एक डाली में एक ही फल रक्खा जाय। अगर ज़रूरत मालूम हो, तो डाली को सहारा भी दे दिया जाय।

खाद—छँटाई के बाद मिट्टी हटाकर जड़ें खोल दी जायँ। क़रीब एक अठवाड़े के बाद पुराना चूना मिट्टी और गोबर की खाद (बराबर-बराबर भाग) मिलाकर जड़ें ढक दी जायँ। दक्षिण-भारत में मांस और उरद का आटा खाद की तरह दिया जाता है।

सिंचाई—गरमी के दिनों में पेड़ों को ख़ूब पानी दिया जाना चाहिए। पौदा फागुन-चैत में फूलता है। यदि पानी

कम दिया जायगा, तो फूल मार्च से जून (चैत से आषाढ़) तक आवेंगे। पानी की कमी से फूल गिर भी पड़ते हैं। यदि फल पकते समय खाद का घोल दिया जाय, तो और अच्छा है।

शत्रु—नारंगी को नुक़सान पहुँचानेवाले सभी रोग और कीड़े इस पर भी हमला करते हैं। उनका इलाज नारंगी के कीड़ों की तरह ही किया जाय।

नींबू

भारतवर्ष के सभी प्रांतों में नींबू बोया जाता है। यह नारंगी की जाति का पौदा है।

उपयोग—वैद्यक में भाँति-भाँति की दवाओं में नींबू के रस का पुट दिया जाता है। भोजन में भी इसके रस का उपयोग किया जाता है। फल के छिलके से तेल निकालते हैं।

जाति—नीबू की कई जातियाँ हैं। उन सब पर यहाँ विचार नहीं किया सकता। नीचे कुछ जातियों के नाम लिखे जाते हैं—

१—पाती। इसका फल छोटा और गोल होता और ज्यादा पसंद किया जाता है।

२—काग़ज़ी। इसका फल मुर्गी के अंडे के बराबर होता है।

३—गोरा। फल छोटा और अंडाकृति होता है। यह ज्यादा बोया जाता है।

४—चीनी गोरा। गोरा की ही एक उपजाति है। फल बड़ी

नारंगी के आकार का होता है। इसका छिलका पतला और स्वाद अच्छा होता है।

५—कमरली। इसका फल नारियल के फल के बराबर होता है।

६—मौसांबी। इसका फल नारंगी से कुछ बड़ा होता है। इसकी कलियाँ नारंगी की कलियों की तरह अलग-अलग हो जाती हैं। इसका रस मीठा और स्वादिष्ठ होता है।

इनके अलावा और भी कई देसी और विदेसी जातियाँ बोई जाने लगी हैं।

रोपे तैयार करना—बीज बोकर रोपे तैयार किए जाते हैं। घटिया जाति पर अच्छी नस्ल की जाति का चस्मा बाँधकर और खूँटी मारकर रोपे तैयार किए जा सकते हैं। कहीं-कहीं दाब-क़लम से भी रोपे तैयार किए जाते हैं।

शेष सब नारंगी की तरह।

सीताफल

मध्य-भारत और मध्य-प्रांत में यह जंगलों में पाया जाता है। बंगाल में सीताफल बहुत होता है। दक्षिण-भारत में इसकी खेती अधिक परिमाण में की जाती है।

फल—वृक्ष लगाने के पाँच वर्ष बाद फलने लगता है। अगर ज़मीन अच्छी और ज़ोरदार हो, तो फल तीसरे ही साल निकल आते हैं। पहले तीन-चार वर्ष तक फल अधिक बड़े और ज्यादा मीठे होते हैं। ज्यों-ज्यों पेड़ पुराना होता जाता

है, त्यों-त्यों फल भी छोटे और कम मीठे होते जाते हैं। एप्रिल में पौदा फूलता है, और अगस्त में फल पक जाते हैं। फल नवंबर तक लगते रहते हैं। सीताफल के कुछ फूल बाँझ भी होते हैं।

उपयोग—सीताफल बहुत मीठा होता है। रामफल की अपेक्षा यह अधिक रुचिकर होता है। इसके बीजों में कृमि-नाशक गुण है। पत्ते पीसकर लगाने से गाय-भैंस आदि के बदन पर लगे हुए कीड़े मर जाते हैं। कहा जाता है, इसके पत्तों की गंध से खटमल नहीं आते। बंगाल में सीताफल के पत्तों का चूर्ण और बेसन बालों में लगाते हैं। ब्रह्म-देश में सीताफल का गूदा चावल में मिलाकर खाते हैं।

ज़मीन—दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है। जल का निकास भी होना चाहिए।

काश्त—बीज ही बोया जाता है। खेत में १५-१५ फ़ीट के फ़ासले पर दो फ़ीट गहरे गढ़े खोदे जाते हैं। आधी मिट्टी और आधी गोबर की खाद मिलाकर गढ़े भर दिए जाते हैं। तब हरएक गढ़े में कई ताज़े बीज बोते हैं। कुछ बड़े हो जाने पर ज़ोरदार पेड़ रख लिए और दूसरे उखाड़कर फेंक दिए जाते हैं।

कहीं-कहीं बीज जन्मस्थली में बोए जाते हैं, और एक वर्ष के बाद पौदे खेत में लगाए जाते हैं। बरसात में ही पौदे स्थानांतरित किए जाते हैं। यदि सिंचाई की व्यवस्था की

जा सके, तो फ़रवरी में भी पौदे जन्मस्थली से हटाए जा सकते हैं।

छँटाई—शीत-काल में रोगी और कमज़ोर डालियाँ काट दी जाती हैं। घनी डालियों और पत्तों को काटकर कम कर देना लाभदायक है।

खाद—छँटाई के बाद एक अठवाड़े तक जड़ें खुली रखना चाहिए। उसके उपरांत कूड़े-कचरे की सड़ी खाद, पुराना चूना और मिट्टी बराबर-बराबर मिलाकर जड़ों पर डाल देना चाहिए। जानवरों का मांस भी इसके लिये अच्छी खाद है। फल निकलने पर गोबर की खाद का घोल देना लाभजनक है।

सिंचाई—शीत-काल और गरमी के मौसम में ज़रूरत के माफ़िक जल देते रहना चाहिए। फल पकने तक सिंचाई की जानी चाहिए। पानी उतना ही दिया जाय, जितना मिट्टी गीली बनाए रखने के लिये ज़रूरी हो।

रामफल या नोना

यह पेड़ सीताफल की जाति का है। परंतु उससे अधिक ऊँचा होता है। इसका विस्तार भी ज्यादा होता है। रामफल का पेड़ ३०-४० वर्ष तक टिकता है। पेड़ लगाने के ५ वें साल पौदा फलने लगता है। इसकी फ़सल फागुन-चैत में होती है।

फल—रामफल सीताफल के समान स्वादिष्ठ नहीं होता;

परंतु इसकी फ़सल गरमी के दिनों में होने के कारण खपत ज्यादा होती है।

ज़मीन—बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है।

खेती—इसकी काश्त सीताफल ही की तरह की जाती है। परंतु दो पौदों के बीच में बीस फीट का अंतर रक्खा जाता है।

शेष सब सीताफल की तरह।

कटहल

कटहल का पेड़ बहुत बड़ा होता है, और उसकी उँचाई ३०-३५ फ़ीट तक होती है। भारतवर्ष के कई प्रांतों में यह बोया जाता है।

फल—इसके फल बहुत बड़े होते हैं। पचीस सेर वज़न तक के फल देखे गए हैं। एक पेड़ में ५०० तक फल लगते हैं। पौदा शीत-काल में फलता है, और फल गरमी के मौसम में पकते हैं।

जाति—कटहल की दो जातियाँ हैं—खुजा और घीला। घीला-जाति का फल हलके दरजे का माना जाता है।

उपयोग—कच्चे फल की तरकारी बनाई जाती है। कई स्थानों के लोग कटहल का कलेवा करते हैं। दक्षिण-भारत में कटहल से 'फणस पोली' नाम का पदार्थ बनाते हैं। यह विशेष स्वादिष्ठ होता और दूर-दूर के प्रांतों में भेजा जाता है। अन्य कई तरह से भी इसका उपयोग किया जाता है।

ज़मीन—उपजाऊ दुमट ज़मीन में यह बोया जाता है।

बोने की तरकीब—मई-जून में बीज बोया जाता है। रोपे दूसरे साल बरसात में जन्मस्थली से हटाकर खेत में, ३०-फ़ीट के फ़ासले पर लगाए जाते हैं। रोपे लगाते वक़्त, इस बात का ध्यान रक्खा जाय कि जड़ों को बिलकुल हानि न पहुँचे।

पौदा लगाने के आठवें वर्ष से फल लगते हैं। १५ वर्ष तक यह फलता है। नए पेड़ की डाली में फल लगते हैं। पुराने पेड़ों के तनों में और बहुत पुराने पेड़ों की जड़ों में भी फल लगते हैं। जड़ों में फल लगने पर फल के आस-पास की ज़मीन फट जाती है, और फल नज़र आने लगते हैं।

सिंचाई—ज़रूरत के माफ़िक़ पानी दिया जाना चाहिए।

सफ़रचंद

भारतवर्ष के पंजाब, सिंध, मध्य-प्रांत, बंबई आदि प्रांतों में यह बोया जाता है।

फल—इसके फल छोटी नारंगी के बराबर और ज़ायकेदार भी होते हैं। इसकी पहली फ़सल वर्षा के १५ दिन बाद और दूसरी एप्रिल-मई में होती है।

उपयोग—फल खाने के काम में आता है।

ज़मीन—पानी के निकासवाली किसी भी ज़मीन में यह बोया जा सकता है।

बोने की तरकीब—दाब-क़लम, डाली और जड़ काटकर

लगाने से नए पौदे तैयार हो जाते हैं। एक फुट ऊँचा हो जाने पर पेड़ जन्मस्थली से हटाकर खेत में, १२ फ़ीट के फ़ासले पर, लगाया जाता है।

सिंचाई—बरसात ख़तम होने पर बौर न आवे, तो पेड़ की जड़ें खोल दी जायँ और बौर आना शुरू होते ही गोबर की खाद या बकरी की मेंगनी और मिट्टी से जड़ें ढक दी जायँ। इसके उपरांत शीघ्र ही पानी दे दिया जाय। फल जब पकने के क़रीब हों, तब पानी देना बंद कर दिया जाय। फल निकाल लेने पर फिर जड़ें खोल दी जायँ, और तब ऊपर लिखी हुई खाद देकर पानी दिया जाय।

शहतूत

यह पेड़ चीन में बहुत होता है। भारत के बर्मा, आसाम, बंगाल, पंजाब, काश्मीर आदि स्थानों में इसकी खेती की जाती है।

जाति—इसकी मुख्य तीन जातियाँ हैं—काली, हरी और लाल। रेशम के कीड़ों के लिये पहली दो जातियाँ ही उत्तम हैं। ये चीन से लाई गई हैं। तीसरी भारत की ही है।

फल—लंबे और कुछ खट्टे होते हैं।

उपयोग—शहतूत के फल खाए जाते हैं। इनके खाने से ख़ून बढ़ता है। चीनी-जाति के फल ज्यादा मीठे होते हैं। पंजाब में एक जाति के शहतूत के फलों से रोटी बनाई जाती है। वह पौष्टिक होती है। चीन में शहतूत की छाल से

रेशे निकालते हैं। इसके पत्ते रेशम के कीड़ों को खिलाए जाते हैं। टहनियों की छाल काग़ज़ बनाने के काम में लाई जाती है। पत्ते खिलाने से दूध देनेवाले पशुओं का दूध बढ़ जाता है। इस प्रकार यह बहुत उपयोगी और लाभ-दायक है।

ज़मीन—सब प्रकार की ज़मीन में हो सकता है।

बोने की तरकीब—बीज बोकर या डाली लगाकर रोपे तैयार किए जाते हैं। बरसात में जन्मस्थली से हटाकर खेत में रोपे लगाते हैं। दो पौदों के बीच में २५ फ़ीट का अंतर रक्खा जाता है।

खाद—बाग़ में बोए हुए पौदे में बकरे का ख़ून भी डालते हैं। चीन में बत्तख़, मुर्ग़े आदि की बीट की खाद दी जाती है। गोबर की खाद, भेड़ की मेंगनी और तालाब की तली की मिट्टी भी इसके लिये उत्तम खाद है।

सिंचाई—छोटे पौदों को सातवें-आठवें दिन पानी देते रहना चाहिए। बड़े-बड़े पेड़ों को पानी न दिया जाय, तो भी कोई हर्जन हीं।

कमरख

भारतवर्ष के अधिकांश प्रांतों में क़मरख बोई जाती है। इसका पेड़ २०-२५ फ़ीट ऊँचा होता है। पत्ते बहुत सुंदर होते, और फूल आने पर तो पौदे की सुंदरता बहुत ही ज्यादा बढ़ जाती है। छः वर्ष की उम्र होने के बाद पौदा फलने लगता है।

ज़मीन—हर तरह की ज़मीन में यह हो सकता है।

बोने की तरकीब—बीज ही बोया जाता है। चीनी कमरख का पेबंद देशी कमरख पर चढ़ाया जाता है। बरसात में पौदे जन्मस्थली से हटाकर खेत में, १५ फ़ीट के फ़ासले पर, लगाए जाते हैं।

खाद—अधिकतर गोबर की खाद का ही उपयोग किया जाता है।

सिंचाई—ज़रूरत के माफ़िक़ सिंचाई करते रहना चाहिए।

आँवला

भारत के अधिकांश प्रांतों में आँवला जंगलों में पाया जाता है। बाग़ों में भी कहीं-कहीं आँवले के पेड़ लगाए जाते हैं।

आँवले की कई जातियाँ हैं। उन पर यहाँ विचार करना संभव नहीं। सभी जातियों के बोने की तरकीब एक-सी ही है।

उपयोग—आँवले की लकड़ी से सफ़ेद कत्था बनाया जाता है। फलों से मुरब्बा भी बनाते हैं। काली स्याही बनाने के काम में भी इसका उपयोग किया जाता है। छाल से चमड़ा रँगा जाता है। इसकी लकड़ी मज़बूत होती है।

बोने की तरकीब—पके आँवले के बीज बरसात में बोए जाते हैं। एक वर्ष की उम्र का पौदा स्थायी स्थान पर लगाया जाता है। पौदा १५-१५ फ़ीट के अंतर पर बोया जाता है। बड़ा होने तक हर चौथे-पाँचवें दिन पानी देते रहना चाहिए।

खिन्नी

खिन्नी का पेड़ बहुत बड़ा होता है, और बहुत वर्षों तक टिकता भी है। गुजरात में यह बहुत होता है। मौलसिरी और खिन्नी एक ही जाति के पौदे हैं। इसके फल सुंदर होते हैं।

उपयोग—खिन्नी की लकड़ी मज़बूत होती है। फल खाए जाते हैं। बीजों से तेल निकाला जाता है उसे घी में मिला देते हैं। कहीं-कहीं हलवाई लोग तेल को घी की जगह तलने के काम में लाते हैं। इसकी खली खाद की तरह खेतों में डाली जाती है।

ज़मीन—रेतीली ज़मीन में यह अच्छा होता है। पौदा जब तक मज़बूती के साथ जम न जाय, तब तक पानी देते रहना चाहिए।

बादाम

फूलने पर बादाम का पौदा ख़ूबसूरत देख पड़ता है। भारत के अधिकांश प्रांतों में इसकी बाढ़ तो अच्छी होती है, परंतु फल नहीं लगते। इस पौदे का मूल-स्थान काकेशस है।

ज़मीन—ज़ोरदार, हलकी और पानी के निकाशवाली ज़मीन में ही इसे बोना चाहिए।

बोने की तरकीब—खेत में ३ फ़ीट गहरे गढ़े १५-१५ फ़ीट के अंतर पर खोदे जाते हैं, और उनमें गोबर की खाद और मिट्टी भरकर बीज बो दिए जाते हैं। बीज बरसात या दिसंबर-जनवरी में बोए जाते हैं। बोने के पहले बादाम को फोड़

डाले ; परंतु मींगी बाहर कदापि न निकाली जानी चाहिए। बीज क़रीब छ महीने में उगता है। कहीं-कहीं जन्मस्थली में बीज बोया जाता है, और पौदा दो वर्ष का होने पर स्थायी स्थान पर लगाया जाता है। दिसंबर-जनवरी में आलूचे पर पेबंद किया जाता है, और मार्च में आड़ू पर बादाम का चश्मा भी चढ़ाया जाता है।

सिंचाई—ज़रूरत के माफ़िक़ पौदों को पानी देते रहना चाहिए।

काजू

पोर्तुगीज़ लोग इस पेड़ को दक्षिण-अमेरिका से हिंदुस्थान में लाए हैं। मलाबार, गोमांतक, कर्नाटक और बर्मा में यह अधिक होता है।

फल—पौष-मास में यह फूलता है। माघ-मास से फल पकने लग जाते हैं, और बैसाख तक लगते रहते हैं। काजू का फल नाज़ुक होता है।

उपयोग—पके फल खाए जाते हैं। इससे एक प्रकार की शराब भी बनाई जाती है। इसके बीज भी भिन्न-भिन्न प्रकार से काम में आते हैं।

ज़मीन—हर तरह की ज़मीन में यह हो सकता है। परंतु ज़्यादातर पहाड़ी भूमि और समुद्र-तट की रेतीली ज़मीन में यह अच्छा होता है।

बोने की तरकीब—काजू बरसात में गमलों या क्यारियों

में बोए जाते हैं। छः इंच ऊँचा पौदा वहाँ से हटाकर स्थायी स्थान में लगाया जाता है।

सिंचाई—पौदे के काफ़ी ऊँचे होने तक हर आठवें दिन पानी देते रहना चाहिए। बड़े पेड़ को महीने में एक-दो बार पानी देने से भी काम चल जाता है।

खाद—यदि पेड़ में फल न लगें, तो जड़ें खोलकर राख और मांस की खाद डालकर मिट्टी से ढक दिया जाय। ऐसा करने से फल लगने लगते हैं।

लीची

प्राचीन संस्कृत-ग्रंथों में लीची का वर्णन नहीं पाया जाता। इसकी जन्मभूमि चीन-देश है। अब भारत के कई प्रांतों में लीची बोई जाती है। मुजफ़्फ़रपुर, हुगली, सहारनपुर आदि कई स्थानों की लीची बहुत मशहूर है।

भारत में लीची का पेड़ छोटा ही होता है। फ़रवरी-मार्च में यह फूलता है, और लगभग तीन महीने बाद इसके फल पकने लगते हैं।

जाति—इसकी कई जातियाँ हैं, जिनमें चीना, दूधिया और बेदाना नाम की जातियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं।

ज़मीन—बलुआर दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी होती है। ज़्यादा तरी से भी इसको नुक़सान नहीं पहुँचता। मिट्टी में काफ़ी तरी होने से वृक्ष ख़ूब फैलता है, फल भी बड़े लगते हैं, और उनकी मिठास भी बढ़ जाती है। इसकी जड़ें

ज़मीन में गहरी नहीं जातीं। अतएव ज़मीन की ऊपरी सतह में हमेशा काफ़ी तरी का होना बहुत ज़रूरी है। इसी कारण इसकी सिंचाई पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए।

बोने का समय—लीची के पौदे बरसात में ही बोए जाने चाहिए। सितंबर और मार्च में भी इसके पौदे लगाए जा सकते हैं।

बोने की तरकीब—लीची के पौदे ३६-३६ फ़ीट के फ़ासले पर बोए जायँ। गढ़ों को तीन-चार सप्ताह तक खूब धूप लगने देनी चाहिए। उसके बाद खाद और मिट्टी से गढ़े भर-कर पौदे लगावे।

'भेंट-क़लम' से ही पौदे तैयार किए जाते हैं। दूसरे स्थानों से मँगाए हुए पौदे पहले जन्मस्थली में लगाए जाने चाहिए। फिर तीन-चार सप्ताह बाद स्थायी स्थान पर लगाना ठीक है। पौदा लगाने के बाद हमेशा सिंचाई होनी चाहिए। सिंचाई इस ढंग से होनी चाहिए कि गढ़े की मिट्टी में दरारें न पड़ने पावें।

खाद—खली और गोबर की खाद का मिश्रण लीची के लिये अत्युत्तम है। खली के चूरे को तीन-चार रोज़ तक पानी में भिगो रखने के बाद ही पौदे को देते हैं। खाद पेड़ के पास ही न दी जाय। पेड़ से एक-दो फ़ीट के फ़ासले पर उसके चारों ओर खाद फैला देनी चाहिए।

कम उम्र के पौदों को हर साल एक सेर खली, पानी में

घोलकर, देनी चाहिए। बड़े पेड़ों को पाँच सेर खली दी जानी चाहिए।

फलने के पहले हड्डी का सुपर दिया जाना फ़ायदेमंद है। प्रति वर्ष हर पेड़ को, तीन-चार बार करके, क़रीब पाँच सेर सुपर की खाद दी जानी चाहिए। छोटे-छोटे पौदों को ज्यादा खाद कदापि न दी जानी चाहिए। ज्यों-ज्यों पौदे बड़े होते जायँ, त्यों-त्यों खाद की मात्रा भी बढ़ानी चाहिए।

सिंचाई—इसको पानी की बहुत ज़रूरत रहती है। इसलिये सिंचाई पर ख़ूब ध्यान दिया जाना चाहिए। फलों से लदे हुए पेड़ों को पानी देने से फ़सल जल्दी पकती है।

छँटाई—फलों की फ़सल निकल जाने पर फुनगियाँ काट डाली जायँ, तो दूसरे साल अच्छी फ़सल होती है। कमज़ोर और रोगी डालियाँ भी काटकर फेंक देनी चाहिए। जहाँ डालियाँ काटी जायँ, वहाँ पर मिट्टी या गोबर लगाकर ज़ख्म को भर देना चाहिए।

पौदे तैयार करना—'भेंट-क़लम' से ही पौदे तैयार किए जाते हैं। गुट्टी से भी तैयार किए जा सकते हैं। इस काम के लिये जून-जुलाई का मौसम अच्छा है।

फल तोड़ना—फलों के साथ डाल का भी कुछ हिस्सा तोड़ लेना चाहिए। डाल के साथ कुछ पत्ते भी तोड़ लेना अच्छा है। ठंडे कमरे में रक्खे हुए फल बहुत देर तक टिकते हैं। तोड़ने के बाद उत्तम और नीरोग फल अलग छाँट लेने

चाहिए। पकना शुरू होते ही फल तोड़ने लगना चाहिए, फलों को वृक्ष पर ही ज्यादा न पकने देना चाहिए।

शत्रु—चिमगादड़ और दूसरे पक्षियों से लीची के बाग़ को बहुत नुक़सान पहुँचता है।

बकुल

बकुल या मौलसिरी का पेड़ भारत में सर्वत्र पाया जाता है। वृक्ष बहुत बड़ा होता है। इसकी छाया घनी होती है, और वृक्ष ख़ूबसूरत इमारत से कुछ दूर पर ही इसको लगाते हैं।

फल-फूल—बोने के क़रीब पाँच वर्ष बाद यह फूलने लगता है। फूल सफ़ेद, छोटे, चक्राकार और सुगंधित होते हैं। यदि वृक्ष को हमेशा पानी मिलता रहे, तो बारहों महीने फूल फूलते रहते हैं। इसका फूल जल्दी नहीं कुम्हलाता। बकुल के फूलों की सूखी मालाओं में भी उत्तम मधुर सुगंध आती है। बकुल के फल बादाम-जैसे होते हैं। पकने पर फलों का रंग लाल होता है।

उपयोग—इसके फूलों से इतर बनाया जाता है। बकुल के बीज ठंडे पानी में पीसकर अतिसार के रोगी को पिलाए जाते हैं। छाल का चूर्ण दाँतों में मलने से दाँतों की जड़ें मज़बूत होती हैं। इसकी लकड़ी भी सुगंधित होती है। दक्षिण के कोंकण-प्रदेश के लोग इसको चंदन की तरह काम में लाते हैं। इसकी लकड़ी जहाज़, नाव आदि बनाने में काम आती है। खारी पानी में यह लकड़ी ख़ूब टिकती है। फलों से तेल

निकाला जाता है, जो जलाने, खाने और दवा के काम में आता है।

खेती—बीज से पौदे तैयार किए जाते हैं। बरसात में मृगशिरा-नक्षत्र के समय में इसके बीज जन्मस्थली या बक्स में बोए जाते हैं। जब तक बीज उग न आवें, तब तक रोज़ पानी दिया जाना चाहिए। पीछे हर चौथे दिन देना काफ़ी होगा। लगभग एक साल का पौदा स्थायी स्थान पर लगाया जाता है।

सिंचाई—जड़ पकड़ने तक पौदे को हर रोज़ पानी दिया जाना चाहिए। फिर क़रीब एक साल तक हर चौथे दिन सिंचाई होनी चाहिए। दो वर्ष का हो जाने के बाद आठवें दिन पानी दिया जाय। बड़े पेड़ को सिंचाई की ज़रूरत नहीं होती।

ताड़

भारत में जितने वृक्ष होते हैं, उनमें ताड़ का पेड़ सबसे ऊँचा होता है। यह गरम देशों में होता है। पहाड़ों और जंगलों में आप-ही-आप उग आता है।

जाति—इसकी अनेक जातियाँ हैं। केक ताड़, भाय ताड़, भेरला, रावण ताड़ आदि कुछ जातियाँ विशेष प्रसिद्ध हैं। ताड़ की एक जाति दूसरी जाति से बिलकुल भिन्न होती है। अतएव हरएक जाति का अलग-अलग वर्णन कर देना आवश्यक है। किंतु स्थानाभाव के कारण यह नहीं हो सकता। नर और मादा वृक्ष जुदे-जुदे होते हैं। मादा वृक्ष फलता है।

फल—बारह वर्ष का होने पर ताड़ फलने लगता है। ताड़ के फल बहुत ठंडे होते हैं। इसलिये लोग अक्सर उन्हें खाते हैं। यह फल बहुत रुचिकर होता है। कोमल फल मीठा होता है।

उपयोग—ताड़ का पेड़ बहुत काम का अर्थात् उपयोगी होता है। इसके पत्ते घरों पर छाए जाते हैं। पंखे, छतरी आदि भी इनसे बनाए जाते हैं। प्राचीन काल में ताड़ के पत्तों पर पुस्तकें लिखी जाती थीं। ताड़ के तने को नल की तरह पानी लाने के काम में लाते हैं। भेरली ताड़ से हलकी जाति के साबूदाने बनाए जाते हैं। इसका रस निकालते हैं, जो ताड़ी कहलाता है। इससे शराब भी बनाई जाती है।

खेती—पककर सूख जाने पर ताड़ के फल फट जाते हैं। ये हर तरह की ज़मीन में खड़े लगाए जाते हैं। ज़मीन को हमेशा गीली बनाए रखने से क़रीब नव-दस महीने में अंकुर निकल आता है। दो वर्ष का पौदा जन्मस्थली से हटाकर दूसरे स्थान में लगाया जा सकता है। यह पेड बहुत वर्ष बीतने पर बड़ा होता है।

चंदन

चंदन का वृक्ष साधारणतः बीस-पचीस फ़ीट तक बढ़ता है। तना लगभग तीन-चार फ़ीट मोटा होता है। इसकी लकड़ी में सुगंध आती है। भारत से हर साल लाखों रुपयों का चंदन बाहर भेजा जाता है। इसके फल काले होते हैं। कहीं-कहीं

लोग फलों को खाते भी हैं। जंगलों में चंदन आप-ही-आप उग आता है।

जाति—प्राचीन संस्कृत के ग्रंथों में इसकी श्रीखंड (सफ़ेद), पीत चंदन और रक्त चंदन नाम की तीन जातियों का नाम-उल्लेख पाया जाता है। वर्तमान में इसकी मलयागिरि, गुलाबी, और कुंकुमागुरु नाम की कई प्रसिद्ध जातियाँ हैं। गुलाबी-नामक जाति के चंदन-वृक्ष में गुलाब की-सी सुगंध आती है। कुंकुमागुरु-नामक चंदन उत्तम श्रेणी का माना जाता है। गुलाबी और कुंकुमागुरु चंदन की लकड़ी बहुत कम और महँगी मिलती है।

उपयोग—इसकी लकड़ी बहुत कामों में आती है। उसके पंखे, संदूक़ आदि कई तरह के सामान बनते हैं। फलों से तेल निकलता है, जिसको ग़रीब लोग चिराग़ में डालकर जलाते हैं। चंदन का इतर भी बनता है।

ज़मीन—सभी तरह की ज़मीन में चंदन का पेड़ बोया जा सकता है। पथरीली और दुमट ज़मीन में चंदन का वृक्ष जल्दी बढ़ता है।

खेती—ताज़े फल जमा करके उन्हें धूप में ख़ूब सुखा डाले। फिर बोने का समय होने तक सूखी जगह में वे रख दिए जायँ। शुरू बरसात में इसके बीज जन्मस्थलियों में बोए जाते हैं। बीजों को पत्तों की खाद में बोना चाहिए। एक साल तक पौदों पर सूखी घास, पत्ते आदि डालकर उसी पर पानी

डालते रहना चाहिए। इससे घास, पत्ते आदि सड़ जायँगे। तब दूसरी घास डाली जानी चाहिए। पौदों पर कुछ छाया भी कर देनी चाहिए। एक साल का पौदा स्थायी स्थान पर लगाया जाता है। चंदन के लिये पत्तों की खाद बहुत अच्छी है।

रक्षा और सिंचाई—यदि पौदे छोटे हों, और पानी न बरसता हो, तो दूसरे-तीसरे दिन सिंचाई की जानी चाहिए। पहले दो साल तक, गरमी के दिनों में, रोज़ पानी दिया जाना चाहिए। बाद को चौथे-पाँचवें दिन अगर पानी दिया जाय, तो भी कुछ हर्ज नहीं। खरगोश और हिरन इसके पत्ते खा डालते हैं। अतएव चारो तरफ़ काँटे लगा दिए जायँ।

पैदावार—दस-बारह बरस में पेड़ काटने लायक़ हो जाता है। इसकी जड़े भी छीलकर काम में लाई जाती हैं। भीतर की लाल लकड़ी बहुत क़ीमती होती है। २५-३० वर्ष में चंदन का पेड़, भीतर की लाल लकड़ी के लिये काटने योग्य हो जाता है। लकड़ी में तेल का अंश जितना ज्यादा होता है, उतनी ही ज्यादा उसकी क़ीमत हो जाती है।

सुरू

इसका वृक्ष सीधा, ऊँचा और गोपुच्छ के आकार का दिखाई देता है। किंतु माली काट-छाँटकर इसके भिन्न-भिन्न आकार बना देते हैं। सुरू बहुत सुंदर होता और बारहो महीने हरा रहता है। अतएव इसको रास्ते के किनारे या बाग़ के भीतर गोल-गोल क्यारियों में लगाते हैं।

जाति—अमेरिका और योरप की जातियों में बहुत फ़र्क़ नहीं है। बंबई, बंगाल आदि कुछ प्रांतों में आस्ट्रिया का सुरू पाया जाता है। यह बहुत महँगा मिलता है।

उपयोग—भारतवर्ष में सुरू केवल शोभा के लिये बाग़ों में लगाया जाता है। इसकी लकड़ी बहुत मज़बूत और टिकाऊ होती है। पत्ते दवा के काम में आते हैं। इसका गोंद सितार, सारंगी आदि बाजों के तारों में लगाया जाता है।

खेती—क़लम से पौदे तैयार किए जाते हैं। चार-पाँच इंच लंबे टुकड़े, बरसात में, जन्मस्थली में, एक-एक हाथ के फ़ासले पर, लगाए जाते हैं। काटे हुए सिरों के सूखने के पहले ही वे टुकड़े ज़मीन में गाड़ दिए जाने चाहिए। तीसरे-चौथे रोज़ पानी देते रहना और उन पर कुछ ढक देना चाहिए, जिसमें हवा न लगने पावे। क़लम ने जड़ पकड़ी या नहीं, यह जल्दी नहीं मालूम होता। जन्मस्थली में बालिश्त-डेढ़ बालिश्त ऊँचे हो जाने के बाद पौदे झुक या गिर जाते हैं। इसलिये उनके पास एक बाँस इस ढंग से बाँध देना चाहिए, जिसमें पौदे झुकने न पावें।

सिंचाई और निराई—सुरू के पौदे को चौथे-पाँचवें दिन पानी देते रहना चाहिए और यह ध्यान रहना चाहिए कि उनके तने के आस-पास घास-पात न जमने पावे।

सोनचंपा

सोनचंपे का पेड़ बहुत बड़ा होता है। वृक्ष का फैलाव

भी अधिक होता है, और उसकी छाया भी घनी होती है।

फूल—फूल का रंग पीला होता है। फूल में सुगंध भी अधिक होती है। सोनचंपे का फूल बहुत सुंदर देख पड़ता है। वृक्ष लगाने के बाद ५वें वर्ष पौदा फूलता है। फूल भाद्रपद और चैत्र में ज्यादा होते हैं।

उपयोग—फूलों से इतर निकाला जाता है। पत्तों से गुलाबजल के समान सुगंधित जल तैयार किया जाता है। लकड़ी इमारतों में लगाई जाती है। छाल और पत्ते औषधों में काम आते हैं। आसाम में इसके पत्तो पर एक प्रकार के रेशम के कीड़े पाले जाते हैं।

खेती—बीज ही बोया जाता है। एक वर्ष की उम्र हो जाने पर पौदे को जन्मस्थली से हटाकर खेत में बोते हैं। दो वर्ष की उम्र होने तक पौदे को धूप से नुक़सान पहुँचता है, इसलिये दोपहर में उस पर छाया कर देनी चाहिए। गरमी के मौसम में हर रोज़ पानी देते रहने से पौदे पर धूप और लू का उतना असर नहीं पड़ता।

खाद—भेड़-बकरी की मेंगनी की खाद इसके लिये अच्छी है।

सिंचाई—छोटे पौदे को हर पाँचवे-छठे दिन पानी देते रहना चाहिए। पेड़ बड़ा हो जाने पर सिंचाई की ज़रूरत नहीं रहती।

नागचंपा

नागचंपे का वृक्ष भारत के कई प्रांतों में होता है। इसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है, और उसको बढ़ने के लिये ज्यादा वक़्त भी दरकार होता है। बाग़ में नागचंपा, सोनचंपा, बकुल (मौलसिरी) और पुन्नाग के वृक्ष एक ही तख़्ते में लगाने से बहुत सुंदर लगते हैं।

फूल—पेड़ लगाने के सात-साठ साल बाद पौदा फूलता है। फूल मार्गशीर्ष और पौष के महीने में होते हैं। फूल विशेष सुगंधित और सुंदर होते हैं। फूल की आकृति नाग के फन के समान होती है, और इसीलिये इसे नागचंपा कहते हैं।

ज़मीन—यह हर तरह की ज़मीन में हो सकता है।

खेती—बीज जन्मस्थली में बोए जाते हैं। बीज बहुत कड़ा होता है, इसलिये एक महीने में उगता है। रोपे एक साल के होने पर बरसात में स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं।

सिंचाई—चार साल की उम्र होने तक पौदे को चौथे-पाँचवें दिन पानी दिया जाना चाहिए। इसके बाद आठवें दिन दिया जाय।

सफ़ेद चंपा

इसका पेड़ बहुत ही बड़ा होता है। बरसात में इसमें पत्ते भी ख़ूब होते हैं। गरमी के मौसम में इसमें बहुत कम पत्ते रहते हैं। इसे कहीं-कहीं ख़ैरचंपा भी कहते हैं।

फूल—फूलों का रंग सफ़ेद होता है। फूलों में गंध बहुत कम होती है।

उपयोग—छाल और फली ओषधि के काम आती है। साँप के काटने पर फली का उपयोग किया जाता है।

खेती—डाली लगाकर पौदे तैयार किए जाते हैं। इसे घेरे के पास लगाना अच्छा है। खाद और पानी की ज़रूरत नहीं रहती। छोटे पौदों को कुछ रोज़ पानी देना पड़ता है।

हरसिंगार

हरसिंगार (पारिजातक) का पौदा क़रीब दस फ़ीट के ऊँचा होता है।

फूल—फूल सफ़ेद और उसकी डंडी लाल होती है। फूल सितंबर से नवंबर तक होते हैं। फूल शाम के वक़्त खिलते हैं, और दूसरे दिन सबेरे ज़मीन पर झड़ पड़ते हैं। पास से फूलों की महक कम जान पड़ती है; परंतु हवा के साथ वह बहुत दूर-दूर तक फैल जाती है। इसके फूल बहुत सुकुमार होते हैं।

उपयोग—फूल की डंडी से रंग बनाया जाता है। उससे रेशम को रँगते हैं। पँखड़ियों से भी रंग तैयार किया जाता है। छाल चमड़ा कमाने के काम में आती है, और फूलों से इतर तैयार किया जाता है। बीज और पत्ते दवा के काम भी आते हैं।

ज़मीन—उत्तम दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी है।

खेती—पौदा बीज से तैयार किया जाता है। रोपे बरसात में जन्मस्थली से हटाए जाते हैं।

छँटाई—फूल की बहार का मौसम निकल जाने पर डालियाँ छाँट डालना चाहिए।

खाद—गोबर की खाद दी जाती है।

पुन्नाग या सुरंगी

इसका वृक्ष ४०-५० फ़ीट तक बढ़ता है।

फूल—फूलों की बहार माघ-फागुन में रहती है। फूल बहुत सुगंधित होते हैं। पेड़ लगाने के पाँच-छः साल बाद फूलता है।

उपयोग—इसके सूखे फूलों से लाल रंग तैयार किया जाता है। इसके फूलों को कहीं-कहीं 'लाल नागकेसर' भी कहते हैं। सुरंगी के रंग से रेशम रँगा जाता है। इससे इतर भी निकाला जाता है। इसके फलों को लड़के बड़े शौक़ से खाते हैं। लकड़ी इमारत के काम आती है।

ज़मीन—पानी के निकासवाली किसी भी ज़मीन में यह हो सकता है।

खेती—बीज बोया जाता है। क़लम भी लगाते हैं। पेड़ बहुत बड़ा होता है, इसलिये दो पौदों में ज्यादा फ़ासला रखना पड़ता है। कड़ी धूप और लू से पौदे को नुक़सान पहुँचता है।

सिंचाई—पौदे के बड़े होने तक चौथे-पाँचवें दिन पानी दिया जाना चाहिए। बड़े पेड़ को सिंचाई की उतनी ज़रूरत नहीं होती।

मुचकुंद

वृक्ष बड़ा और फूल बहुत लंबा होता है। फूल में पाँच पँखुड़ी होती हैं। साल में दो बार फूल लगते हैं—कातिक-अगहन और वर्षा में।

खेती—क़लम बरसात में लगाई जाती है। बरसात में पौदा खेत में लगाया जाता है। पाँच वर्ष की उम्र होने तक पेड़ को चौथे रोज़ पानी देते रहना चाहिए। बाद को आठवें-पंद्रहवें दिन पानी दिया जाय, तो कोई हर्ज नहीं।

केवड़ा

केवड़े का वृक्ष १५-२० फ़ीट ऊँचा होता है। यह दलदल ज़मीन में होता है। इसमें बरसात में फूल लगते हैं।

नर-जाति के पौदे के फूल में ही मीठी महक आती है। केवड़े की सुगंध की बराबरी संसार का कोई भी फूल नहीं कर सकता।

डाली लगाकर रोपे तैयार किए जा सकते हैं। क़लम बरसात में लगाई जाती है। कुछ तरीवाले स्थान में क़लम जल्दी जड़ पकड़ लेती है।

गुलाब

भारतवर्ष के सभी प्रांतों में, जहाँ बहुत ज़्यादा पानी नहीं

बरसता, गुलाब हो सकता है। यदि पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था कर दी जाय, तो अधिक वर्षावाले प्रांतों में भी यह बोया जा सकता है।

फूल—इसका फूल बहुत ही सुंदर होता है। भिन्न-भिन्न जातियों के फूलों का रंग और ख़ुशबू जुदी-जुदी होती है।

जाति—गुलाब की कई जातियाँ हैं। भारत के बाग़ों में अनेकों देसी और विदेसी जातियाँ बोई जाती हैं। स्थानाभाव के कारण उन सब पर यहाँ विचार नहीं किया जा सकता। ओल्ड कैबेज, डमास्कस रोज़, फ्रेंच रोज़, बंगाल बोरबन और चायना नाम की विदेसी जातियाँ ज़्यादा बोई जाने लगी हैं। अंतिम तीन जातियाँ भारत में बारहों महीने फूलती हैं।

उपयोग—फूलों से इतर और गुलाब-जल बनाया जाता है। और भी कई प्रकार से इसके भिन्न-भिन्न भागों का उपयोग किया जाता है।

पौदे तैयार करने की रीति—किसी छाँहदार बलुआ ज़मीन में, ठंड की मौसम (नवंबर) में, पकी डालियों के एक बालिश्त लंबे टुकड़े तीन इंच गाड़ दिए जाते हैं। पानी उतना ही दिया जाय, जितना मिट्टी तर बनाए रखने के लिये काफ़ी हो। वर्ष के किसी भी मौसम में दाब-क़लमें लगाई जा सकती हैं; परंतु इसके लिये ऑक्टोबर या फ़रवरी का महीना उत्तम है। टीरोज़, डेवोनियंसिस आदि की क़लमें बरसात में जल्दी लगती हैं।

उत्तरी प्रांतों में, फ़रवरी महीने में, गुलाब पर अच्छी नस्ल का चश्मा बाँधा जाता है। बंगाल में नवंबर में भेंट-क़लम से पेबंद चढ़ाया जाता है।

ज़मीन—पानी के निकासवाली उत्तम दुमट ज़मीन अच्छी है।

खेती—क़रीब एक फ़ुट ऊँचा पौदा जन्मस्थली, बक्स या गमले से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाया जाता है। हर दूसरे साल पौदे स्थानांतरित किए जाने चाहिए। यदि ऐसा करना संभव न हो, तो हर साल बरसात ख़तम होने पर जड़ें खोल दी जायँ। और, फिर एक अठवाड़े के बाद सड़े हुए गोबर की खाद और नई मिट्टी से ढक दी जायँ। सड़ी हुई मैले की खाद डाली जाय, तो और अच्छा। दिसंबर-जनवरी में ताज़े गोबर का घोल देना लाभदायक है।

छँटाई—कमज़ोर, सड़ी और ख़राब डालियाँ काटकर फेंक दी जायँ। उसी प्रकार घनी डालियाँ भी कुछ कम कर देना चाहिए। यदि किसी डाली के सिरे पर फूल लगें, तो फूलना बंद होते ही वह काट डाली जाय। छँटाई हर साल की जानी चाहिए। वर्षा होने पर जड़ें ज्यादा अन्नांश ग्रहण करती हैं। इसलिये इस समय छँटाई करने से पौदा ज़ोर से बढ़ने लगता है। छँटाई करने के बाद जड़ें खोलकर भेंड़ की मेंगनी की खाद डालने से तीन फ़ायदे होते हैं। एक तो वृक्ष नीरोग रहता है, दूसरे बाढ़ ख़ूब होती है, और तीसरे फूल बड़े, ज्यादा सुगंधित और

अधिक होते हैं। छँटाई न करने से दो-एक वर्ष में पौदा कमज़ोर हो जाता है, और एक-दो बरस बाद फूल छोटे होने लगते हैं।

खाद—खाद का घोल देना गुलाब के लिये अच्छा है। इससे पत्तों का रंग हरा रहता है। रोपे लगाने के पहले गढ़ों में सड़ी हुई लीद की खाद देना लाभदायक है। आग से जलाई हुई ज़मीन में गुलाब अच्छा होता है।

सिंचाई—गुलाब को ज्यादा पानी की जरूरत नहीं होती।

शत्रु—एक जाति की इल्ली और बीटिल तने में छेद कर अंदर घुस जाते हैं, और भीतर-ही-भीतर उसको खोखला करते रहते हैं। इस कीड़े के लगने से पौदा कमज़ोर हो जाता है, और कुछ वर्ष बाद सूख जाता है। छेद में क्रूड ऑयल इमलशन या फ़िनाइल डालने से कीड़ा मर जाता है।

गुलाब-बेल

कई विदेशी गुलाब की बेलें चलती हैं। भारत में कई गुलाब-बेलें बोई जाने लगी हैं। परंतु बहुत कम बेलें ऐसी हैं, जो भारत की आब-हवा में ख़ूब फूलती हों। क्रिमज़न क्लास्टर नाम की गुलाब-बेल भारत के कुछ प्रांतों में अच्छी फूलती है।

सेवती

यह गुलाब की ही जाति का एक पौदा है। इसे जंगली गुलाब कह सकते हैं। इसके फूल सफ़ेद और पंखड़ियाँ गुलाब

की पंखड़ियों से लंबी होती हैं। इसकी सुगंध भीनी होती है। फूलों से गुलक़ंद बनाया जाता है।

सब व्यवस्था गुलाब की ही तरह है।

कनेर

कनेर का पत्ता लंबा, सँकरा और मोटा होता है। इसका रस एक प्रकार का विष है।

जाति—फूलों के रंग के आधार पर इसकी चार जातियाँ मानी गई हैं—एक सफ़ेद फूलवाली, दूसरी लाल फूलवाली, तीसरी गुलाबी फूलवाली और चौथी पीले फूलवाली।

सफ़ेद, लाल और गुलाबी फूलवाली जातियों में दो उपजातियाँ हैं। एक प्रकार की उपजाति के फूल में इकहरी पंखड़ियाँ रहती हैं, और दूसरी में दुहरी।

फूल—फूल बारहो महीने होते हैं। फूलों में सुगंध का अभाव-सा है; परंतु फूलों से लदा हुआ पेड़ बहुत ख़ूबसूरत देख पड़ता है।

खेती—डाली लगाकर या दाब-क़लम से रोपे तैयार किए जाते हैं। रोपे खेत में पाँच-सात फ़ीट के अंतर पर लगाए जाते हैं।

सिंचाई—हर चौथे-पाँचवें दिन पानी दिया जाना चाहिए।

सूचना—यह पानी की नालियों के किनारे बोया जाय, तो अच्छा। जिन डालियों में फूल निकलना बंद हो गया हो, वे आधी-आधी काट डालनी चाहिए। जड़ों में गोबर की खाद

भी दे देनी चाहिए। बरसात में उत्तम जाति का चश्मा चढ़ाया जाता है। परंतु दाब-क़लम से पौदा तैयार करना ठीक है।

तगर

तगर का पेड़ बड़ा होता है। इसकी दो जातियाँ हैं। एक जाति के फूल में पाँच पंखड़ी होती है, और दूसरी जाति के फूल में गेंदे के फूल के समान बहुत-सी पंखड़ियाँ रहती हैं। सबेरे फूल में कुछ सुगंध रहती है।

खेती—डाली काटकर लगाने से रोपे तैयार हो जाते हैं। क़लम जनवरी-फ़रवरी में लगाई जाती है। बीज भी बोया जाता है।

खाद—बोने के पहले गढ़े में लीद या गोबर की खाद देनी चाहिए। बाद को भी हर साल खाद देते रहना चाहिए।

सिंचाई—हर चौथे-पाँचवें दिन पानी देते रहना चाहिए।

मदनमस्त

मदनमस्त का पौदा बहुत ऊँचा नहीं होता। इसका फूल पीले रंग का होता है। पकने पर कुछ पीला रह जाता है। इसकी सुगंध बहुत मस्त होती है। पेड़ बरसात में फूलता है। बोने के दो-तीन वर्ष बाद पेड़ फूलने लगता है।

ज़मीन—इसके लिये दुमट ज़मीन अच्छी होती है।

रोपे तैयार करना—दाब-क़लम लगाकर, डाली काटकर और बीज बोकर पौदे तैयार किए जाते हैं। गमलों में तैयार किए हुए पौदे एक वर्ष बाद स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं।

दो पौदों के बीच छः हाथ का फ़ासला रक्खा जाता है।

खाद——चूने और कूड़े की खाद डाली जाती है।

कचनार

इसकी दो जातियाँ हैं—सफ़ेद फूलवाली, और लाल फूल-वाली। इसके लिये उत्तम प्रकार की ज़मीन चाहिए। इसमें शीत-काल में फूल लगते हैं। बीज या दाब-क़लक से रोपे तैयार किए जाते हैं। सफ़ेद फूलवाले पौदे पर लाल फूलवाले पौदे का पेबंद भेंट-क़लम से चढ़ाया जाता है। गरमी के दिनों में कभी-कभी पानी दिया जाना चाहिए। इसकी कलियाँ तर-कारी बनाने के काम में आती हैं।

अमरूल

इसकी कई जातियाँ हैं। पौदे बहुत मनोहर देख पड़ते हैं। फूल भी भिन्न-भिन्न रंग के होते हैं। इसके पत्ते रात को सिकुड़कर नीचे झुक जाते हैं। हलकी ज़ोरदार ज़मीन में यह अच्छा जमता है। बरसात में ख़ूब पानी मिलता रहा, तो बाद को सिंचाई की उतनी ज़रूरत नहीं रहती। जड़ों की गाँठें अलग-अलग कर बोई जाती हैं।

मोगरा, मदनबान, रेवती

मोगरे की बेल चलती है। इसका फैलाव भी ख़ूब होता है। इसे मचान पर चढ़ाना अच्छा है। मोगरा जंगली भी पाया जाता है। परंतु जंगली पौदे के फूलों में कम सुगंध होती है।

जाति——मोगरे की कई जातियाँ हैं। एक की बेल चलती

है, और दूसरा दो-तीन फ़ीट से ज्यादा ऊँचा नहीं होता। एक जाति के मोगरे के फूल दुहरे होते हैं।

मदनबान और रेवती भी मोगरे की ही जातियाँ हैं। मदन-बान का फूल मोगरे के फूल से कुछबड़ा होता है, और रेवती का फूल कुछ छोटा।

फूल—पौदा लगाने के एक वर्ष बाद फूल निकलते हैं। पौदा वसंत में फूलता है, और गरमी के मौसम-भर फूलता रहता है।

रेवती—बरसात में डाली काटकर लगाने से रोपा तैयार हो जाता है। दाब-क़लम से भी पौदे तैयार किए जाते हैं। एक हाथ ऊँचे हो जाने पर रोपे स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं।

खाद—हर साल जड़ें खोलकर गोबर, घास और पत्तों की खाद दी जानी चाहिए।

सिंचाई—हमेशा सिंचाई करते रहना चाहिए। गरमी में जितना ज्यादा पानी दिया जायगा, उतने ही ज्यादा फूल फूलेंगे।

छँटाई—माघ के अंत में छँटाई की जाय। छँटाई के बाद १०-१५ दिन तक पानी न दिया जाय। फिर खाद देने के बाद सिंचाई की जाय। जो डालियाँ गए मौसम में फूल चुकी हों, वे आधी काट डाली जायँ।

मोतिया

इसकी बेल बहुत ऊँची नहीं होती। इसके पत्ते मोगरे के

पत्ते के समान होते हैं। इसमें बरसात में भी फूल फूलते हैं। शेष सब व्यवस्था मोगरे की तरह।

जाही

जाही की बेल के लिये मँडवा बनाना पड़ता है। पत्तों के कारण पौदा बहुत सुंदर नज़र आता है। इसकी दो जातियाँ हैं—सफेद और पीली। पीली जाति के फूल उतने सुगंधित नहीं होते; पर ऐसे फूलों से लदी हुई बेल बहुत मनोहर मालूम होती है। सफ़ेद फूल ज्यादा ख़ुशबूदार होते हैं।

फूल—जाही का फूल छोटा होता है। डाली काटकर लगाने के क़रीब एक साल के बाद पौदा फूलने लगता है। सावन-भादों में ख़ूब फूल फूलते हैं, बाद में कम।

खेती—दोनों ही जाति के पौदे दाब-क़लम या डाली लगा कर तैयार किए जाते हैं। ज़ोरदार और नीरोग डाली को गाँठ के पास से काटकर ज़मीन में लगा देने से चट जड़ें निकल आती हैं।

पानी और खाद—जाही को हमेशा पानी देते रहना चाहिए। घास-पत्ते की सड़ी हुई और गोबर की खाद दी जानी चाहिए।

छँटाई—फूल की बहार खतम हो जाने पर सभी डालियाँ आधी-आधी काट डालना चाहिए।

ज़मीन— जाही, जुही, चमेली, मोगरा, मालती, कुंद जाती आदि सभी के लिये दुमट ज़मीन अच्छी मानी गई है।

जुही

इसकी बेल का विस्तार खूब होता है। इसके पत्ते एक जगह पर तीन इकट्ठे लगते हैं।

फूल—पौदा लगाने के एक वर्ष बाद फूल फूलते हैं। इसके फूल की महक बड़ी भीनी होती है। इसके फूल चमेली के फूल से कुछ बड़े होते हैं। फूलों की बहार आषाढ़ के लगभग आती है।

खेती—जाही की तरह ही इसके रोपे तैयार किए जाते हैं। बाग़ों के रास्तों पर मँड़वों पर इसे चढ़ा देना चाहिए। दूसरी सब व्यवस्था जाही की ही तरह की जाय।

चमेली

चमेली की बेल का विस्तार बहुत होता है। फूलों की महक बड़ी मनोहर और मीठी होती है। इसके फूलों की बहार सावन के लगभग आती है। दूसरी सब व्यवस्था जाही की तरह की जाय।

कुंद

कुंद की बेल बहुत खूबसूरत मालूम होती है; परंतु वह मँडवे पर नहीं चढ़ाई जा सकती।

फूल—फूलों की मीठी महक सूखने पर भी नहीं जाती। बेल को थूनी का सहारा दे देने से वह कलाई की बराबर मोटी हो जाती है।

रोपे—डाली काटकर लगाने और दाब-क़लम लगाने से

रोपे तैयार हो जाते हैं। ज़मीन पर फैली हुई डालियाँ चट जड़ पकड़ लेती हैं। रोपा लगाने के एक वर्ष बाद पौदा फूलता है।

फूलों की बहार चैत-वैशाख में रहती है।

दूसरी सब व्यवस्था जाही की तरह की जाय।

मधु-मालती

इस लता के पत्ते बड़े होते हैं। लता मँडवे पर चढ़ाई जाती है। फूल बहुत सुगंधित होते हैं। फूल में पंखड़ियाँ होती हैं। चार पंखड़ियाँ सफ़ेद और एक सुनहरे रंग की होती है। बीज या दाब-क़लम लगाकर पेड़ तैयार किए जाते हैं। पेड़ लगाने के दो-ढाई बरस बाद पौदा फूलता है। अगस्त से जनवरी तक फूलों की बहार रहती है। शेष सब जाही के समान।

मालती

बरसात में यह बेल ख़ूब फैलती है। यह पेड़ों को चोटी तक चढ़ जाती है।

खेती—शीत-काल में पौदे में बीज आते हैं। बीज या दाब-क़लम लगाकर रोपे तैयार किए जाते हैं। कहीं डाली को काटकर भी बोते हैं। पौदे के अच्छी तरह जम जाने तक पानी देते रहना चाहिए। दूसरी सब प्रक्रियाएँ जाही की तरह की जायँ।

लाल चमेली

इसे रंगून की बेल भी कहते हैं। इस पौदे में विचित्रता यह है कि ज्यों-ज्यों इसकी उम्र बढ़ती जाती है, त्यों-त्यों फूलों

का रंग भी बदलता जाता है। इसे पानी के निकासवाली चाहे जिस तरह की ज़मीन में बो सकते हैं। शाखा काटकर या दाब-क़लम से रोपे तैयार किए जा सकते हैं। शेष सब जाही की तरह।

चाँद-बेल

यह बेल गेहूँ के खेतों में बहुत पाई जाती है। किसी गमले में पाँच-सात बीज बो देते हैं। अंकुरित हो जाने पर गमले बरांडे या पेड़ों की डाली में लटका दिए जाते हैं। लटकते हुए गमलों में यह बेल बहुत ख़ूबसूरत देख पड़ती है। गमले में दूसरे-तीसरे दिन पानी डालते रहना चाहिए।

काम-लता

यह लता क़रीब छः फ़ीट ऊँची बढ़ती है। फूल सफ़ेद, पीले और लाल होते हैं। वर्षा का ज़ोर घटते ही बीज उत्तम भुर-भुरी ज़मीन में बोए जाते हैं। यदि तार की जालीवाले गमलों में बोई जाय, तो लता तार से लिपटकर गमले को ढक लेगी। फूलों से लदी हुई लता ब ुत ख़ूबसूरत होती है।

चाबुक-छड़ी

यह भी एक लता है। इसकी शाखाएँ ख़ूब फैलती हैं। पत्ते तीन-चार इंच लंबे होते हैं। इसे मँडवे या पेड़ पर चढ़ाना चाहिए। फूल गरमी या बरसात में ख़ूब होते हैं।

इसकी डाली काटकर लगाई जाती है। इसके रस से हलकी जाति का रबर बनाया जाता है।

भुइँचंपा

भुइँचंपे का पौदा दो-तीन हाथ से ज़्यादा ऊँचा नहीं होता। इसके पत्ते हल्दी के पत्तों के आकार के होते हैं। पौदे का तना ज़मीन के अंदर ही रहता है, और पत्ते बाहर निकल आते हैं।

फूल—फूल पेड़ की डालियों में नही लगते। माघ-फागुन के क़रीब पौदा सूख जाता है, और ज़मीन से फूल बाहर निकलते हैं। फूल पीला होता है, और उसमें मंद सुगंध आती है। क़ंद बोने के आठ महीने बाद पौदे में फूल लगते हैं।

ज़मीन—पानी के निकासवाली दुमट ज़मीन में बोया जाता है।

खेती—बरसात के शुरू में क़ंद बोया जाता है। पौदे को हर सातवें-आठवें दिन पानी देते रहना चाहिए।

खाद—गोबर की खाद दी जाती है।

गुलशब्बो

भारतीय उद्यानों में यह बहुत बोई जाती है। इसका पौदा चार-पांच फ़ीट ऊँचा होता है।

फूल—इसका फूल रात को खिलता है। मधुर सुगंध से मन मस्त हो जाता है। इसे रजनीगंधा भी कहते हैं। फूल ज़्यादा लंबा होता है। बोने के एक वर्ष बाद पौदा फूलने लगता है। फूल गिरने पर, जिस डाली में फूल आए हों, उसे काट डालना चाहिए। ऐसा करने से शीघ्र ही दूसरी डालियाँ

निकल आवेंगी, और उनमें नए फूल निकलेंगे। इस क्रम को जारी रखने से हमेशा फूल निकलते रहेंगे।

खेती—हर तरह की अच्छी ज़मीन में इसके क़ंद अलग-अलग कर बोए जाते हैं। अदरख की तरह इसके क़ंद में भी जड़ें निकल आती हैं। माघ के क़रीब इसकी जड़ों को पौदों से अलग कर बोना चाहिए। पौदे तख़ते में एक-एक हाथ के फ़ासले पर लगाए जाने चाहिए।

गुलाबास

गुलाबास का पौदा दो-तीन फ़ीट से अधिक ऊँचा नहीं होता। इसमें भिन्न-भिन्न रंग के फूल होते हैं। फूल लंबा और नाज़ुक होता है। क़ंद बोने के सात-आठ महीने बाद पौदा फूलने लगता है। फूल शाम को खिलते हैं। इनमें बहुत कम सुगंध रहती है।

क़ंद खेत में एक-एक हाथ के अंतर पर लगाए जायँ, और हर आठवें दिन पानी दिया जाय। इसके बीज भी बोए जाते हैं।

मरुआ

इसके पत्तों में भी सुगंध रहती है। इसके फूल की गंध बहुत तेज़ होती है। बीज ही बोए जाते हैं। बीज जन्मस्थली या गमलों में बोए जाते हैं। फागुन-चैत में बोते हैं, और बरसात में पौदे ज़मीन में लगाए जाते हैं। क़रीब दो बालिश्त ऊँचा हो जाने पर पौदे की फुनगी काट ली जाती है। इससे वह ख़ूब फैलता है।

पान-कपूर

पान-कपूर का पौदा तीन-चार हाथ ऊँचा बढ़ता है। पत्तों में कपूर की-सी गंध आती है। इसे कहीं-कहीं कपूर-चिनई भी कहते हैं। पत्ते और फूल गुलदस्तों में लगाए जाते हैं।

बीज बोकर ही रोपा तैयार किया जाता है। इसकी डालियाँ भी काटकर बोई जाती हैं। सिंचाई की अच्छी व्यवस्था करना ज़रूरी है।

शुकदरशन

इसके पत्ते सँकरे और तीन फ़ीट लंबे होते हैं। फूल के गुच्छे में ६ से १६ तक फूल होते हैं। फूल बड़े होते हैं। रात को इसकी सुगंध ख़ूब फैलती है।

ज़मीन—ज़ोरदार दुमट ज़मीन इसके लिये उपयुक्त है। गड्डे अलग-अलग कर बोए जाते हैं। गरमी में गमले बदलना ज़रूरी है। पौदे के जड़ पकड़ लेने के बाद उसकी कुछ भी हिफ़ाज़त नहीं करनी पड़ती।

चाँदनी

भारत के बाग़ों में चाँदनी बहुत ज्यादा पाई जाती है। पौदा बड़ा ख़ूबसूरत और पाँच-छः फ़ीट ऊँचा होता है।

रात को फूलों की ख़ुशबू से सारा बाग़ महक उठता है। दिन को फूलों में गंध नहीं होती। फूलों का रस दुखती आँखों में डालते हैं।

दाब-क़लम या डाली काटकर लगाने से रोपे तैयार हो जाते हैं।

कलवारी

इसके फूल शीत-काल में खिलते हैं। उन प्रांतों में, जहाँ हर साल ४०-५० इंच वर्षा हो, कलवारी को जल के निकासवाली ज़मीन में घेरे के पास-पास बो देना चाहिए।

पौदे के बढ़ जाने पर वह इतना घना हो जाता है कि पशु उसके अंदर नहीं घुस सकते।

फूल खिलने पर पौदा बहुत ख़ूबसूरत देख पड़ता है।

कमल

कमल जलाशयों (तालाब) में होता है। इसके काँदे लगाए जाते हैं। कमल का तना बहुत बड़ा होता है। तना पोला, पर भीतर से जालीदार होता है।

जाति—सफ़ेद, लाल, गुलाबी, नीला आदि कमल की कई जातियाँ हैं। फूल अतिमनोरम होता है। भिन्न-भिन्न जाति के कमल की पंखड़ियाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। कुछ जातियों के कमल के फूल सुगंधित होते हैं, और कुछ में बिलकुल गंध नहीं होती है। हमेशा पानी बना रहे, तो इसमें बारहो महीने फूल लगते रहते हैं।

उपयोग—काश्मीर में कमल का काँदा खाया जाता है। तना और काँदा दवा के भी काम आता है।

खेती—कमल ऐसे स्थान पर लगाया जाना चाहिए, जहाँ हमेशा पानी भरा रहता हो। कृत्रिम जलाशयों की तली के

कीचड़ में काँदा बोया जा सकता है। मगर शर्त यह है कि तली में पत्थर न जड़े हों।

कुमुद (कोकाबेली)

कमल की तरह इसे भी कृत्रिम जलाशयों में बोते हैं। इसके पत्ते भी कमल के पत्तों के समान ही होते हैं। यह कमल की ही तरह बोया जाता है। शीत-काल में यह ख़ूब फूलता है।

ख़स

ख़स एक जाति की घास है। इसकी जड़ें सुगंधित होती हैं। इसके गड्डे लगाने से डेढ़-दो वर्ष में जड़ें ख़ूब फैल जाती हैं। ख़स का पौदा ख़ूबसूरत होता है।

ख़स के परदे, पंखे आदि बनाए जाते हैं। पानी में भी ख़स डाला जाता है। दवा के भी काम आता है।

इसको ज्यादा पानी दरकार होता है। इसलिये पानी की नाली में ही इसे बोया जाना चाहिए।

रोसा-घास

यह चार-पाँच फ़ीट ऊँची बढ़ती है। हवा के साथ इसकी सुगंध बहुत दूर तक फैल जाती है।

रोसा से तेल भी निकाला जाता है। ख़स की तरह इसके भी परदे बनाए जाते हैं; परंतु इसमें ख़ुशबू कम होती है।

इसके बीज या गड्डे पानी की नालियों में बोए जाते हैं। इसका एक प्रकार का चित्र आगे देखिए।

हिबिस्कस रोसा

अगिया-घास

भारत के बाग़ों में यह घास अक्सर बोई जाती है। इसके पत्तों में एक प्रकार की ख़ुशबू आती है।

खेरू

बीज जन्मस्थली या बक्स में सितंबर से नवंबर तक बोए जाते हैं। जन्मस्थली की मिट्टी नरम, भुरभुरी और बारीक हो, और उसमें पुरानी चूने की खाद दी जानी चाहिए। जहाँ दोपहर में छाया रहे, वहीं इसे बोना चाहिए। जनवरी या मार्च तक फूलों की बहार रहती है। यह भी मौसमी पौदा है।

लटकन

इसको केसर का पेड़ भी कहते हैं। इसके फूल सफ़ेद या गुलाबी होते हैं। इसके बीजों से रंग भी तैयार किया जाता है। रास्तों के किनारे इसका तख़्ता बहुत मनोहर देख पड़ता है। बीज ही बोया जाता है। किसी भी औसत दरजे की ज़मीन में यह हो सकता है।

करनफूल

सूखी हवावाले प्रांतों में यह मई से नवंबर तक बोया जा सकता है। परंतु जिन प्रांतों में ज्यादा पानी बरसता हो, वहाँ सितंबर तक न बोया जाय।

ज़मीन—ख़ूब खाद डाली हुई बलुआ ज़मीन इसके लिये

अच्छी है। बीज जन्मस्थली या बकस में बोए जायँ, और ६ इंच ऊँचे हो जाने पर पौदे खेत में—तख़ते में—बोएँ जायँ।

गुलख़ैरू

उत्तम भुरभुरी ज़मीन में इसका बीज अगस्त से नवंबर तक बोया जाता है। फूलों की बहार दिसंबर से फरवरी तक रहती है। खाद का घोल दिया जाय, तो पौदों की बाढ़ ख़ूब होती है।

गुलमेहँदी

इसके फूल अनेक रंग के होते हैं। ख़ूब खादवाली उत्तम ज़मीन में इसे बोते हैं। बीज में ६ इंच की दूरी पर क़तारों में बोए जाते हैं, और दो पौदों के बीच छः इंच का फ़ासला रक्खा जाता है। पहला फूल नज़र आते ही खाद दी जानी चाहिए। सूखा मौसम हो, तो ख़ूब पानी दिया जाना चाहिए। अठवाड़े में दो बार खाद का घोल दिया जाय, तो और अच्छा।

मई से जनवरी तक के बीच में १५-१५ इंच के फ़ासले से बीज बोए जायँगे, तो साल-भर तक फूलों की बहार बनी रहेगी।

लेंटाना हाइब्रीड

बाग़ के बाहरी हिस्सों के लिये यह पौदा अच्छा है। पथ-

रीली जगह में भी यह बोया जा सकता है। इसके फूल भी रंग-बिरंगे होते हैं। बीज भी बोया जाता है।

क्रोटन

क्रोटन की कई उपजातियाँ हैं। चुनी हुई कुछ जातियाँ ही बाग़ के लिये उपयुक्त होती हैं। गमले भरने के लिये किसी गत परिच्छेद में जो मिश्रण लिख आए हैं, उसमें कुछ चूना मिलाकर क्रोटन के लिये गमले भरे जायँ। बड़े पत्ते वाली जाति को धूप और ज़ोर की हवा के झोंकों से बचाए रखना चाहिए। पर छोटे पत्ते वाली जातियाँ अगर धूप में रक्खी जायँ, तो भी कोई हर्ज नहीं।

कुछ जातियों की डालियाँ काटकर पानी में रखने से जड़ें निकल आती हैं। मगर पानी बदलते रहना चाहिए। कुछ जातियों की डाली लगाने से जड़ें जल्दी नहीं निकलती। जल्दी जड़ें पकड़नेवाली जाति पर दूसरी जाति का पेबंद चढ़ाया जाता है।

क्रोटन को थ्रिप्स से बहुत नुक़सान पहुँचता है। इसके प्रतिकार के लिये मिट्टी के तेल का मिश्रण छिड़कना फ़ायदेमंद है।

स्थानाभाव के कारण क्रोटन की भिन्न-भिन्न जातियों के संबंध में इस जगह विचार नहीं किया जा सकता।

मौसमी फूल

ऑलिसम (Allysum)

यह पौदा बहुत ख़ुशबूदार होता है। इसकी पाँच मुख्य उपजातियाँ हैं, जिनमें 'ऑलिसम मिनिमम्' नाम की उपजाति उत्तम मानी जाती है। इसमें छोटे-छोटे सफ़ेद फूलों के गुच्छे निकलते हैं। क्यारियों के किनारों पर लगाने से इसकी शोभा और भी मनोहारिणी हो जाती है। यह पौदा ६ से ९ इंच ऊँचा बढ़ता है। अतएव क्यारियों के किनारों पर लगाया जा सकता है। यदि तख़्तों में लगाया जाय, तो फूलने के मौसम में जान पड़ता है, फूलों का गलीचा-सा बिछा है।

सितंबर-ऑक्टोबर में जन्मस्थली में बीज बोए जाते हैं। तीन-चार इंच की उँचाई हो जाने पर दूसरी जगह लगाना फ़ायदेमंद है। तख़्तों—क्यारियों—में चार इंच के फ़ासले पर पौदे लगाए जाने चाहिए। ऑलिसम के फूलों की बहार डेढ़-दो महीने तक रहती है।

अमरांथस (Amaranthus)

बाग़ों में यह पौदा सिर्फ़ शोभा के लिये लगाया जाता है। इसकी कई उपजातियाँ हैं, जिनमें 'अमरांथस ट्रायकलर' और 'सॉलिसी फ़ोलियस' नाम की उपजातियाँ सर्वश्रेष्ठ हैं। अमरांथस ट्रायकलर के पत्तों का रंग कुसुंभी और पीला होता

है, और हरे व सफेद रंग का मेल उनकी शोभा को बहुत ही बढ़ा देता है।

जन्मस्थली में पत्ते की खाद देकर जून-जुलाई में बीज बोया जाता है। दो-तीन इंच ऊँचे पौदे ऐसे स्थान पर लगाए जाने चाहिए, जहाँ उनको हवा और धूप खूब मिल सके। एक-दो बार अच्छी वर्षा हो जाने के बाद इनको १० इंच के गमलों में लगाना चाहिए। कहीं-कहीं क्यारियों में भी ये बोए जाते हैं। चिकनी मिट्टी इनके लिये हानिकारक है। यह पौदा तीन फ़ीट तक ऊँचा बढ़ता है।

ज्यादा धूप लगने से पत्तों का रंग भी गहरा हो जाता है, और कुछ रेतीली ज़मीन भी पत्तों की खूबसूरती बढ़ाने में मदद देती है।

नवंबर-दिसंबर में फूल निकलते हैं। फूलने के बाद मौसम में पौदे की खूबसूरती बहुत बढ़ जाती है।

अमरांथस की एक उपजाति मिलियान कोलियस रूबर है। इसके पत्ते लाल होते हैं। इसका पौदा एक फ़ुट से अधिक ऊँचा नहीं होता। इस कारण क्यारियों के किनारे पर लगाया जा सकता है।

एस्टर (Aster)

एस्टर के फूलों में भिन्न-भिन्न रंगों की बहार देख पड़ती है। फूलों के रंग के अनुसार इसकी कई जातियाँ मानी गई हैं। एस्टर के फूल निहायत खूबसूरत होते हैं। पौदे से तोड़ लेने पर भी

यह फूल बहुत दिनों तक नहीं कुम्हलाता। इसके बीज ऑक्टो-बर में 'बकस' में बोए जाते हैं। पाँच-छः पत्ते निकल आने के बाद पौदे गमले में।या ज़मीन में लगा दिए जायँ। दो पौदों के बीच में छः से नौ इंच तक का फ़ासला रहना चाहिए। स्थाई स्थान पर लगाए जाने के बाद पौदों के ऊपर पाँच-सात दिन तक छाया रखनी चाहिए। इसके बाद धूप लगने से भी कुछ हानि नहीं होती। इसकी फ़सल क़रीब चार महीने तक रहती है। कलियाँ निकलना शुरू होने पर पौदों को करंज की खली या गोबर की खाद पानी में घोलकर देना फ़ायदेमंद है। खाद देने से फूल ज़्यादा होते हैं।

जहाँ १५-२० इंच वर्षा होती है, उन प्रांतों में, इसका बीज जुलाई में बोया जाता है। बंबई की जैसी वर्षा जहाँ होती है, उन प्रांतों में नवंबर से जनवरी तक बीज बोए जाते हैं। बीज पंद्रह-पंद्रह दिन के फ़ासले से बोए जायँ, तो फूलों की बहार बहुत दिनों तक बनी रहेगी।

मेगोल्ड, ब्ल्यूबाटल, चारीज़, एटेरे-फ़िला आदि इसी जाति के पौदे हैं।

एंटी-हाइनम (Antirrhinum)

इस मौसमी पौदे की बहार चार-पाँच महीने तक रहती है। इसकी दो जातियाँ हैं। एक जाति के पौदे ऊँचे होते हैं दूसरी के छोटे। इसका बीज सितंबर-ऑक्टोबर के बीच

जन्मस्थलों में बोया जाता है। चार पत्ते निकल आने पर पौदे स्थायी स्थान पर लगाए जाने चाहिए। अधिक ऊँचे बढ़नेवाले पौदे डेढ़-डेढ़ फ़ीट के और छोटी जाति के पौदे एक-एक फ़ुट के फ़ासले पर बोए जाने चाहिए। इस पौदे के फूल मेज़ की सजावट के लिये बहुत अच्छे होते हैं।

बालसम (Balsam)

बालसम का बीज जून-जुलाई में बोया जाता है। चार-पाँच पत्ते निकल आने पर पौदे गमलों या क्यारियों में लगाए जाते हैं। दो पौदों में ८ से १२ इंच तक का फ़ासला रक्खा जाता है। बालसम के फूल कई रंग के होते हैं। इसकी बहार डेढ़-दो महीने तक रहती है।

कैंडीटफ़्ट (Candituft)

यह पौदा बहुत जल्दी बढ़ता है। पौदे की उँचाई छः इंच से ज्यादा नहीं होती। पौदा बहुत ज्यादा फैलता है। कैंडीटफ़्ट का बीज स्थायी स्थान पर ही बोया जाता है। बीज को सितंबर-ऑक्टोबर में बोते हैं। दो पौदों के बीच सात-आठ इंच का फ़ासला रहना चाहिए। इसकी बहार क़रीब तीन महीने तक रहती है। मेज़ की सजावट में इसका ज्यादा उपयोग होता है।

कार्नेशन (Carnation)

इसका बीज अगस्त से ऑक्टोबर तक बोया जाता है।

चार-पाँच पत्ते निकल आने पर गमले या स्थायी स्थान में पौदे लगा दिए जाते हैं। दो पौदों के बीच नौ इंच का अंतर रहना चाहिए। क्यारियों में खाद के साथ थोड़ा-सा चूना भी डालना चाहिए। कलियाँ निकलना शुरू होते ही करंज की खली पानी में घोलकर डालने से फूल बड़े और ज्यादा होंगे। ज्यादा पानी पौदों के लिये हानिकारक होता है। क्यारियों या गमलों को उतना ही पानी दिया जाना चाहिए, जितना मिट्टी गीली बनाए रखने के लिये काफी हो। पौदे देर में फूलते हैं, किंतु फसल चार-पाँच महीने तक रहती है।

सिलोसिया (Celosia)

सिलोसिया बरसात में होता है। बीज स्थायी स्थान पर ही बोया जाना चाहिए ; क्योंकि दूसरी जगह हटाने से पौदों की जड़ों को हानि पहुँचती है, जिससे वे दूसरी जगह जड़ नहीं पकड़ते। ज्यादा पानी से पौदों को हानि पहुँचती है, इसलिये इसे ऐसे स्थान पर बोना चाहिए, जहाँ पानी का निकास अच्छा हो। इसके पौदे एक फ़ुट के लगभग ऊँचे होते हैं। इसकी बहार दो-तीन महीने तक रहती है।

क्रायसेंथिमम (Crysanthemum)

बंबई, कलकत्ता, देहली आदि बड़े-बड़े नगरों में इसकी खेती बहुत की जाती है। इसकी चार-पाँच सौ के लगभग उपजातियाँ हैं। सितंबर-ऑक्टोबर में बीज जन्मस्थली में, बोए जाते हैं। हल्की और कसदार ज़मीन इसके

क्रायसेंथिमम

लिये बहुत अच्छी होती है। ५-६ इंच ऊँचे पौदे गमले में या स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं। इसको घास-पत्ते की खाद ज्यादा देनी चाहिए। फूलों की कलियाँ लगान शुरू होने पर खली की खाद, पानी में घोल-कर डालने से फूल अधिक होते हैं।

पौदों के पास और छोटे-छोटे पौदे उग आते हैं। उनको वहाँ से हटाकर दूसरी जगह लगाने से भी पौदे जड़ पकड़ लेते हैं।

विदेशी क्रायसेंथिमम के अलावा देशी क्रायसेंथिमम के फूल भी बहुत अच्छे होते हैं। इसकी तीन जातियाँ अत्युत्तम मानी जाती हैं। देशी क्रायसेंथिमम भारतवर्ष के जुदे-जुदे प्रांतों में, सेवती, सेवंती, गुलेदावदी, गुलदावली आदि नामों से प्रसिद्ध है।

सिनरेरिया (Cineraria)

इसका पौदा नाजुक होता है। हल्की ज़मीन इसके लिये अच्छी होती है। स्थायी स्थान पर लगाने के पहले पौदों को दो-तीन बार एक जगह से दूसरी जगह हटाना होता है। बीज जन्मस्थली में बोया जाता है। पत्तों की खाद देना फ़ायदेमंद है। तीन-चार पत्ते निकल आने पर पौदे जन्मस्थली से हटाए जाने चाहिए। पौदों पर छाया रखना फ़ायदेमंद है। इसके फूल बहुत सुंदर होते हैं। इसकी बहार क़रीब तीन महीने तक रहती है। बीज सितंबर-ऑक्टोबर में बोए जाते हैं। मेज़ की सजावट के लिये इसके फूल ज्यादा उपयोगी समझे जाते हैं।

क्लार्किया (Clarkia)

इसका बीज सितंबर-ऑक्टोबर में, हल्की ज़मीन में, बोया जाता है। पौदे दो फ़ीट तक ऊँचे होते हैं। पाँच-छ पत्ते निकल आने पर पौदे जन्मस्थली से हटाकर स्थायी स्थान पर लगाए जाने चाहिए। दो पौदों के बीच एक फ़ुट का फ़ासला रक्खा जाना चाहिए। इसकी बहार क़रीब चार महीने तक रहती है।

कानवॉलवुलस (Convolvulus)

यह एक मौसमी लता है। मैरिटैनिका-नामक इसकी एक जाति है, जो हर साल फूलती है। गमलों में बोकर यह लता बरामदे में लटका दी जाती है। बड़े पेड़ों के तने के चारों ओर दो-तीन फ़ीट ऊँची मिट्टी चढ़ाकर उस पर लगाने से इसकी

कानवलवुलस मेजर

लता बहुत सुंदर दिखाई देती है। कहीं-कहीं पेड़ों के नीचे पत्थर-कंकड़ वग़ैरह का ढेर लगाकर (Rockery) उस पर

इसकी बेलें बोई जाती हैं। बीज जून-जुलाई में बोया जाता है। अधिक वर्षा जिन प्रांतों में होती है, वहाँ जुलाई-अगस्त तक बोया जाना चाहिए। बरसात में बोई हुई लताएँ दस फ़ीट तक ऊँची बढ़ती हैं। जालीदार गमलों में लगाने से पौदा बहुत सुंदर दिखाई देता है; क्योंकि बेल जाली में लिपट जाती है, और उससे वह बिलकुल छिप जाती है। इसको ख़ूब पानी दिया जाना चाहिए। 'कानवलवुलस मेजर' की लता के फूल भाँति-भाँति के रंग-बिरंगे होते हैं। थूनी के सहारे चढ़ाई गई बेल बहुत ख़ूबसूरत दिखाई देती है।

कारिऑपसिस (Coriopsis)

इसका बीज साल में दो बार बोया जा सकता है, जिससे सभी ऋतुओं में फूलों की बहार बनी रहती है। बीज जुलाई और ऑक्टोबर में बोए जाते हैं। पाँच-छ पत्ते निकलने पर पौदे स्थायी स्थान पर लगाए जाने चाहिए। दो पौदों के बीच एक फ़ुट का फ़ासला रक्खा जाना चाहिए। इसका पौदा तीन फ़ीट तक ऊँचा होता है, और बहार चार-पाँच महीने तक रहती है। पानी के निकासवाली ज़मीन इसके लिये अच्छी होती है।

कॉसमिया (Cosmia)

बरसात में खादवाली जन्मस्थली में बीज बोया जाता है। पाँच-छ पत्ते निकल आने पर पौदे नौ इंच के फ़ासले से स्थायी स्थान पर बोए जाते हैं। पौदे क़रीब चार फ़ीट

तक ऊँचे बढ़ते हैं। इसकी बहार क़रीब चार महीनों तक रहती है।

डायाथस (Dianthus)

डायांथस के फूल सफ़ेद, कुसुंभी, गुलाबी आदि जुदे-जुदे रंग के होते हैं। अतएव बहार के दिनों में क्यारियाँ बहुत सुंदर दिखाई देती हैं। इसके फूल दो तरह के होते हैं। एक तरह के फूलों में इकहरी पंखड़ियाँ होती हैं, और दूसरी तरह के फूलों में दुहरी पंखड़ियाँ। इसका बीज सितंबर-ऑक्टोबर में जन्मस्थली में, बोया जाता है। क्यारियों में पौदे ६-६ इंच के फ़ासले से बोए जाते हैं। इसके लिये हल्की और पानी के निकासवाली ज़मीन अच्छी समझी जाती है। रेती और पुराना चूना जिसमें मिला हो, उस मिट्टी में पौदे ख़ूब फूलते हैं। इसका पौदा क़रीब एक फ़ुट ऊँचा होता है। फूलों की बहार क़रीब तीन महीने तक रहती है।

गॉडेशिया (Godotia)

इसके बीज सितंबर-ऑक्टोबर में, जन्मस्थली में, बोए जाते हैं। दो-तीन इंच के ऊँचे पौदे स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं। दो पौदों में एक फ़ुट का फ़ासला रक्खा जाता है। पौदे तीन फ़ीट तक ऊँचे बढ़ते हैं। इसकी बहार क़रीब चार महीने तक रहती है। इसको ज़्यादा खाद न देनी चाहिए।

होलीहॉक (Hollyhock)

होलीहॉक के पौदे नहीं रोपे जा सकते, इसलिये बीज

जन्मस्थली में न बोए जाकर तख़्तों या क्यारियों में ही, एक एक फ़ुट के फ़ासले पर, बोए जाने चाहिए। पौदा छ फ़ीट के क़रीब ऊँचा होता है। पत्ते बड़े होते हैं। फूलों की बहार क़रीब चार महीने तक रहती है।

लार्कस्पर (Larkspur)

इसका बीज ऑक्टोबर में, जन्मस्थली में, बोया जाना चाहिए। चार-पाँच पत्ते निकल आने पर पौदे स्थायी स्थान में लगाए जाते हैं। इसकी बहार क़रीब चार महीने तक रहती है। लार्कस्पर के फूल सफ़ेद, आसमानी, गुलाबी आदि कई रंगों के होते हैं।

ल्युपिंस (Lupins)

इसके फूल और पत्ते ख़ूबसूरत होते हैं। एक जगह से उखाड़-कर दूसरी जगह लगाने से पौदे मर जाते हैं। इसलिये स्थायी स्थान में ही बीज बोना चाहिए। इसका बीज ऑक्टोबर के क़रीब बोया जाता है। रेतीली ज़मीन में पौदे ख़ूब फूलते हैं। फूलों की बहार क़रीब चार महीने तक रहती है।

लायनेरिया (Linaria)

लायनेरिया के फूल गुच्छे-के-गुच्छे लगते हैं। इसका बीज सितंबर-ऑक्टोबर में बोया जाता है। हल्की ज़मीन इसके लिये उत्तम होती है। बीज स्थायी स्थान पर ही लगाए जाने चाहिए। दो पौदों के बीच छ से नौ इंच तक का फ़ासला रक्खा जाता है। पौदे एक से डेढ़ फ़ीट तक ऊँचे बढ़ते हैं। फूलों की बहार तीन महीने के लगभग रहती है।

मिनॉनेट (Mignonette)

मिनॉनेट के फूलों में मीठी सुगंध आती है। इस कारण अमीरों के बाग़ों में यह बहुत ज्यादा बोया जाता है। इसका बीज सितंबर से नवंबर तक बोया जा सकता है। पाँच-छ पत्ते निकल आने पर पौदे स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं। दो पौदों में एक फ़ुट का अंतर रक्खा जाता है। इसकी बहार क़रीब चार-पाँच महीने तक रहती है। फूलने पर खाद का घोल डालना फ़ायदेमंद है।

नस्टरशियम (Nasturtium)

इसे हिंदी में नकेसर कहते हैं। इसकी दो जातियाँ हैं। एक जाति के पौदे ऊँचे बढ़ते हैं, और दूसरी के छोटे रहते हैं। इसकी बेल चलती है। ऊपर ऊँची होकर बढ़नेवाली जाति के पौदे ६ इंच ऊँचे बढ़ जाने पर सहारा देकर खड़े कर दिए जाने चाहिए; क्योंकि ये चार-छ. फ़ीट तक ऊँचे बढ़ जाते हैं। दूसरी जाति के पौदे ६ इंच से अधिक ऊँचे नहीं बढ़ते। इसलिये उनको सहारा देने की ज़रूरत नहीं होती। ये गमलों में भी लगाए जा सकते हैं। फूलों की बहार चार महीने तक रहती है। बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये उपयुक्त होती है।

पैंज़ी (Pansy)

इसकी लगभग २५ जातियाँ हैं। इसके फूलों का रंग जुदा-जुदा होता है। योरपियन लोग इसे बहुत पसंद करते हैं। इसके बीज जन्मस्थली या बक्स में, सितबर-ऑक्टोबर में,

बोए जाते हैं। तीन इंच ऊँचे पौदे स्थायी स्थान पर लगाए जाते हैं। दो पौदों के बीच छ इंच का फ़ासला रक्खा जाना चाहिए। पौदा आठ-नौ इंच ऊँचा बढ़ता है। फूलों की बहार चार-पाँच महीने तक रहती है।

पेटुनिया (Petunia)

हर तरह की ज़मीन में पेटुनिया बोया जा सकता है। बीज अगस्त से ऑक्टोबर तक बोए जाते हैं। इसके लिये ज्यादा-खादवाली ज़मीन का होना ज़रूरी है। पेटुनिया का पौदा दो फ़ीट से अधिक ऊँचा नहीं होता। पौदे स्थायी स्थान में एक-एक फुट के फ़ासले पर लगाए जाने चाहिए। इसकी बहार पाँच-छ महीने तक रहती है।

फ़्लॉक्स (Phlox)

यह पौदा बहुत ही मनोहर होता है। इसके पेड़ ज़मीन पर फैलते हैं। बीज सितंबर से नवंबर तक बोया जा सकता है। फूलों की बहार जनवरी से मार्च तक रहती है। सभी तरह क ज़मीनों में फ़्लॉक्स बोया जा सकता है, बशर्ते कि उसमें काफ़ी खाद डाली गई हो। बीज स्थायी स्थान पर बोया जाना और दो पौदों के बीच चार इंच का फ़ासला रक्खा जाना चाहिए। क्यारियाँ छायावाली जगह में हों, तो अच्छा, मगर हों खुली ही जगह में।

पोर्टुलाका (Portulaca)

इसकी बहार गरमी के मौसम में रहती है। फूल दोपहर में

खिलते हैं। ज्यों-ज्यों धूप कम होती है, त्यों-त्यों फूल मुँदने लगते हैं, और सूर्य के अस्त होते ही बिलकुल मुँद जाते हैं; पौदों को गमलों में बोकर बरामदे में या किसी पेड़ पर टाँग देते हैं। इसका बीज मार्च-एप्रिल में बोया जाता है। बीज बहुत छोटे होते हैं। इसलिये महीन बालू में मिलाकर ही क्यारी में, उन्हें छिटकाना चाहिए। पोर्टुलाका को धूपवाली जगह में बोना चाहिए। बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी होती है। फूलों की बहार क़रीब तीन महीने तक रहती है।

सालविया (Salvia)

सालविया का बीज जुलाई से ऑक्टोबर तक बोया जाता है। बीज जन्मस्थली में ही बोए जाते हैं। तीन-चार इंच ऊँचे बढ़ जाने पर पौदे स्थायी स्थान में लगाए जाने चाहिए। इसका फूलों से भरा हुआ तख़्ता बहुत सुंदर दिखाई देता है।

सूरजमुखी (Sunflower)

इसकी कई जातियाँ और उपजातियाँ हैं। इसको ज़ोरदार और उत्तम ज़मीन में बोना चाहिए। बीज जन्मस्थली में बोया जाता है, और तीन-चार इंच ऊँचे होने पर पौदे स्थायी स्थान में लगाए जाते हैं। यदि हवा रूखी हो, तो इसको ज़्यादा पानी की ज़रूरत होती है।

सूरजमुखी की कई जातियाँ हैं, जिनमें लांगलेजैम, रेडसन-फ़्लावर, और मिनिएचर श्रेष्ठ हैं। इसके पेड़ चार-पाँच फ़ीट

ऊँचे बढ़ते हैं। 'सनफ़्लावर जॉइंट'-नामक जाति के पौदे १० फ़ीट तक ऊँचे बढ़ते हैं।

सूरजमुखी का बीज जून-जुलाई या सितंबर-ऑक्टोबर में बोया जाता है। दो पौदों के बीच दो फ़ीट का फ़ासला रक्खा जाना चाहिए।

स्वीट-पी (Sweet-pea)

यह बटले की जाति का मौसमी पौदा है। इसकी बेल चलती है। बीज स्थायी स्थान पर ही बोया जाना चाहिए। इस बेल के छोटे पौदे नहीं लगाए जा सकते। क़रीब पाँच-छः इंच ऊँची बढ़ जाने पर बेलों को सहारा दे देना चाहिए।

इसके फूलों पर भिन्न-भिन्न रंग की झाईं होती है। फूल में ख़ुशबू भी आती है। फूलों की बहार चार-पाँच महीने तक रहती है। ज़्यादा खादवाली ज़मीन में बीज सितंबर-ऑक्टोबर के बीच बोया जाता है। दो पौदों के बीच एक फ़ुट का फ़ासला रक्खा जाता है।

टॉरेनिया (Torenia)

टॉरेनिया का बीज बरसात में, हल्की ज़मीन में, बोया जाता है। पौदे छः से नौ इंच तक के फ़ासले से बोए जाते हैं। इसके फूलों की बहार दो महीने तक रहती है।

वर्बिना (Verbena)

इसके बीज सितंबर-ऑक्टोबर में, जन्मस्थली में, बोए जाते

हैं। तीन-चार इंच ऊँचे छोटे पौदे एक-एक फुट के फ़ासले से क्यारियों में बोए जाते हैं। वर्बिना के पौदे गमलों में भी लगाए जा सकते हैं। फूलों की बहार तीन-चार महीने तक रहती है। बलुआ दुमट ज़मीन इसके लिये अच्छी समझी जाती है। वर्बिना को ज्यादा खाद दरकार होती है।

ज़ीनिया (Zinia)

ज़ीनिया की कई उत्तम जातियाँ हैं। यह बरसात में होता है। खूब खादवाली हल्की ज़मीन इसके लिये अच्छी होती है। बीज जन्मस्थली या स्थायी स्थान में बोए जा सकते हैं। पौदे नौ इंच के फ़ासले पर लगाए जाने चाहिए। बीज जून में बोया जाता है। फूलों की बहार दो-तीन महीने तक रहती है। इसके फूल जुदे-जुदे रंगों के होते हैं।

स्ट्रपटोकार्पस (Streptocarpus)

इसे केप-प्रिम-रोज़ भी कहते हैं। यह पौदा दक्षिण आफ्रिका या मेडागास्कर से लाया गया है। इसके पत्ते ज़मीन पर ही फैलते और दो-तीन फ़ीट लंबे बढ़ जाते हैं। पौदा छाँहदार जगह में बोया जाना चाहिए। समुद्र की सतह से एक हज़ार फ़ीट से लेकर छ फ़ीट तक की ऊँचाईवाले प्रांतों में यह खूब बढ़ता है।

इसकी कई जातियाँ हैं। रेक्ज़ाय नाम की जाति सर्वोत्तम है। इसको हर साल बोने की ज़रूरत नहीं होती। एक बार बो

देने से बरसों रहता है, और हर साल फ़सल पर फूल देता है। इसके फूल आसमानी रंग के होते हैं।

स्ट्रेप्टोकार्पस

ज़्यादा खादवाली हल्की ज़मीन में सितंबर-ऑक्टोबर में, बीज बोया जाता है।

एकूमिनी (Achimipes)

इसकी मोटी जड़ें ही बोई जाती हैं। मई में अंकुरित होने लगती हैं। अंकुरित होने का चिह्न नज़र आते ही मिट्टी गीली
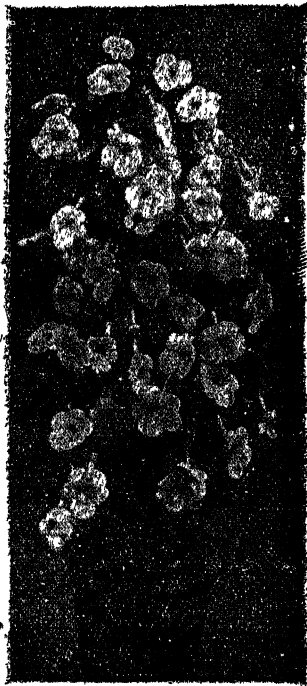
एकूमिनी की एक जाति

सानकर गमलों में लगा देनी चाहिए। इसको ज्यादा सिंचाई की ज़रूरत होती है। क़रीब छ इंच ऊँचा हो जाने पर पौदे को हर अठवाड़े खाद का घोल दिया जाना चाहिए। फूलों की

बहार ख़तम होते ही पानी देना कम कर दिया जाय, और घास डालकर गमले छाया में रख दिए जायँ। जड़ें काटकर मई में बोई जाती हैं। पूरी बाढ़ पर पहुँच गए पत्ते सितंबर-ऑक्टोबर के बीच बो दिए जाते हैं।

ठीक तौर से हिफ़ाज़त अगर की जाय, तो बीज से भी पौदे तैयार किए जा सकते हैं। बीज पत्तों की खाद में बक्स में बोए जायँ।

डेहलिया (Dahlia)

इसकी दो जातियाँ हैं। एक जाति के पौदे कम वर्षावाले प्रांतों में बोए जाते हैं, और दूसरी जाति के ज्यादा वर्षावाले प्रांतों में। पर फिर भी दोनो ही जातियों के लिये उत्तम ज़मीन का होना अनिवार्य है। इसको मछली या गोबर की खाद दी जानी चाहिए।

बड़े फूलोंवाली उत्तम जाति के पौदे की जड़ें मई में चीरकर बोई जाती हैं। यह काम ख़ूब सावधानी से करना चाहिए। जड़ का वही भाग बोया जाय, जिसकी आँख ताज़ी और नीरोग हो। जड़ के साथ मोटी जड़ का कुछ भाग अवश्य रहने देना चाहिए। उसको गमलों में बोकर पानी देना चाहिए।

छोटे और इकहरी पंखड़ी के फूलवाली जाति के बीज मई से जुलाई तक बोए जाते हैं। अच्छा बीज शीघ्र ही उग आवेगा। पौदे दो इंच ऊँचे हो जाने पर क्यारियों में, पाँच-पाँच इंच के फ़ासले से, लगाए जाते हैं। क्यारी छाँहदार स्थान में हो,

तो और अच्छा। ५-६ इंच ऊँचे होने पर पौदे स्थायी स्थान में लगाए जाते और उन्हें थूनियों का सहारा दे दिया जाता है। पौदे अगर पंद्रह-पंद्रह दिन के अंतर से लगाए जायँ, तो दिसंबर तक उनकी बहार रहेगी।

एकज़ोरा

इसकी कई जातियाँ होती हैं। भिन्न-भिन्न जाति के फूलों का रंग और आकार जुदा-जुदा होता है। कुछ छाँहदार जगह में बोया जाय और पानी बराबर दिया जाता रहे, तो यह भारत के अधिकांश प्रांतों में बोया जा सकता है। इसको बरसात में बोते हैं। फूलों की बहार दिसंबर से फ़रवरी तक रहती है।

पपी

इसे गार्डन पपी अर्थात् 'बाग़ का पोस्ता' कहते हैं। यह पोस्ते हीकी एक जाति है। इसके पत्ते भी ठीक वैसे ही होते हैं। इसे हर साल बोना पड़ता है।

ज़मीन—बलुआ और भुरभुरी ज़मीन में यह अच्छा होता है। पत्ते या गोबर की खाद दी जाती है। बाग़ों में यह अपूर्व छटा दिखाता है।

जाति—इसकी कई जातियाँ हैं। स्थानाभाव के कारण उन पर यहाँ कुछ नहीं लिखा गया।

खेती—ऑक्टोबर-नवंबर में बीज स्थायी स्थान पर बोए जाते हैं। बीजों के उग आने पर दो पेड़ों के बीच १०-१२ इंच का फ़ासला रक्खा जाता है। फूलवाली जाति में १८ इंच

तक का अंतर रखते हैं। निराई, गुड़ाई पर ज्यादा ध्यान दिया जाना ज़रूरी है। काफ़ी पानी देते रहना चाहिए।

फूलों की बहार ख़तम हो जाने पर बीज के लिये कुछ पौदे रखकर बाक़ी उखाड़कर फेंक दिए जाते हैं। तब उसी ज़मीन में दूसरे मौसमी फूलों के पेड़ लगाए जाते हैं।

इति

परिशिष्ट

पौदों के बीच अंतर	प्रति एकड़ में कितने पेड़ चाहिए	अंतर	पौदों की संख्या
१. फ़ुट	४३. ५६०	१२ फ़ुट	३०२
१॥ ,,	१६, ३६०	१२॥ ,,	२७०
२ ,,	१०, ८६०	१३ ,,	२५७
२॥ ,,	६, ६७०	१३॥ ,,	२३६
३ ,,	४, ८४०	१४ ,,	२२२
३॥ ,,	३, ५५६	१४॥ ,,	२०७
४ ,,	२, ७२२	१५ ,,	१६३
४॥ ,,	२, १५१	१५॥ ,,	१८१
५ ,,	१, ७४२	१६ ,,	१७०
५॥ ,,	१, ४४०	१६॥ ,,	१६४
६ ,,	१, २१०	१७ ,,	१५०
६॥ ,,	१, ०३१	१७॥ ,,	१४२
७ ,,	८८६	१८ ,,	१३४
७॥ ,,	७७४	१८॥ ,,	१२७
८ ,,	६८०	१६ ,,	१२०
८॥ ,,	६०३	१६॥ ,,	११४
६ ,,	५३७	२० ,,	१०८
६॥ ,,	४८२	२२ ,,	६०
१० ,,	४३५	२४ ,,	७५
१०॥ ,,	३६५	२६ ,,	६४
११ ,,	३६०	२८ ,,	५५
११॥ ,,	३२६	३० ,,	४८
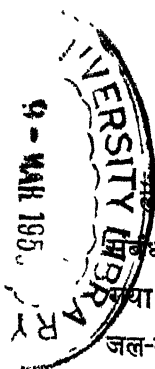
कृषि-संबंधी सर्वोत्तम पुस्तकें

खेती-बारी

लेखक, श्रीपं० भगीरथप्रसाद दीक्षित। इस पुस्तक में कृषि-संबंधी कोई भी ऐसा विषय नहीं, जिस पर प्रकाश न डाला गया हो। ज़मीन, जुताई, खाद, बीज, फ़सल की बीमारियाँ, जल-वायु, सिंचाई, फ़सलें, खेती के औज़ार, पशु-पालन आदि समस्त विषयों का इसमें सन्निवेश है। मूल्य ३॥)

अधिक भोजन उपजाओ

लेखक, पंडित शीतलाप्रसाद तिवारी विशारद। इस पुस्तक में लेखक ने अधिक अन्न उपजाओ की समस्या पर पूर्ण रूप से प्रकाश डाला है। पुस्तक किसानों के बड़े काम की है। फल, तरकारी आदि कैसे अधिक तादाद में पैदा हो सकती है, इसका इसमें विशद वर्णन है। मूल्य २॥)

तरु-जीवन

लेखक, श्रीयुत गंगाशंकर पंचौली। इस पुस्तक में तरह-तरह के पेड़ों का वर्णन है। बीज के अंग, बीज का अंकुरित होना आदि चीज़ों का सविस्तर वर्णन है। यह पुस्तक सभी के काम की है। मूल्य १)

मिलने का पता—

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय, लखनऊ